मंझन

कृत

मधुमालती

[संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण]

•

सम्पादक

डॉ० शिवगोपाल मिश्र

एम. एम-सी., डी फिल्., साहित्यरत्न

प्राध्यापक : प्रयाग विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

हिन्दी प्रचारक प्रतिष्ठान

सी० के० ३८/८ आदिविश्वनाथ : वाराणसी-१

मूल्य २०.००

समर्पण

जिन के चरणों के समीप बैठ कर हिन्दी सीखने का

अवसर मिला, उन्हीं स्वर्गीय महाकवि

सूर्य्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' जी

को

सादर

—शि. गो. मिश्र

*

दो शब्द

"मंझनकृत मधुमालती" का यह द्वितीय संस्करण पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है। प्रथम संस्करण के समय परिस्थितियाँ ऐसी थीं कि मूल पाठ में पाठान्तर समाविष्ट नहीं हो पाया था। इस बार मधुमालती के पाठ को चार प्रतियों के आधार पर निर्धारित किया गया है। ऐसा करने से ऐसी अनेक अशुद्धियाँ या त्रुटियाँ जो प्रथम संस्करण में सहज ही इंगित की जा सकती थीं, वे अब स्वतः दूर हो गईं और मधुमालती का पाठ प्रमाणिकतर बन सका है।

इस बार प्रथम संस्करण के साथ छपी 'भूमिका' को बदल करके कुछ नवीन सामग्री भी जोड़ दी गई है। यथा, मधुमालती का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन तथा शब्द मीमांसा, ये अनुच्छेद सर्वथा नवीन हैं।

परिशिष्ट में भी आमूल परिवर्तन कर दिया गया है। इसके पहले संस्करण में परिशिष्ट में प्रस्तावित पाठ, शब्दों एवं क्रियाओं पर विचार सम्मिलित थे किन्तु इस संस्करण में उन सबको निकाल कर "शब्दकोष" की योजना की गई है। इस कोष से मधुमालती में आये कठिन शब्दों के अर्थों को समझने में सरलता होगी, ऐसा विश्वास है।

यद्यपि भूमिका में सम्मिलित किया गया भाषा वैज्ञानिक अध्ययन संक्षिप्त रूप में ही है फिर भी इससे विद्यार्थियों को अवधी भाषा के स्वरूप के समझने और उसके मूल्यांकन करने में सहायता मिलेगी।

२५, अशोक नगर, इलाहाबाद
१५ अक्तूबर १९६३
(महाकवि निराला की द्वितीय वर्षी)

शिवगोपाल मिश्र

प्रमुख हिन्दी प्रेमाख्यान के काव्य
(सूची)

	कृति	कृतिकार	कृतिकाल
१.	चन्दायन	मुल्लादाऊद	सन् १३७० ई० (७७२ हि०)
२.	सत्यवती	ईश्वरदास	सन् १५०१ ई० (सं० १५५८ वि०)
३.	मृगावती	कुतुबन	सन् १५०१ ई० (६०६ हि०)
४.	पद्मावती	जायसी	सन् १५४० ई० (६४७ हि०)
५.	मधुमालती	मंझन	सन् १५४५ ई० (६५२ हि०)
६.	रूपमंजरी	नन्ददास	सन् १५५० ई० के लगभग
७.	माधवानल कामकंदला	आलम	सन् १५८१ ई० (६६२ हि०)
८.	चित्रावली	उसमान	सन् १६१३ ई०
९.	रसरतन	पुहकर	सन् १६१६
१०.	ज्ञानदीप	शेख नबी	सन् १६१६ ई०
११.	कनकावती	जान	सन १६१८ ई०
१२.	पुहुप बरिखा	"	सन् १६२१ ई०
१३.	कामलता	"	सन् १६२२ ई०
१४.	रतनावली एवं बुद्धिसागर	"	सन् १६३४ ई०
१५.	छीता	"	सन् १६३६ ई०
१६.	रूपमंजरी	"	सन् १६३७ ई०
१७.	कमलावती	"	सन् १६३६ ई०
१८.	कलंदर	"	सन् १६४५ ई०
१९.	नलदमयंती	"	सन् १६५६ ई०
२०.	नलदमन	सूरदास लखनवी	सन् १६५७ ई०
२१.	मृगावती की कथा	मेघराज प्रधान	सन् १६६६ ई०
२२.	पुहुपावती	दुखहरनदास	सन् १६६६ ई०
२३.	हंसजवाहिर	कासिमशाह	सन् १७२१ ई०
२४.	इन्द्रावती	नूरमुहम्मद	सन् १७४४ ई०
२५.	विरहवारीश	बोधा	सन् १७५२-१७५८ ई०
२६.	प्रेमरतन	फाजिलशाह	सन् १८४८ ई०

—:o:—

अनुक्रमणिका

★

भूमिका

मंझन कृत 'मधुमालती' का प्रथम परिचय स्व० श्रीजगन्मोहन वर्मा ने सन् १९१२ में प्रस्तुत किया था। इसके पूर्व हिन्दी-जगत को मधुमालती की किसी भी हस्तलिखित प्रति का पता नहीं था किन्तु अब तो कई प्रतियों की सूचना मिल चुकी है।

(क) मधुमालती की प्रतियाँ

अब तक मधुमालती की चार प्रतियाँ उपलब्ध हो चुकी हैं—

(१) 'भारत-कला-भवन' की फारसी लिपि में लिखित प्रति। इसे हम भा० प्रति के नाम से पुकारेंगे।

(२) 'भारत-कला-भवन' की नागरी लिपि में लिखित प्रति। यह माधोदासु कोहिली द्वारा लिखी गई थी। इसे हम मा० प्रति के नाम से अभिहित करेंगे।

(३) रामपुर लाइब्रेरी की प्रति। इसे हम रा० प्रति कह कर पुकारेंगे।

(४) एकडला से प्राप्त प्रति। इसे हम एक० प्रति के नाम से पुकारेंगे।

भारत-कला-भवन की फारसी लिपि में लिखित भा० प्रति

यह खंण्डित प्रति है जो आचार्य चन्द्रबली पाण्डेय को[१] संबत् १९९५ में बनारस की गुदड़ी बाजार से प्राप्त हुई थी। इसमें १७-१३३ पत्र तक वर्तमान हैं और यह फारसी लिपि में है। इस प्रति के आदि के ३९ पत्रों में बाएँ पृष्ठ पर याददाश्त के रूप में दो-दो पंक्तियाँ और लिखी हुई हैं। इसके अन्त में ११ रबि उस्सानी सन् १०६६ हिजरी (सन् १६५८) अंकित है।

हिन्दी प्रेमगाथा काव्य संग्रह[२] में भी इस प्रति का उल्लेख मिलता है।

---

१. मंझन कृत मधुमालती—चंद्रबली पाण्डेय। नागरी प्रचारिणी पत्रिका, संवत् १९९३, संख्या ४३, पृष्ठ २५५।

२. हिन्दी प्रेमगाथा काव्य संग्रह—संपादक गणेश प्रसाद द्विवेदी। सं० १९५३, पृष्ठ १०८-१०९।

हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य[३] में यह प्रति नागरी प्रचारिणी सभा मे सुरक्षित बताई गई है किन्तु अब यह 'भारत-कला-भवन' बनारस में उपलब्ध है।

इस प्रति का प्रारम्भ "तेहि पर कच विषधर विषधारी......" नामक अर्द्धाली से हुआ है। यह प्रति अत्यन्त सतर्कतापूर्वक लिखी हुई है।

भारत-कला-भवन की नागरी लिपि मे लिखित प्रति, भा० प्रति

इस प्रति का प्रथम उल्लेख आचार्य चन्द्रबली पाण्डेय ने अपने लेख में किया था। डा० कमल कुलश्रेष्ठ ने इसे नागरी प्रचारिणी सभा में सुरक्षित बताया है। यह प्रति अपूर्ण है। यद्यपि इसमें ५३५ संख्या तक की अर्द्धालियाँ अंकित हैं किन्तु प्रारंभ के तथा बीच के कुछ पत्र गायब हैं जिससे २८३वीं अर्द्धाली से प्रारंभ होकर ३३८ तक की अर्द्धालियाँ एक क्रम से वर्तमान हैं किन्तु इसके बाद फिर ४१८ तक की अर्द्धालियाँ नहीं मिलतीं। इसके आगे यह प्रति पूर्ण है। इस प्रति का प्रतिलिपि काल सं० १६४४ है, जैसा कि इसकी पुष्पिका से प्रकट होता है :—

इतिस्री मधुमालती कथा सेष मंझन कृत समाप्त सं० १६४४ अगहन सुदी १५ बृहस्पति लिखितं माधोदासु कोहिली कासी मध्ये पोथी माधोदास कोहिली की।

भारत कला भवन के अध्यक्ष श्री रायकृष्णदास जी ने इस प्रति की एक अन्य प्रतिलिपि अगहन सुदी ११ शुक्रवार संबत् १९९९ में बटुकप्रसाद कायस्थ द्वारा कराई है। इसमें ७६ पत्र हैं।

रामपुर लाइब्रेरी की प्रति, रा० प्रति

यह प्रति फारसी लिपि में है। इसमें २४९ पत्र हैं। इसके प्रत्येक पृष्ठ पर १५ पंक्तियाँ हैं।[४] इसका प्रथम पत्र गायब है अतः यह प्रति भी खण्डित है। इसकी पुष्पिका निम्न प्रकार है:—

नुस्खः मधुमालत तस्नीफ मलिक मंझन .बतारीख शशम शहसफर बवक्त शामरोज सेह शंबः दर मुल्फरुक खिलाफत अकबराबाद • दर हवेली अलीशेर मरहूम हमराह नवाब हुसैन अली खाँ दर अह्द बादशाह मुहम्मद गाजी...... बखत फकीर आसी खादिमुल् मुल्क फकीर उल् अल्लाह ब अजुल् हरूफ

---

३. डा० कमल कुलश्रेष्ठ कृत (१९५३) पृ० ३३-३८।

४. हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य—डा० कमल कुलश्रेष्ठ, पृ० ६३-६७, सन् १९५३।

नविश्तः मियाँ अब्दुल रहमान सल्लिमहू...मुतवत्तिन कस्बः बदोसराय तमाम शुद ११३२ हिजरी।

इसी के आधार पर इस प्रति का प्रतिलिपि काल मुहम्मदशाह का शासन-काल विदित होता है। सत्यजीवन वर्मा ने[५] इस प्रति के आधार पर एक लेख भी प्रकाशित किया था।

इस प्रति की एक माइक्रोफिल्म कापी नई दिल्ली के नेशनल आर्काईव्स में सुरक्षित है। इसकी एक प्रतिलिपि, नागरी अक्षरों में, भारत कला भवन, काशी में भी सुरक्षित है। इसे सथवा निवासी बटुकप्रसाद ने अषाढ़ शुक्ल १० भौमवार सम्वत् २००३ में नागरी लिपि में उतारा। इसमें एक ओर लिखे हुए २३७ पत्र हैं जिनमें कुल ५३६ अर्द्धालियाँ हैं। इस प्रनि में स्थान स्थान पर अनेकानेक शब्द छूटे हुए हैं और कहीं कहीं पर तो पंक्तियाँ की पंक्तियाँ छूटी हुई हैं।

पं० परशुराम चतुर्वेदी ने[६] मधुमालती की जिन तीन प्रतियों का श्री गोपालचन्द्र जी के पास होने का उल्लेख किया है वे वास्तव में भारत कला भवन की ही प्रतियाँ हैं 'क्योंकि भारत कला भवन के अध्यक्ष श्री राय-कृष्णदास जी ने मुझे यह सूचना दी है।

एकडला से प्राप्त प्रति, एक० प्रति

४ जुलाई सन् १९५५ को मुझे जनपद फतेहपुर के ग्राम एकडला के निवासी रावत ओउम प्रकाश सिंह के यहाँ से मधुमालती की सम्पूर्ण प्रति कैथी लिपि में लिखी हुई प्राप्त हुई। इसका प्रतिलिपि-काल सम्बत् १७४४ है और इसमें ६"×४½" आकार के २७५ पत्र हैं। इसके प्रत्येक पृष्ठ पर एक एक अर्द्धाली है। ये अर्द्धालियाँ १२ पंक्तियों में पूर्ण हुई हैं। दोहे क दो पंक्तियाँ लाल स्याही से लिखी हुई हैं। इसके अन्तिम पृष्ठ पर निम्न पुष्पिका है :—

इति श्री मधुमालती पोथी समाप्त है जो सम्वत् १७४४ समै नाम जेठ सुदी दुजी को तैआर भई बार बुधवार को। पंडित जन सौं बिनती मोरी, टूटा अच्छर मेरवहि जोरी। गुफतार मिश्रां मंझन कितः राममूलक सहाय लिखितं गहि राम॥

---

५. नागरी प्रचारिणी पत्रिका, सम्वत् २००२, भाग ६, पृष्ठ २८७।

६. सूफी काव्य संग्रह—पं० परशुराम चतुर्वेदी, पृ० ३२४।

यह सम्पूर्ण है। इसमें रा० प्रति की अपेक्षा प्रारम्भ में एक अर्द्धाली अधिक है, जो अन्य किसी भी प्रति में उपलब्ध नहीं है।

इस प्रति के आधार पर मैंने[७] 'मंझनकृत मधुमालती' का सम्पादन सन् (१९५७ में किया था। यद्यपि इस प्रति में अर्द्धालियों की संख्या नहीं दी गई किन्तु इनकी संख्या ५४८ है। इस प्रति के आदि-अन्त की अर्द्धालियाँ निम्न प्रकार हैं :—

श्री गणेशायनमः मधुमालती कथा

प्रेम प्रीति सुखनिधि के दाता। दुइ जुग एकं करी विधाता ।
बुधि प्रगास नाहीं तुअ ताईं। तुअ अस्तुति जो करौं गोसाईं ।
तीनि भुवन चहुँ जुग तैं दाता। आदि अंत तोहिं पै छाजा।
पंडित मुनिजन ब्रह्म बिचारी। तुअ अस्तुति जग काहु न सारी।
एक जीभ मैं कैसे सारों। सहस जीभ चहुँ जुग न पारौ।
तीनि भुअन घट घटन, अनौन रूप बेलास।
एक जीभ कहु ताहि के, कैसे अस्तुति करै इबास ॥

अंतिम पृष्ठ की अर्द्धाली—

उतपति जग जेतो चलि आई। पुर्ख मारि व्रज सती कराई ।
मैं छोहन्ह येहि मारि न पारेउ। सहीं मरिहि जे कलि औतारेउ।
सब सुनौ संसार सुभाऊ। जो मरि जिये सो मरै न काऊ।
सकति काल तेहि निअर न आऊ। जो जग पेम सजीवनप ाऊ।
पेम अमिअ जे पाइअ बासा। सेस काल तेहि आव न सीसा।
जेहि भौ पेम अमी सौं, परिचै करै क पार।
औधि सहस दस कली सो, त्रिअहिं पेम अधार ॥

यह अन्तिम अर्द्धाली मा० प्रति में भी प्राप्य है किन्तु यह भा० तथा रा० में नहीं पाई जाती है।

एक० प्रति की एक और विशेषता है कथा का खण्डों में विभाजित होना सम्पूर्ण कथा ३८ खण्डों में विभाजित है। प्रारम्भ के कुछ पत्र जिनमें ईश्वर-वन्दना है वे इन खण्डों में सम्मिमलित नही हैं। ये खण्ड भिन्न भिन्न विस्तार के हैं।

---

७. मंझनकृत मधुमालती—डा० शिवगोपाल मिश्र। हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय वाराणसी, १९५७ ।

(ख) मधुमालती का उल्लेख

जायसी, बनारसीदास जैन, दुखहरनदास तथा कवि उान समने अपनी अपनी रचनाओं में 'मधुमालती' का उल्लेख किया है।

जायसी ने "पद्मावत"[८] में लिखा है :—

साधा कुँवर मनोहर जोगू। मधुमालति कहँ कीन्ह बियोगू॥

बनारसीदास जैन ने अपनी आत्मःकथा "अर्द्धकथानक"[९] में लिखा है:—

तब घर में वैठे रहैं, जाहिं न हाट बजार।
मधुमालति मिरगावति, पोथी दोइ उदार॥
ते बाँचहि रजनी समै, आवहिं नर दस बीस।
गावैं अरु बातैं करहिं, नित उठि देहिं असीस॥

दुखहरनदास ने "पुहुपावती"[१०] में लिखा है:—

जो नहाइ आवहिं यहि ठाईं। होइ बात मधुमालति नाईं।

कविवर उसमान ने "चित्रावली" (रचना काल हि० १०२२ या सन् १६१५) में मधुमालती का उल्लेख निम्न प्रकार से किया है:—

मृगावती मुख रूप बसेरा। राजकुँअर भयो प्रेम अहेरा।
सिंघल पद्मावती भो रूपा। प्रेम कियो है चितउर भूपा।
मधुमालति होइ रूप दिखावा। प्रेम मनोहर होइ तहँ आवा।

उपर्युक्त उद्धरणों में से जायसी का संकेत कभी भी मंझन कृत मधुमालती की ओर नहीं हो सकता क्योंकि 'मधुमालती' जायसीकृत "पद्मावत से पाँच वर्ष बाद की रचना है। बनारसीदास जैन ने मिरगावती के पूर्व मधुमालती का उल्लेख किया है अतः यह मधुमालती भी मंझनकृत नहीं हो सकती क्योंकि मृगावती भी इसके पहिले की रचना है। शेष दो उल्लेख मंझन कृत मधुमालती के लिए सत्य हो सकते हैं।

इस प्रकार से यह स्पष्ट है कि मंझन के पूर्व मधुमालती नाम की रचनायें प्राप्त थीं।

---

८. जायसी ग्रंथावली—डा० माताप्रसाद गुप्त द्वारा सम्पादित, पृ० २७६।

९. अर्द्धकथा, दोहा ३३५-३६।

१० हिन्दी प्रेम गाथा काव्य संग्रह—संपादक गणेश प्रसाद द्विवेदी सन् १५३, पृ० १०६।

(ग) 'मधुमालती' की परम्परा : अन्य रचनायें

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, मंझन कृत 'मधुमालती' के अलावा इसी नाम की अन्य रचनाएँ भी पाई जाती हैं। इनमें से कुछ रचनाएँ मंझन के पूर्व की हैं और कुछ उनके अनुसरण पर लिखी गई हैं। ये रचनायें न केवल हिन्दी में ही प्राप्त हैं वरन् बंगला और गुजराती में भी पाई जाती हैं संस्कृत साहित्य में भवभूति कविकृत 'मालती माधव' नामक रचना पाई जाती है किन्तु इस कथा से मंझन या अन्य कवियों की रचनाओं में नायक 'मधु' और नायिका 'मालती' के नामों के अतिरिक्त किसी प्रकार का भी साम्य नहीं पाया जाता।

मधुमालती नामक अन्य रचनाएँ निम्न हैं:—

१. चतुर्भुज दास कृत मधुमालती।
२. जानकवि कृत मधुकर मालती।
३. बँगला साहित्य में उपलब्ध कथाएँ।
४. गुजराती साहित्य में उपलब्ध कथाएँ।

इनके अतिरिक्त नुसरती कृत "गुलशने इश्क" भी मधुमालती कथा पर आधृत है। इसका उल्लेख हिन्दी साहित्य के सबसे पुराने इतिहास लेखक गार्सां द तासी ने[११] इस प्रकार किया है:—

"मधुमालती के लेखक चतुर्भुजदास मिश्र हैं और इसके नायक-नायिका वे ही हैं जो दखिनी के प्रसिद्ध कवि नुसरती के गुलशन-ए-इश्क के हैं।"

उपर्युक्त रचनाओं में से चतुर्भुजदास कृत मधुमालती को छोड़ कर शेष सभी रचनायें मंझन कृत मधुमालती की परवर्ती रचनायें हैं।

चतुर्भुजदास का काल अभी भी निश्चित नहीं हो पाया, यद्यपि उनके द्वारा लिखित मधुमालती की सबसे प्राचीन प्रतिलिपि संबत् १७०७ की उपलब्ध हो चुकी है। नाहटा जी[१२] को चतुर्भुजदास कृत मधुमालती की जो ६ प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं उनमें से सबसे प्राचीन प्रति सं० १७८५ की है। मध्यो भारत, मालवा तथा राजस्थान में मधुमालती का अत्यधिक प्रचार था।

नुसरती ने "गुलशने इश्क" की रचना हिजरी १०८६ अर्थात् सम्बत् १७१४ में की। जान कवि ने 'मधुकरमालति' की रचना सं० १६९१ में की। बँगला-साहित्य में उपलब्ध मधुमालती की कथाओं के रचयिता अमीर हामजा

---

११. इस्त्वार द ला लितरात्यर एँदुई ए एँदुस्तानी—द्वितीय संस्करण, पृ० ३८८, तथा ४८५।

तथा मामूद हैं।[१३] अमीर हामजा ने सम्बत् १८०६ के बाद 'मधुमालती' की रचना की। मामूद ने २२ वर्ष की आयु में, सन् १७९१ में "मधुमालती मनोहर" नामक रचना की। इनके अतिरिक्त मुहम्मद कबीर ने भी किसी हिन्दी काव्य के आधार पर सन् १७५९ में मधुमालती की रचना की।[१४] इन बँगला रचनाओं की कथावस्तु के सम्बन्ध में कोई और विस्तृत जानकारी उपलब्ध नहीं है।

डा० माताप्रसाद गुप्त ने[१५] मधुमालती के दो गुजराती संस्करणों का भी उल्लेख किया है किन्तु वे अब सर्वथा अप्राप्य हैं।

(घ) मधुमालती का रचना काल

प्रारम्भ में "मधुमालती" की जो प्रतियाँ प्राप्त हुई, वे खण्डित थीं और उनमें रचनाकाल वाली अर्द्धाली नहीं थी। अतः अनेक लेखों में अनुमानों एवं वाह्य साक्ष्यों द्वारा 'मधुमालती' को जायसी के 'पद्मावत' के पहले या बाद की रचना माना गया है। उदाहरणार्थ, सत्यजीवन वर्मा[१६] ने मधुमालती का रचनाकाल संबत् १५६६ और १५६५ के बीच माना है। ब्रजरत्नदास[१७] ने इसका रचना काल सं० १६५० के आसपास माना है। आचार्य चन्द्रबली पाडेय ने[१८] अनेक अनुमानों के आधार पर 'मधुमालती' को 'पद्मावत' से पुरानी रचना स्वीकार किया।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने[१९] भी सन्देहात्मक स्वर से यह स्वीकार किया है कि 'मंझन की रचना का यद्यपि ठीक ठीक संबत् नहीं ज्ञात हो सका है पर

---

१२. हिन्दुस्तानी, जनवरी १६३६ : मधुमालती नामक दो रचनायें, पृ० ६५-६६।

१३-१४. इसलामि बँगला साहित्य, लेखक डा० सुकुमार सेन। वर्धमान साहित्य सभा द्वारा प्रकाशित (१३५६), पृ० ४१।

१५. नागरी प्रचारिणी पत्रिका, हीरक जयंती अंक, सं० २०१० : चतुर्भुज दास की मधुमालती, पृ० १८७-९२।

१६. नागरी प्रचारिणी पत्रिका : आख्यानक काव्य : संबत् १६८२, भाग ६ पृष्ठ २८७

१७. हिन्दुस्तानी, अप्रेल १९३८, पृ० २१२।

१८. नागरी प्रचारिणी पत्रिका, सम्बत् १६९३, संख्या ४३, पृ० २५५।

१९. हिन्दी साहित्य का इतिहास (सम्बत् २००७) पृ० ९५-९६।

यह निस्सन्देह है कि इसकी रचना विक्रम संवत् १५५० और १५९५ के बीच में और बहुत सम्भव है मृगावती के कुछ पीछे हुई। इस शैली में सबसे प्रसिद्ध और लोकप्रिय ग्रंथ 'पद्मावत' में जायसी ने अपने पूर्व के बने हुए इस प्रकार के काव्यों का संक्षेप में उल्लेख किया है.........जिस क्रम से ये नाम आये हैं वह यदि रचनाकाल के क्रम के अनुसार माना जाय तो मधुमालती की रचना कुतुबन की मृगावती के पीछे की ठहरती है।'

किन्तु अब रामपुर प्रति तथा एकडला प्रति के प्राप्त हो जाने के अनन्तर इस प्रकार के अनुमानों का अन्त हो गया है। दोनों ही प्रतियों में मधुमालती के रचनाकाल से संबन्धित एक अर्द्धाली पाई जाती है जिसमें हिजरी सन् ९५२ दिया हुआ है। यही नहीं, शाह सलीम के राज्यकाल का उल्लेख मिलता है जिससे हिजरी ९५२ की संगति बैठती है।

मधुमालती के रचनाकाल से सम्बन्धित अर्द्धाली निम्न प्रकार है:—

संबत नौ सै बावन जब भैऊ। सती पुरुख कलि परिहरि गैऊ।
तौ हम चित उपजी अभिलाखा। कथा एक बाँधउँ रस भाखा।
सुरस बचन जहाँ लगि सुने। कबि जो समाने ते सभ गुने।
जो सभ कहौं सुरस रस भाखी। सुनहु कान दै पैम अभिलाखी।
मैं छाँड़ा गुनकर परसादू। तुह छाँड़हु जो बाद बेवादू।
अंब्रित कथा सुरस रस, सुनहु कहौं जो गाइ।
वोछ परत जो अछर, कबि महँ लेब छपाय ॥३७॥

इसके अनुसार मधुमालती का रचनाकाल हिजरी सन् ९५२ अर्थात् ईस्वी सन् १५४५ या संवत् १६०२ है। जायसी कृत पद्मावत की रचना-तिथि हिजरी सन् ९४७ (अथवा ९२७ भी) है। अतः 'मधुमालती' निश्चित रूप से 'पद्मावत' के बाद की रचना है। यह कुतुबन कृत 'मृगावती' से भी बाद की रचना है क्योंकि मृगावती का रचनाकाल हिजरी ९०९ है।

मंझन ने मधुमालती में जिस शाहेवक्त की चर्चा की है उसके अनुसार भी सन् १५४५ की पुष्टि होती है।

साहि सलेम जगत गुरु भारी, जेइ भूँजा बर मेदनी सारी।

शेरशाह की मृत्यु के पश्चात् सन् १५४५ में ही सलीम शाह राजगद्दी पर बैठा था।

(ङ) मधुमालती का रचयिता—मंझन का परिचय

(१) नाम का निर्णय—मंझन का पूरा नाम क्या था, इसके सम्बन्ध में

काफी मतभेद है। मधुमालती की प्राप्त प्रतियों की पुष्पिकाओं में 'शेख मंझन' या 'गुफ्तार मियाँ मंझन' ये दो नाम आये हैं। सत्यजीवन वर्मा[२०] का कथन है कि मधुमालती में मंझन का नाम दो स्थानों पर आया है जिनमें से एक स्थान पर 'मलिक' के नाम के साथ प्रयुक्त है। वास्तव में मधुमालती में 'मंझन नाम कम से कम पाँच स्थानों पर आया है किन्तु कहीं भी उसकेसाथ मलिक जुड़ा हुआ नहीं मिलता। ऐसा प्रतीत होता है कि सत्यजीवन वर्मा के पढ़ने में कोई त्रुटि हुई होगी।

जो भी हो 'मंझन' कवि का उपनाम है, पूरा नाम नहीं। आचार्य शुक्ल जी ने[२१] एक अन्य मंझन की भी चर्चा की है जो कवित्त-सवैया बनाते थे किन्तु साथ-साथ उन्होंने ने यह भी इंगित किया है कि ये सूफी कवि मंझन से सर्वथा भिन्न हैं। सम्भवतः ये वही मंझन हैं जिनका उल्लेल ब्रजरत्नदास जी ने[२२] 'हिन्दुस्तानी' में प्रकाशित एक टिप्पणी में किया है :—

'कलकत्ता के विक्टोरिया मेमोरियल हाल में संख्या ७४५ पर खानखाना के पुत्र दाराब खाँ का एक चित्र है जिसमें हिन्दी में एक कबित्त है:—

दर्प दरबार आयो औचक ही हरबर
अंबर अनीक बर बरबर करकै।
तरपि तुरकमान साहसी दराबखान
कीनो कतलान घमसान उग्र करिकै।
'मंझन' सुकबि कहै चहै चाह पाई जहाँ
जीत को नगारयो बज्यो बीतत समर कै।
जौ लौं हिमांचल तौ लौं डमरू बजावै संभु
तौ लौं डाक चौकी डंकि मारयो हरहर कै।

चूंकि यह घटना सन् १६२० की है अतः मंझन संवत् १६६८ विक्रमी तक जीवित रहे होंगे।"

२ मंझन की जाति—मधुमालती के रचयिता 'मंझन' कवि की जाति के सम्बन्ध में भी काफी मतभेद रहा है। सत्यजीवन वर्मा ने 'मलिक मंझन' के नाम से

---

२०. नागरी प्रचारिणी पत्रिका, संवत् १६८२, भाग ६ पृ० २८७।

२१. हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ० ६५-६७।

२२. हिन्दुस्तानी, सन् १६३८, पृ० २११।

मंझन को मुसलमान माना किंतु ब्रजरत्नदास जी का अभिमत था कि चूंकि उन्होंने मधुमालती के प्रारंभ में मंगलाचरण गाया है अतः वे हिन्दू थे। वास्तव में ऐसी भ्रान्तियों का मुख्य कारण था प्रारम्भ में मधुमालती की खण्डित प्रतियों का ही प्राप्त होना। संपूर्ण प्रतियों के प्राप्त हो जाने के अनन्तर ऐसी धारणाएँ निर्मूल सिद्ध हो चुकी हैं कि मंझन हिन्दू थे। वास्तव में मंझन मुसलमान थे और थे सूफी। इसकी पुष्टि 'शेख' अथवा 'गुफ्तार' मंझन जैसे नामों से तो होती है, साथ ही ग्रंथ के प्रारम्भ में मुहम्मद साहब की वन्दना, फिर चार यारों एवं पीर तथा शाहेवक्त का वर्णन—ये सब यह सिद्ध करते हैं कि कुतुबन एवं जायसी की भाँति मंझन भी मुसलमान सूफी कवि थे।

(३) मंझन का निवासस्थान

परशुराम चतुर्वेदी ने[२३] सर्वप्रथम यह संकेत किया कि मधुमालती में आई हुई निम्न दो पंक्तियाँ सम्भवतः मंझन के निवासस्थान की ओर संकेत करती हैं:—

> **गढ़ अनूप बस नगर···ढी, कलजुग महँ लंका सो गाढ़ी।**
> **पुरब दिशा बाकी गहराई, उत्तर पश्चिम लंका गढ़ खाईं।**

जिस प्रति को उन्होंने आधार बनाया था, उसमें 'ढी' से अन्त होने वाले नगर का नाम खंडित था अतः उन्होंने उसे अनूपगढ़ माना है। सरला शुक्ल[२४] ने भी इसी मत की पुष्टि की है। लेखक ने[२५] चतुर्वेदी जी के मत का खण्डन करते हुए मंझन द्वारा वर्णित इस 'ढी' से अन्त होनेवाले नगर को सुरजभान की राजधानी माना था किन्तु साथ ही यह भी प्रस्तावित किया था कि यह नगर गंगा के तट पर बसा हुआ 'चुनारगढ़' है। 'मंझनकृत मधुमालती' के प्रकाशित हो जाने पर लेखक के इस मत का अनुमोदन करते हुए पं० हरिहर निवास द्विवेदी ने[२६] ग्वालियर को मंझन की जन्मभूमि सिद्ध किया। उन्होंने लिखा है:—

---

२३. सूफी काव्य संग्रह—परशुराम चतुर्वेदी, पृ० १२०।

२४. हिन्दी सूफी कवि और काव्य–डा० सरला शुक्ल, लखनऊ विश्व विद्यालय, संवत् २०१३, पृ० ३३५–३६।

२५. मंझन कृत मधुमालती–डा० शिवगोपाल मिश्र। हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय (सन् १९५७)। भूमिका, पृष्ठ १६–२०।

२६. भारती पत्रिका, ग्वालियर।

"गाजीपुर धाम के पीर निजामुद्दीन औलिया की शिष्य परम्परा में गौस मुहम्मद थे और उस स्थान से ग्वालियर पधारे थे। उनके शिष्य मंझन ने जब अपने इस प्रसिद्ध गुरु का नाम दे दिया और उसके चरणों में बैठ कर ज्ञान प्राप्त करने की बात लिख दी तब फिर उसे अनूपगढ़ का तथा उसकी चर्नांढी में में बसे नगर का नाम देना आवश्यक न था।

"ऊपर के विवेचन की पृष्ठ भूमि में यदि उस गढ़ अनूप का मंझन का वर्णन पढ़ा जाय तब यह संदेह नहीं रहता कि वह ग्वालियर गढ़ का वर्णन कर रहा है जहाँ वह अपने पीर शेख मुहम्मद के निर्देशन में आत्मशुद्धि और आत्मचिंतन कर रहा है। तात्पर्य यह कि ग्वालियर गढ़ की छाया में शेख गौस मुहम्मद के आश्रम में मलिक मंझन के हिजरी सन् ९५२ (सन् १५४५) में चित्त में यह अभिलाषा उपजा था कि—कथा एक बाँधऊँ रस भाखा।"

'चुनारगढ़' के पक्ष में लेखक ने जो सुझाव रखा था, उसकी पुष्टि करते हुए श्याममनोहर पाण्डेय[२७] ने उसे ही मंझन का निवास-स्थान सिद्ध किया है। चुनारगढ़ मुस्लिम युग में दुर्जेय गढ़ माना जाता था। इस गढ़ के उत्तर-पश्चिम गंगा नदी बहती है और पूर्व में जरगो या जरगी नदी है। मधुमालती में यह जरगो नदी 'जगरो' के रूप में प्राप्य है—इसी कारण चुनारगढ़ की स्थिति में पहले कुछ संदेह भी व्यक्त किया गया था। किन्तु अब यह निश्चित है कि 'गढ़ के बखान' के अन्तर्गत ३३वीं तथा ३४वीं अर्द्धालियाँ मंझन के नवास स्थान "चुनारगढ़" से सम्बन्धित हैं।

'चर्नांढी' से चुनारगढ़ की व्युत्पत्ति सहज सम्भाव्य है। फारसी ग्रंथों में 'चनादह' रूप प्रयुक्त मिलता है (हुमायूँनामा, आइने अकबरी तथा अकबर नामा आदि में)। सम्भवतः तुक मिलाने के उद्देश्य से मंझन ने 'चर्नांढ'को 'चर्नांढी' कर दिया हो।

मंझन के निवास स्थान चुनारगढ़ में उस समय भक्त एवं ज्ञानी लोग निवास करते थे। ऐसा प्रतीत होता था मानों साक्षात् कैलाश पृथ्वी पर उतर आया हो :—

बसरहिं भगती बीनानी। आनन्दित पर दुखी बिनानी।
दाता औ दयाल धरमिस्टा।..........................

---

२७. त्रिपथगा पत्रिका, श्रावण शक सम्वत् १८८१ (जुलाई १९५९) पृ० १११–११६ पर "मंझन का जीवन वृत्त" लेख।

खोरि खोरि औ घर घर, नगर अनंदु हुलास।
कलिजुग मौं जेंव प्रिथिमी, उतरि बसी कविलास ॥१४॥

(४) मंझन के गुरु

'मधुमालती' के प्रारम्भ में (१४, १५, १६, १७ तथा १९वीं अर्द्धालियाँ) मंझन ने अपने गुरु के सम्बन्ध में जो कुछ कहा है उससे ज्ञात होता है कि उनके गुरु का नाम 'शेख', 'शेख महंमद' अथवा 'गौस मुहम्मद' था। वे अत्यन्त ज्ञानी निर्मल, गरिष्ट, गम्भीर सत्पुरुष थे। उनके ही संसर्ग से मंझन को सिद्धि प्राप्त हुई थी।

सेख बड़े जग पीर अपारा। ग्यान गरुअ जे रूप अपारा।
सौंरि पाँव परसै जो आवै। ग्यान लाभ हो पाप गँवावै।

\+ + +

सेख महंमद पीर अपारा। सात समुंद नाव कंडहारा।

\+ + +

दाता गुन गाहक, गौस मुहंमद पीर।
दुहुँ कुल निरमल सापुरुष, गरुअ गरिष्ट गंभीर। १५॥

\+ + +

सेख महंमद पीर अपारा। साहस बाजु सिद्धि देनिहारा।

\+ + +

जैसे पाहन के परसत, ताम हेम होइ जाइ।
तिमि मैं सेख जो परसत, बिनु साहस सिधि पाइ ॥१६॥

× × +

इन्ह दूनौ सिर ठाकुर, गौस महंमद पीर।

\+ + +

जेहि सिर पूर्व कर्म के रेखा, ते जग सेख महंमद देखा।

मंझन ने अपने गुरु की तपस्या के सम्बन्ध में लिखा है कि उन्होंने 'धुंध केदरी' में बारह वर्ष तक, जामुन की पत्तियाँ खाकर कठिन तपस्या की :—

बारह बरिस धुन्ध केदरी, जहाँ सूर ससि दिस्टि न परी।
बिकट बिखम भयावन ठाऊँ, कलिजुग धंधलर जो नाऊँ।
चहुँ दिसि परबत बिखम अगंमा, तहाँ न कतहूँ मानुस गंमा।

तहाँ जाइ कै जपा बिधाता। कै अहार बन जामुनि पाता।
मन मतंग मारि बस किया। ग्यान महारस अंब्रित पिया।
साहस उठै अपान जो, लीन्ह सिद्धि औराधि।
बारह बरख रहे बन परबत, लाए ब्रह्म समाधि।।२२।।

मंझन के गुरु शेख मुहम्मद गौस शत्तारी सम्प्रदाय के सूफी संत थे। कहा जाता है कि इनकी ही आज्ञा से बाबर ने हुमायूँ को सिंहासनारूढ़ किया।

सेख इसारत कीनी ईस। मिरजा छत्र हिमाऊँ सीस।
सुनि कै बात धरी चित माँहि। अति सुख भयौ बाबा साहि।

चुनार की पहाड़ियों में बारह वर्ष तक घोर तपस्या करने का वर्णन अन्यत्र भी मिलता है[२९] :—

"शेख मुहम्मद गौस ग्वालियरी ने चुनार की पहाड़ियों के अंचल में १२ वर्ष तक घोर तपस्या की। वे गुफाओं में निवास करते थे और वृक्षों के पत्तों को खाकर रहते थे।"

अतः मंझन के गुरु सुप्रसिद्ध सूफी संत शेख मुहम्मद गौस ही थे जो अपने जीवन के अंतिम दिनों में ग्वालियर चले गये। इनका देहावसान हिजरी सन् ९७० में आगरे में हुआ।

(५) शाहे वक्त

मंझन ने मधुमालती में शाहेवक्त की भी चर्चा की है। उन्होंने साहि सलेम अर्थात् सलीम शाह की प्रशंसा करते हुए लिखा है कि उसका प्रभाव काबुल तथा रूम देश तक था। वह अत्यन्त, पराक्रमी दानी एवं न्यायी भी था। यह वर्णन १०, ११, १२ तथा १३वीं अर्द्धालियों में उपलब्ध है।

साहि सलेम जगत भुअ भारी। जेइ भूँजा बर मेदनी सारी।
× + ×
प्रिथिमी पति जग गाहक, दस औ चारि निदान।

---

२८. खड्गराय कृत गोपाचल आख्यान। देखिये "हिन्दुस्तानी" जुलाई सितम्बर १९५९, पृ० ९०–९१ में प्रकाशित डा० श्यामनोहर पाण्डेय का लेख—मंझन के गुरु "शेख मुहम्मद गौस"।

२९. इकायके हिन्दी : लेखक मीर अब्दुल वाहिद बिलग्रामी, भूमिका पृ० १८।

पर मुभ्र गंजन सपुरुस, गरू गरिस्ट सुजान ॥१०॥

\+ × +

गरुये तप गरुवे औतारा । काबिल हिन्दु भा एक बारा ।
उत्तर हेमगिरि जो परवाना । दक्खिन सेतबंध लगि आना ।

\+ + +

न्याय खरग जे अति उतंगा । भेडि हुँडार चरत एक संगा ।

\+ + ×

केहि मुख कहौं दान की बाता । रायेन्द्र पाट मटुक कर दाता ।

सलीम शाह शेरशाह का पुत्र था जो ९५२ हिजरी में शासक बना था। मंझन ने ठीक उसी वर्ष मधुमालती की रचना प्रारम्भ की, जैसा कि पहले कहा जा चुका है। मंझन ने सलीमशाह के न्याय, दान, पराक्रम आदि का जो वर्णन किया है वह अवश्य ही अत्युक्तिपूर्ण होगा क्योंकि उन दिनों राज्याश्रय प्राप्त करनेवाले सभी कवियों को अपने अपने राजाओं के यश का वर्णन बढ़ा चढ़ा कर करना पड़ता था।

(६) मंझन का काल

मधुमालती का रचना काल, गुरु शेख मुहम्मद गौस का उल्लेख एवं सलीमशाह की प्रशंसा—इन तीनों से मंझन के काल पर काफी प्रकाश पड़ता है। सन् १५४५ (अर्थात् ९५२ हिजरी) तक मंझन ने गुरु की प्राप्ति कर ली थी और भाषा पर अधिकार भी प्राप्त कर लिया था। यह भी स्पष्ट ही है कि अवधी क्षेत्र के अन्तर्गत चुनार गढ़ के वासी थे परन्तु उनके जन्म या उनकी मृत्यु के सम्बन्ध में अभी तक कोई जानकारी नहीं मिल पाई। व्रजरत्नदास जी का अभिमत है कि वे कम से कम सन् १६२० तक जीवित रहे, किन्तु यह युक्तियुक्त नहीं प्रतीत होता क्योंकि जिस 'कवित्त' को वे इसका आधार मानते हैं, वह इन मंझन का नहीं है। वे कोई दूसरे मंझन थे।

(७) मंझन का स्वभाव

'मधुमालती' में आये कतिपय प्रसंगों के अनुसार मंझन अत्यन्त विनीत स्ववं विनयशील कवि थे। संतों का स्वभाव ही ऐसा होता है। जायसी और तुलसीदासजी ने भी अपनी विनम्रता का वर्णन किया है।

मंझन को अपनी कवित्व-शक्ति पर विश्वास नहीं था। अतः वे विनती भाव से बारम्बार टूटे अक्षरों को अपनी ओर से मिला लेने की बिनती करते हैं। उनका विश्वास है कि जो विद्वान हैं वे मुझ पर नहीं हँसेंगे। सब यह

उनकी विनयशीलता का ही परिचायक है।

पंडित सुन एक विनती मोरी। विनवौं पाँव दुवौ कर जोरी।
जहाँ न आखर पुरै सँवारहु। भलआ भये मंद प्रति पारहु।

मूरख जौ रे उछेदहि, ताकर नाही सोच।
धन जग ताकर औतरब, अरथ लगावै पोच ॥

+ + +

जो पंडित जन होय बनाये। का मूरख के दोस लगाये।

(च) मधुमालती कथा

(१) रचना का मूलस्रोत—'मधुमालती' कथा का मूल स्रोत ढूँढ़ निकालना कठिन काम है। किन्तु स्वयं मंझन ने एक स्थान पर इस कथा की उत्पत्ति (मूलस्रोत) को द्वापर में बताया है।

आदि कथा द्वापर महँ भई। कलिजुग मो भाखा कै गाई (४१-१)

इससे स्पष्ट है कि मंझन को द्वापर की किसी पौराणिक कथा का ज्ञान था। यह कथा सम्भव है संस्कृत में रही हो क्योंकि कलियुग में 'भाखा' अर्थात् हिन्दी में अपने द्वारा लिखे जाने की बात भी उन्होंने कही है। इससे यह पुष्टि होती है कि उस समय तक 'भाखा' में 'मधुमालती' नामक कोई अन्य रचना नहीं लिखी गई थी। इस दृष्टि से सम्भवतः चतुर्भुजदास की मधुमालती भी मंझन की मधुमालती के बाद की रचना हो।

यहाँ पर यह कह देना असंगत न होगा कि 'मृगावती' तथा 'मधुमालती' नामक रचनाओं के नाम तो प्राचीन भारतीय साहित्य से ग्रहण हुए हैं किन्तु उनकी कथा वस्तुओं को किन्हीं लौकिक आख्यानों से ग्रहण करके ही ये रचनायें रची गई हैं।

(२) मधुमालती का उद्देश्य—मंझन ने 'मधुमालती' की रचना 'स्वान्तस्सुखाय' की। उन्होंने जो कुछ भी देखा सुना था और उन्हें जो भी प्रिय था, सब कुछ इसमें रख दिया।

सुरस बचन जहाँ लगि सुने। कबि जो समाने ते सब गुने।
जो सम कहौं सुरस रस भाखी। सुनहु कान दै पेम अभिलाखी।

× + +

तौ हम चित उपजी अभिलाखा। कथा एक बाँधउँ रस भाखा।

(३७.२)

इस रचना का उद्देश्य था 'प्रेमरस' या 'रसराज' का वर्णन करना और

मंझन उसमें सफल भी हुये।

रस अनेक संसार कर, सुनहु रसिक दै कान।
जो सब रस महँ राउ रस, ताकर करौं बखान ॥४०॥

(३) 'मधुमालती' कथा के विभिन्न रूप— अब संक्षेप में मधुमालती की विभिन्न कथाओं के सार प्रस्तुत किये जा रहे हैं :—

(अ) चतुर्भुजदास कृत मधुमालती की कथा

लीलावती नरेश चतुरसेन के एक पुत्री थी जिसका नाम मालती था। राजा के मंत्री तरुणशाह के एक पुत्र था जिसे लोग मनोहर अथवा मधु नाम से पुकारते थे। मालती तथा मधु दोनों ही एक पंडित से पढ़ते थे। मालती परदे के भीतर रहती थी और मनोहर बाहर। एक दिन पंडित के न रहने पर दोनों की आँखें चार हो गईं किन्तु मनोहर मंत्री का लड़का था, अतः मालती के साथ उसका प्रेम व्यवहार असम्भव था। इसीलिये उसने पढ़ाई छोड़ दी और मालती से दूर रामसरोवर में नित्य जाकर गुलेल खेलने लगा। किन्तु मालती वहाँ भी पहुँचने लगी। अन्त में उसकी सखी जैतमाल ने पूर्वजन्म की कथा कहकर दोनों को परस्पर मिलाया। उनके इस प्रणय व्यवहार की चर्चा वहाँ के एक माली ने जाकर राजा को बताई। इस पर राजा क्रुद्ध हुआ और दोनों को मरवा डालने का आदेश किया। किन्तु उसकी रानी ने मधु तथा मालती को यह गुप्त सन्देश भेजा कि वे उस स्थान को छोड़ कर कहीं विदेश चले जायँ। मालती तो ऐसा करने के लिये तैयार हो गई किन्तु मधु उद्यत नहीं हुआ। उसने राजा के द्वारा भेजी गई सेना को गुलेलों की मार से तहस नहस कर दिया। अन्त में राजा स्वयं लड़ने आया। मालती की प्रार्थना से प्रसन्न हो शिव तथा केशव भगवान ने भारंड पक्षी तथा सिंह भेजे जिनकी सहायता से मधु विजयी हुआ। राजा ने हार मानकर मधु, मालती तथा जैतमाल इन तीनों को नगर में बुलाया और उनका व्याह कर दिया।

(आ) जान कवि कृत मधुमालती-कथा

अयोध्या में एक सौदागर रहता था जिसका नाम रतन था। उसके एक पुत्र हुआ जिसका नाम उसने मधुकर रखा। बड़ा होने पर वह गुरु के यहाँ पढ़ने जाने लगा। वहाँ पर मालती नाम की एक लड़की भी पढ़ने आती थी। एक दिन इन दोनों में प्रेम हो गया। बाद में लड़की के पिता ने उसे घर में ही पढ़ाने का प्रबन्ध किया और चटसार से एक अध्यापक की माँग की। दैववश मधुकर को ही मालती के पढ़ाने का कार्य मिला। जब मधुकर के पिता को

उसके प्रेम की सूचना मिली तो वह उसे लेकर दूर चला गया। इधर मालती को किसी बादशाह ने १ हजार मुद्रा देकर अपनी चेरी बनाने के लिए खरीद लिया। जब मधुकर का पिता मर गया तो वह अपने देश लौट कर आया और अपने गुरु से मिला। उसने बताया कि मालती तो बिक गई है। फलतः पता लगाकर उस वजीर के यहाँ गया जहाँ मालती चेरी-कार्य को अस्वीकार करने के कारण यातना भोग रही थी। वजीर ने तंग आकर मालती को तुर्किस्तान के सुलतान के हाथ दे दिया। जब सुलतान जहाज द्वारा मालती को लेकर चला तो मधुकर भी साथ हो लिया। रास्ते में सुलतान का दामाद मालती पर आसक्त हो गया किन्तु मालती ने विरोध किया अतः उसने उसे समुद्र में डुबो दिया। वह किसी प्रकार पकड़ ली गई, और बाद में वहाँ के बादशाह ने पाँच रत्नों में मालती को खरीद लिया। कुछ दिन बाद मालती मधुकर को लौटा दी गई किन्तु वह पाँच रत्न न लौटा पाया जिसके कारण वह कारागार में डाल दिया गया। वहाँ उसे मछली खाने को दी जाती थी। एक दिन एक मछली के भीतर उसे पाँच रत्न मिल गये तो उसने उन्हें बादशाह को भेंट कर मालती को वापस लिया। फिर दोनों एक नाव पर चढ़ कर अपने देश केलिए चल पड़े किन्तु नाव-दुर्घटना के कारण दोनों पृथक पृथक हो गये। मालती किसी प्रकार जाकर बगदाद पहुँची। मधुकर भी तब तक वहाँ पहुँच चुका था। एक दिन दोनों एक सराय में अँधेरे में पास लेटे भी रहे किन्तु एक दूसरे को पहचान नहीं पाये। अन्त में बादशाह हारूँ रशीद को जब इनके प्रेम-सम्बन्ध का पता चला तो उसने इन दोनों का ब्याह कर दिया और उन्हें अयोध्या पहुँचवा दिया।

(इ) नुसरती कवि कृत "गुलशने इश्क" की कथा

नुसरती दक्खिनी के सूफी कवि थे। इन्होंने 'मधुमालती' के आधार पर 'गुलशने इश्क" की रचना की, जो निम्न प्रकार है :—

राजकुमारी चम्पावती शत्रुओं की कैद में रहती है। उसे मनोहर नाम का राजकुमार कैद से छुड़ाकर उसके माँ-बाप से मिलाने में सहायक होता है अतः राजकुमारी मनोहर से प्रेम करने लगती है। किन्तु चम्पावती की माँ जानती थी कि मनोहर उनके अधीन किसी दूसरे राजा की राजकुमारी, मधुमालती पर आसक्त है इसलिए वह इस उपकार का बदला चुकाने के लिए मधुमालती की माँ को अपने यहाँ बुलाती है। मधुमालती भी साथ में आती है। जब चम्पावती एवं मधुमालती की माता आपस में बातें करती रहती हैं तो वह

मधुमालती को बाग दिखाने ले जाती है। जब मधुमालती चम्पावती का उद्धार जानने की उत्सुकता प्रकट करती है तो वह बताती है कि उसी के प्रेमी मनोहर ने उद्धार किया है। यह सुनकर मधुमालती लज्जित हो जाती है। तब वह उसे मनोहर की एक अँगूठी भी दिखाती है। इसके अनन्तर स्वयं अपनी प्रेम-कहानी कह सुनाती है"।

उपर्युक्त तीनों कथाओं की तुलना करने पर यह ज्ञात होता है कि चतुर्भुज दास तथा जान कवि द्वारा वर्णित कथाओं में प्रारम्भ में ही कुछ समानता है, उसके बाद दोनों कथायें बिल्कुल भिन्न हैं; नुसरती द्वारा वर्णित कथा तो इन दोनों से सर्वथा भिन्न है। जैसा कि मंझन द्वारा वर्णित मधुमालती-कथा के अध्ययन से ज्ञात होगा, नुसरती के 'गुलशने इश्क' तथा मंझन की कथा में साम्य है। यह सम्भव है कि उसने उत्तर भारत में प्रचलित इस कथा के आधार पर ही मंझन के १०० वर्ष पश्चात्, 'गुलशने इश्क' की रचना की हो। नायक तथा नायिका के समान नामों के आधार पर गार्साँ द तासी ने "गुलशने इश्क" एवं चतुर्भुजदास की "मधुमालती वार्ता" में समानता बताई है।

(ई) मंझन कृत मधुमालती की कथा

सर्वप्रथम आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने[३०] इस कथा का संक्षिप्त रूप प्रस्तुत किया। तत्पश्चात् डा० कमल कुलश्रेष्ठ[३१] एवं पं० परशुराम चतुर्वेदी ने[३२] कतिपय परिवर्द्धनों के साथ इस कथा को अंकित किया। नीचे मधुमालती की कथा सविस्तार दी जा रही है :—

कनैगिरि गढ़ के राजा सूरजभान के कोई सन्तान न थी अतः वह दुखी रहता था। दैवयोग से एक दिन एक तपस्वी वहाँ आया। राजा ने उसकी सेवा की जिससे वह प्रसन्न हो गया। भोजन के अनन्तर उसने राजा को एक पिंड दिया और कहा कि इसे अपनी पटरानी को खिला देना। राजा ने वैसा ही किया। दस मास के पश्चात् रानी के गर्भ से एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम मनोहर रखा गया। पंडितों ने विचार कर बताया कि जब राजकुमार १४ वर्ष ११ मास का होगा तो उसके हृदय में प्रेम उत्पन्न होगा और वह एक वर्ष तक दूर दूर घूमेगा। राजा ने धाइयों को रख कर उसका पालन कराया

---

३०. हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ० ९५।

३१. हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य।

३२. सूफी काव्य संग्रह, पृ० २५० तथा भारतीय प्रेमाख्यानक काव्य की परम्परा (१९५६) पृ० १४०।

पाँचवें वर्ष में विद्या प्रारम्भ करा दी और जब राजकुमार बारह वर्ष का हो गया तो वह समस्त विद्याओं में सिद्धहस्त हो गया।

जब वह बारह वर्ष का हुआ तो राजा ने उसका तिलक कर दिया भविष्यवाणी के अनुसार एक दिन जब वह गहरी नींद में सो रहा था तो अप्स-राओं ने आकर उसे देखा और उसके रूप पर मुग्ध होकर उसके योग्य राजकु-मारी की तलाश प्रारम्भ की। उन्हें स्मरण आया कि महारस नगर के राजा विक्रमराय की कन्या मधुमालती इसके योग्य सुन्दरी है अतः वे राजकुमार को सेज सहित मधुमालती के पास रख आईं। जब राजकुमार जगा तो अपनी सेज के पास एक कुमारी को देखकर चकित हुआ किन्तु दूसरे क्षण उसके हृदय में पूर्व प्रेम का अंकुर उदय हुआ और उसकी शोभा को निहारने लगा। तब तक राजकुमारी भी जग गई। उसने राजकुमार का परिचय पूछा और फिर अपना परिचय दिया। राजकुमार चेतनाशून्य हो उसके चरणों में गिर पड़ा और अपने पूर्व जन्म की प्रीति का वर्णन करने लगा। तब कुमारी को भी प्रेम का स्मरण हुआ। राजकुमार ने उसके अंगस्पर्श करने चाहे किन्तु कुमारी ने उसे मना किया और कहा कि पहले 'बाचा' हो ले। दोनों में बाचा हुई और अँगूठियाँ बदली गईं। जब वे दोनों सो गये तो अप्सराओं ने आकर उन्हें फिर उनके स्थानों में सोते हुये पहुँचा दिया।

जब राजकुमार जागा तो वह मधुमालती के विरह में विह्वल हो उठा। सहजा नाम की धाई ने आकर यह दशा देखी तो राजा को सूचना दी। वैद्य बुलाये गये किन्तु कुमार के शरीर में कोई रोग न मिला। अन्त में राजा के महामात्य (महँथा) ने यह भाँप लिया कि यह राजकुमार अवश्य ही किसी के विरह में विकल है अतः उसने नाना प्रकार से समझाना प्रारम्भ किया; किन्तु वह असफल रहा। तब राजा, रानी भी आये। उन्होंने कुमार के चरणों में अपने मस्तक रखकर विनय की। राजकुमार ने मधुमालती के प्रेम की बात कही और उसे प्राप्त करने के लिये प्रस्थान करने की आज्ञा माँगी।

दूसरे ही दिन राजकुमार दलबल सहित चल पड़ा और एक समुद्र के किनारे पहुँचा। वह चार महीने तक समुद्र में रहा किन्तु एक दिन भँवर में फँस जाने के कारण जहाज टूट गई और सभी दल डूब गया। वह किसी प्रकार से अपनी जान बचाकर समुद्र के किनारे जा लगा। सामने ही एक बन था जिसमें वह चल पड़ा। बन के बीच में पहुँचकर उसने एक सुन्दरी युवती देखी। वह सो रही थी। जगने पर उसने बताया कि वह चितविस्राम के

राजा चित्रसेन की पुत्री प्रेमा है। एक वर्ष पूर्व एक राक्षस उसका हरण करके उसे वहाँ ले आया था। पहले तो राक्षस का नाम सुनकर राजकुमार डरा किन्तु प्रेमा के अनुनय-विनय पर उसके उद्धार के लिए उद्यत हुआ। उसने जब अपनी सारी कथा कह सुनाई तो प्रेमा ने मधुमालती से उसे मिला देने का आश्वासन दिया। उसने बताया कि मधुमालती उसकी बाल-सहेली है और उनकी माताओं में अत्यन्त प्रगाढ़ता है। मधुमालती की माँ प्रत्येक द्वितीया को मधुमालतो सहित उसकी माँ के यहाँ अब भी आया करती है अतः यदि वह उसके घर जाय तो उसके कुटुम्बी मधुमालती से उसकी भेंट करा देंगे।

यह सुनकर राजकुमार प्रसन्न हुआ और कहा, "तुम्हारे उद्धार किये बिना भला मैं कैसे जा सकता हूँ।" तबतक राक्षस के आने की बेला हो गई। प्रेमा ने राजकुमार को अस्त्र दिये जिनके बल से उसने उस मायावी राक्षस पर वार किया; किन्तु उसकी भुजायें एवं मस्तक टूट कर फिर लग जाते थे। तब प्रेमा ने बताया कि फुलवारी के दक्खिन दिशा में एक अमृत वृक्ष है अतः यदि उसे समूल नष्ट कर दिया जाय तो राक्षस का प्राणान्त हो सकता है। राजकुमार ने वैसा ही किया।

फिर राजकुमार और प्रेमा चितविस्राम नगर के लिये रवाना हुए। जब राजा को पता चला तो वह बड़ी धूमधाम से उन्हें घर ले गया। बाद में प्रेमा और राजकुमार का उसने व्याह करना चाहा तो राजकुमार ने प्रेमा के साथ बहिनापा का सम्बन्ध बताया। चार दिन के बाद जब राजकुमार मधुमालती को ढूँढ़ने के लिए प्रस्थान करने लगा तो प्रेमा ने याद दिलाई कि द्वितीया के दिन मधुमालती उसके यहाँ आनेवाली है।

आने पर प्रेमा ने मधुमालती से अपने उद्धार की सारी कथा कह सुनाई और यह भी बता दिया कि वह राजकुमार भी यहीं पर है जिस पर मधुमालती आसक्त है। पहले तो मधुमालती ने इसे अस्वीकार किया किन्तु जब प्रेमा ने अँगूठी दिखला दी तो वह मान गई।

फिर प्रेमा ने बड़े यत्न से चित्रसारी में मनोहर और मधुमालती को मिलाया। वे दोनों अपनी अपनी बिरह-कथाएँ सुन-सुनाकर सो गये। अपनी पुत्री को लौटने में देरी होते देख रूपमंजरी अत्यन्त चिन्तित हुई और प्रेमा की माँ के लाख मना करने पर भी चित्रसारी जा पहुँची। वहाँ पर मनोहर और मधुमालती को एक साथ सोया देखकर वह जल-भुन गई। इसपर प्रेमा ने उनके पूर्व-प्रणय की सारी कथा कह सुनाई किन्तु फिर भी वह क्रुद्ध ही रही।

उसने सोते हुए राजकुमार को कनैगिरि गढ़ और मधुमालती को अपने घर भिजवा दिया और स्वयं भी प्रेमा की माँ से बिदा ले घर पहुँची।

जब राजकुमार जागा तो स्वयं को अपने स्थान पर पुनः पाकर रोने लगा। वह पुनः वहाँ से मधुमालती की खोज में चल पड़ा। इधर मधुमालती भी कुमार के वियोग में रोती रही। रूपमंजरी ने बहुत मनाया किन्तु जब वह न मानी तो उसने मधुमालती को चिड़िया बना दिया।

मधुमालती पक्षी रूप में मनोहर की खोज में उड़ चली। उसने पानैरिगढ़ के राजकुमार ताराचन्द को देखा जो उसके प्रेमी की ही आकृति का था। ताराचन्द भी इस पक्षी के रूप पर मुग्ध हो गया। बड़े ही यत्न से इसे पकड़वाया और एक सोने के पिंजड़े में रख लिया। तीन दिन तक जब पक्षी ने अन्न-जल नहीं ग्रहण किया तो उसने इसका कारण पूछा। तब पक्षी ने अपनी सारी कथा कह सुनाई। ताराचन्द ने उसके उद्धार का बीड़ा उठाया।

वह पींजड़े को लेकर महारस नगर पहुँचा। जब राजा और रानी ने यह समाचार सुना तो राजकुमार को घर ले गये। रानी ने मंत्र पढ़कर चिड़िया को फिर स्त्री रूप में परिणत किया। राजा-रानी ने यह चाहा कि मधुमालती के साथ ताराचंद का व्याह हो जाय किन्तु उनमें भाई-बहिनापा के सम्बन्ध को जानकर उन्हें संतोष करना पड़ा। ताराचन्द ने कहा कि यदि राजकुमार मनोहर से उसका ब्याह हो जाया तो ठीक होगा। इस पर रानी ने प्रेमा के यहाँ सन्देशा भेजा। मधुमालती ने भी संदेशवाहक से अपना सारा दुख जाकर कहने को कहा। जिस समय सन्देशवाहक प्रेमा के यहाँ पहुँचा उसी समय राजकुमार भी साधू-वेष में वहीं पहुँचा। प्रेमा अत्यन्त प्रसन्न हुई। संदेशवाहक प्रेमा और मनोहर की चिट्ठियाँ लेकर वापस आ गये।

मनोहर का समाचार पाकर विक्रमराय ने प्रस्थान किया और एक स्थान पर डेरा डालकर वहीं पर प्रेमा तथा चित्रसेन को बुला भेजा। मनोहर और मधुमालती का विवाह हो गया। मनोहर ने ताराचन्द को भी अपने साथ रख लिया और वे सुखपूर्वक समय व्यतीत करने लगे। एक दिन दोनों मित्र जब शिकार खेलकर और जल क्रीडा समाप्त कर घर लौटे तो प्रेमा और मधुमालती घर में नहीं थीं। वे चित्रसारी में झूल रही थीं। ताराचन्द पता लगाने के लिये वहाँ गया किन्तु प्रेमा की छबि पर आसक्त हो बेहोश होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। यह देखकर मधुमालती अत्यन्त दुखी हुई। सेवोपचार के अनन्तर जब उसे होश आया तो मधुमालती ने

वैद्य बुलाये। उन्होंने बताया कि इसका चित्त जिससे लगा है उसी को देखने पर यह ठीक होगा। मधुमालती ने एकांत में पूछा तो ताराचंद ने बताया कि झूलते हुए उसने एक बाला देखी है। उसी को देखकर वह मूर्छित हो गया है। मधुमालती ने अनुमान से जान लिया कि वह बाला प्रेमा ही हो सकती है। फलतः उसने मनोहर से कहकर प्रेमा के साथ ताराचन्द का व्याह कर दिया। प्रेमा ने अपनी सखी सुरेखा और ताराचन्द के सखा सुहृदय का भी व्याह कर दिया। वर्षा भर साथ साथ रहने के अनन्तर मनोहर तथा ताराचन्द ने अपने अपने स्थानों को प्रस्थान करने की इच्छा प्रकट की। चित्रसेन तथा विक्रम राय दोनों ने यह प्रस्ताव स्वीकार किया। दोनों कुमारियों की माताओं ने अपनी पुत्रियों को नाना प्रकार के उपदेश दिये। फिर दोनों राजकुमारों ने साथ साथ प्रस्थान किया। कुछ दूर जाकर ताराचन्द और मनोहर विलग-विलग हो गये। बिछुड़ते समय वे एक दूसरे के गले से लगकर देर तक रोते रहे।

मधुमालती और मनोहर को नगर में आया हुआ जान मंगल गाये गये।

(छ) मधुमालती में आए प्रमुख पात्र

'मधुमालती' कथा के अन्तर्गत प्रमुख नायक मनोहर है और प्रमुख नायिका है मधुमालती। इस कथा के अन्तर्गत एक अर्न्तकथा भी है जिसके प्रेमी और प्रेमिका क्रमशः ताराचन्द और प्रेमा हैं। नीचे मधुमालती में आये हुए प्रमुख पात्रों का संक्षिप्त वर्णन प्रस्तुत है:—

१. **राजकुँवर** इसका नाम मनोहर था। इसकी माँ का नाम कौंलादेई (अ० १५०) था। इसके पिता का नाम सुरजभान था जो राघववंशी (अ० १०२) था और जिसकी राजधानी कनैगिरिगढ़ थी। यह मधुमालती के प्रेम में योगी बनकर निकला और अन्त में उससे विवाह हो गया।

२. **मधुमालती** इसकी माँ का नाम रूपमंजरी था। इसका पिता विक्रम राय महारस नगर का राजा था। बाद में यह मनोहर की प्रेयसी बनी।

३. **प्रेमा** यह मधुमालती की बाल-सहेली थी। इसकी माता का नाम मधुरा था जिसकी मैत्री मधुमालती की माँ रूपमंजरी से थी। प्रेमा के पिता का नाम चित्रसेन था। वह चितबिस्राउँ नगर का राजा था। एक बार जब प्रेमा अपनी सहेलियों के साथ बाग में खेल

रही थी तो एक राक्षस ने उसे पकड़ लिया और जंगल में ले जाकर रखा। मनोहर ने राक्षस से इसका उद्धार किया। बाद में प्रेमा ताराचन्द के साथ ब्याह दी गई।

४. ताराचन्द यह पुर पानैरि गढ़ का एक क्षत्रिय राजकुमार था (अ० ३६०)। जब मधुमालती पक्षी हो गई तो इसने पकड़कर उसे मनोहर के पास पहुँचाया। यह अत्यन्त उपकारी एवं मानगढ़ का मालिक था (अ० ४८८)।

५. जौना यह मधुमालती की मालिन थी (अ० ३८२) और उसके लिए फूलों के हार गूँथा करती थी। इसने ताराचन्द को महारस नगर का परिचय दिया।

६. सुरेखा यह प्रेमा की सखी थी और अत्यन्त रूपवती थी। इसने फुलवारी में मधुमालती और मनोहर के मिलने के समय प्रेमा की सहायता की थी। प्रेमा ने इसका ब्याह ताराचन्द के मित्र कुमार सुहृदय के साथ कर दिया (अ० ४९६)।

७. सुहृदय यह ताराचन्द का विश्वासपात्र मित्र था (अ० ३७९)। इसका ब्याह प्रेमा की सखी सुरेखा के साथ हुआ।

८. सहजा यह मनोहर की धाई थी (अ० १४३)। तब राजकुमार सर्वप्रथम सोते सोते मधुमालती से दूर कर दिया गया तो इसी ने उसे धीरज बँधाया था।

९. महथा यह राजा सुरजभान का महामात्य था। इसका नाम गुणनिधान था (अ० १५३)। यह मन्त्र शक्ति के बल पर कोई भी सिद्धि प्राप्त कर सकता था (अ० १५५)। इसने मनोहर को मधुमालती के प्रेम से विरत करने का प्रयास किया था।

१० राकस यह पाँच माथ और दस भुजाओं वाला अत्यन्त बलशाली राक्षस (अ० २६२) था। यह अत्यन्त मायावी था। इसका जीव किसी अमृतफल में बास करता था (अ० २६६) जिसके नष्ट होने से इसका पतन हुआ। इसने प्रेमा को उड़ाकर एक जंगल में बास दे रखा था। मनोहर ने इस राक्षस को मार कर प्रेमा को मुक्त किया।

(ज) मधुमालती में वर्णित स्थान

मधुमालती में जितने भी स्थानों की चर्चा हुई है उनमें से केवल एक को छोड़कर शेष की भौगोलिक स्थिति ढूँढ़ निकालना कठिन है। इनमें से कुछ

समुद्र के पार किसी द्वीप में होंगे तो कुछ अन्यत्र। चर्नाढी आजकल का चुनारगढ़ है जो मिर्जापुर जिले में गंगा के तट पर स्थित है।

१. **चर्नाढ़ी** यह आजकल का चुनारगढ़ है। यह मंझन कवि का निवास स्थान था। इसके पूर्व में जरगो (जरगो नदी) और उत्तर पश्चिम में गंगा नदी थी। यहाँ पर एक गढ़ था जिसके भीतर गंगा का पानी भरा रहता था। नगर में अनेक प्रकार के लोग निवास करते थे (देखिये अर्द्धाली सं० ३३ तथा ३४)।

२. **कनैगिरि** यह राजा सुरजभान की राजधानी था। यह इन्द्रपुरी के समान था (अ० २२३.२)। सुरजभान का राज्य दस हजार कोस तक विस्तीर्ण था। गढ़ में ५२ हजार कंगूरे थे। इस गढ़ तथा बस्ती का विस्तार एक कोस तक था और मंदिरों के दीपक दस योजन तक दिखाई पड़ते थे (अ० ५४०)।

३. **महारस** यह विक्रमराय की राजधानी था। यह जंबूद्वीप एवं भारत खंड स्थित नगर था (अ० ३७०.४)। विक्रमराय पाट-छत्र राजा था। इसका दूसरा नाम विसमौं नगर भी था (अ० १०७)।

४. **चितबिसाउँ** यह राजा चित्रसेन की राजधानी था। इसके आसपास एक लाख वृक्षों का बाग था। बगीचे में पानी सींचने की नालियाँ थीं। वृक्षों में अमृत के समान फल लगते थे। ऋषि मुनि तक इस कैलास के समान नगरी में आकर विश्राम करते थे (अ० १९३)। नगर के भीतर ऊँचे ऊँचे महल थे (अ० २७८.२)।

(झ) मधुमालतीमें अन्तर्कथाओं का निर्देश

कुतुबन कृत 'मृगावती' एवं जायसी कृत 'पद्मावत' में अनेक अन्तर्कथायें आई हैं जो मुख्य रूप से प्रेमाख्यानक इतिवृत्तों की ओर संकेत करती हैं। किन्तु मधुमालती में जितनी भी अन्तर्कथायें हैं, वे पौराणिक व्यक्तियों से ही सम्बन्धित हैं। इनका प्रयोग दान, वीरता, त्याग आदि के वर्णन के समय उपमा या दृष्टान्त देने में हुआ है। ऐसे उल्लेख निम्न हैं (जिनका निर्देश कोष्ठकों में अर्द्धाली संख्या एवं पंक्ति-संख्या रखकर किया जा रहा है):—

हेतिम, करन, भोज और बलि (१३.३)
हरिश्चन्द और दुदिस्टिल (१३-४) विक्रम (१३-४)
दसरथ (१६८.४), गोरख (१७०.७), राजा नल (२३६.५)

लखन (२४४.६), हनिवंत (२४४.७), सिया, राम तथा राजन (२८८.४) ।

(ञ) मधुमालती का काव्यसौष्ठव

काव्य सौष्ठव के अन्तर्गत हम मधुमालती की भाषा, शैली एवं भावों के सम्बन्ध में विचार करेंगे ।

१. भाषा—अधिकांश सूफी कवियों ने अवधी भाषा में अपने काव्य ग्रंथ रचे । यह अवधी भाषा संस्कृतनिष्ठ न होकर बोलचाल की अवधी रही है । मंझन ने भी ऐसी ही अवधी में मधुमालती की रचना की है । बोलचाल की भाषा होने के कारण इसमें मुहावरों तथा सूक्तियों (या उपखानों) का पुट भी प्रचुर मात्रा में मिलता है । यह पुट केवल मधुमालती की ही विशेषता नहीं है । जायसी ने तो कहावतों से ओतप्रोत एक ग्रंथ—मसलानामा—की रचना की है[३३] । मंझन द्वारा प्रयुक्त कतिपय उपखानों को नीचे प्रस्तुत किया जा रहा है.—

१. येहि कलि जेतिक पंडित भये, मूँड मुँडाय सिद्ध लइ गए (२०-१)
२. हिय का अंधा सोइ गँवारा, जस उल्लू दिनहीं अँधियारा (२१.४)
३. जग उपखान जो कहियत आहा, धन खोए बौराइ जुलाहा (१४७.५)
४. बात बड़ी जग जीवन थोरा (१४६.५)
५. गये नाग का धरुनी ठठावसि, जानि बूझि मोहिं का बौरावसि (१६३.५)
६. जानि बूझि कै बरबस, गाँठी बाँधि अंगार (१६३.७)
७. भीति देखि कै करी उरेही (३०४.५)
८. अस को बरै धूरि कर तागा (३०४.२)
९. चतुराइनि मोतैं बनि आइहि, धाइ के आगे पेट छपाइहि (३०५.४)
   (तुलनार्थं—और करै जो और बतावै, धाही के आगे पेट छपावै —मसलानामा ३२)
१०. दानिहि बाट छिंदरि जो जावै, संगी सन की चोरी फाबै (३०५.५)
११. ओस पियास न त्रिखा बुझाई, आँब साध की अँबिली जाई (३६१.४)
१२. यह उपखानि जानि मन हँसी, गारुर ससुर कुठाहर डसी (४५१.४)
१३. छाँडा लंक भभीछन जो भावै सो होइ (५१७.७) ।

भाषा के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी 'मधुमालती का भाषा-वैज्ञानिक

---

३३. कहरनामा तथा मसलनामा—सम्पादक अमरबहादुरसिंह अमरेश, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद (१९६२) ।

अध्ययन' शीर्षक के अन्तर्गत प्रस्तुत की गई है।

२.·शैली—भारतीय साहित्य में प्रबन्ध काव्य सर्गबद्ध शैली में लिखे गये हैं किन्तु सूफी कवियों ने इस परम्परा का निर्वाह न करके फारस की मसनवी शैली को अपने प्रेमाख्यानकों का आधार बनाया है। इस मसनवी शैली में कथा को सर्गो या अध्यायों में विभक्त नहीं करना पड़ता। कथा एक ही शैली में प्रवाहित होकर समाप्त हो जाती है। कभी कभी घटनाओं को रोचक बनाने या स्पष्ट करने के लिए कहीं कहीं शीर्षक दिये जाते हैं। ये ही शीर्षक सूफियों द्वारा 'खण्डों' के रूप में अंकित किये गए हैं।

प्रबंध काव्य में अपनी बहुज्ञता प्रदर्शित करने के उद्देश्य से कवि एक ही सर्ग में विविध छन्दों की योजना करने के लिए स्वतन्त्र है किन्तु मसनवी शैली में केवल दोहा—चौपाई या सोरठा—चौपाई छन्दों को ही प्रधानता दी गई है। अधिकांश सूफी कवियों ने दोहा—चौपाई छन्दों में ही अपने काव्य रचे। फिर भी यह दोहा—चौपाई की छन्द-योजना अभारतीय नहीं रही। सूफियों के पूर्व अपभ्रंश में दोहा के स्थान पर घत्ता और चौपाई के स्थान पर पद्धडियों का प्रयोग होता रहा है। मसनवी शैली में पाँच-पाँच, सात-सात या नव-नव चौपाइयों के बाद दोहे या सोरठे की योजना "अर्द्धाली-दोहा" शैली कहलाती है।

मंझन ने पाँच-पाँच चौपाइयों के बाद एक दोहा या सोरठा रखा है। इसके पूर्व कुतुबन ने "मृगावती" में ऐसी ही शैली अपनाई है।

दोहा तथा चौपाई दोनों ही मात्रिक छन्द हैं। आदर्श दोहे में १३-११ मात्राओं वाले चार चरण होते हैं किन्तु मधुमालती में ऐसे अनेक दोहे हैं जिनके पहले और तीसरे चरण में तेरह के बजाय सोलह मात्रायें पाई जाती हैं। दोहों की यह विशेषता जायसी कृत 'पद्मावत'[३८] एवं कुतुबन कृत 'मृगावती'[३९] में भी परिलक्षित होती है। चौपाइयों में भी ऐसी ही मुक्तता का परिचय मिलत है। ऐसा प्रतीत होता है कि दोहे-चौपाइयों के जिस स्वरूप को सूफियों ने अपनाया था वह अत्यन्त मुक्त था और उसमें न्यूनाधिक मात्राओं का प्रयोग होना वर्जित नहीं था। सम्भवतः इसी दृष्टि से मंझन ने कथा के प्रारम्भ में न्यून अक्षर होने पर उसे पूरा करने की बात लिखी है :—

जहाँ न आखर पुरै सँवारहु, भलया भये मंद प्रतिपारहु।

× × ×

ओछ परत जे अछर, कबि महँ लेब छपाय।

यह देखा गया है कि नागरी लिपि में मधुमालती की जो प्रतियाँ प्राप्त हुई

हैं उनमें दोहे की मात्राओं में उतना अन्तर नहीं है जितना कि फारसी लिपि में प्राप्त प्रतियों में। हो सकता है कि हिन्दी प्रतिलिपियों में आदर्श दोहों के अनुसार मात्रायें कम करने के कारण कुछ शब्दों का परिहार कर दिया गया हो।

मसनवी शैली की एक और विशेषता है और वह है ग्रंथ के प्रारम्भ में परमेश्वर की बन्दना तथा मुहम्मद साहब का गुणगान। इसके अतिरिक्त मुहम्मद साहब के चार यारों एवं शाहेवक्त की प्रशंसा का भी समावेश रहता है। मंझन ने मधुमालती के प्रारम्भ में एकोंकार की बन्दना की है, फिर मुहम्मद साहब एवं उनके यारों की स्तुति की है। इसके अनन्तर अपने गुरु की महिमा एवं साहि-सलेम के प्रभुत्व का भी वर्णन प्रस्तुत किया है।

३. भाव—मधुमालती काव्य की सृष्टि का महदुद्देश्य था' रसवार्ता' कहना ऐसी रसवार्ता में संयोग एवं विरह अथवा प्रेम एवं विरह इन दो पक्षों का सम्यक विवेचन रहता है। मंझन ने भी मधुमालती के अन्तर्गत प्रेम एवं विरह की अक्षय अनुभूतियों को संजोया है। इसके लिए उन्होंने विविध रूढ़ियों, प्रतीकों, रसों एवं अलंकारों का आश्रय लिया है। वस्तुतः ये ऐसे उपादान हैं जिनके द्वारा कोई भी कवि अपनी कृति को जीवन्त बनाता है। मधुमालती में हमें इन उपादानों की सम्यक योजना दृष्टिगोचर होती है।

कथा को मोड़ देने और उसमें प्रवाह लाने के लिए आवश्यक है कि विविध प्रकार की रूढ़ियाँ प्रयुक्त हों। सूफी कवियों ने वस्तुतः समान रूप से न्यूनाधिक रूप में रूढ़ियों की योजना की है। स्वप्न में अप्सराओं द्वारा राजकुमार और मधुमालती का संयोग, राक्षस के प्राणों का अमृतफल में वास करना, मधुमालती का पक्षी रूप में परिणत होना—ये घटनाएँ लोककथाओं में बारम्बार प्रयुक्त रूढ़ियों के अनुसार ही हैं।

रस—विभिन्न रसों का समावेश काव्य को संजीवनी प्रदान करता है। मधुमालती में श्रृंगार रस, करुण रस, तथा अद्भुत रस की काफी सामग्री प्राप्त होती है। श्रृंगार रस तो रसराज ही है। उसके अंतर्गत संयोग तथा वियोग अथवा विरह इन दोनों पक्षों का समावेश हुआ है।

---

३४. जायसी ग्रंथावली : सम्पादक डा० माताप्रसाद गुप्त। भूमिका, पृष्ठ ४४।

३५. कुतुबन कृत मृगावती : सम्पादक डा० शिवगोपाल मिश्र। भूमिका के अन्तर्गत भाषा-शैली उपशीर्षक।

श्रृंगार रस : संयोग श्रृंगार

कुँअर बाँह कामिनि गहि कहा, हिये सेरान जो रे दुख रहा।
अबहूँ तजि पाछिल निठुराई, परिहरि लाजु लागु गिव धाई।
लाज छोड़ि कह रस सो बैना, सौंह भये तब दुहुँ के नैना।
अहे जो लोचन आस तिसाये, दुनहु पिया रस रूप अघाये।
दगधि दुनौ कै हियै बुतानी, मिलन भाव जे तपत सिरानी॥

नैन नैन ते लोभे, मन ते मन अरुझान।
दुइ हीवर जो एक भौ, औ भै एक परान ॥४४६॥

श्रृंगार रस : वियोग या विरह :

सुनु धाई दुख बात हमारी, तो सौं मैं सब कहौं उघारी।
प्रान गयेउ परिहरि मम देहा, कथा बाजु मो मरन संदेहा।
दुख की बात कहै नहिं पारौं, जीउ घट होइ तौ कहत सँभारौं।
मधुमालति जिउ लीन्ह अछोरी, धाई कथा बाजु जिव मोरी ॥१४६॥

श्रृंगार रस के आलम्बन नायक और नायिका होते हैं। शास्त्रानुसार नायक को कुलीन, त्यागी, रूप-सम्पन्न, तेजस्वी, सुशील होना चाहिए। गुणों के अनुसार नायक तथा नायिका के अनेक भेद होते हैं। मधुमालती में नायक पति के रूप में और नायिकायें स्वकीया, मुग्धा, पद्मिनी, प्रोषित पतिका, रूपगर्विता आदि रूपों में अंकित हुई हैं। उद्दीपन विभाव के अन्तर्गत सखा, सखी, बन, उपवन, चन्द्र, ऋतु वर्णन आदि की कवि-परम्परा रही है। सूफियों ने सखी वर्णन, बारह मासा तथा नायिका के नखशिख वर्णन के रूप में इस परम्परा का निर्वाह किया है। मंझन द्वारा वर्णित सखी में जौना मालिन का चित्रण हुआ है। मधुमालती में बारहमासा की भी सुन्दर योजना है। किन्तु डा० कमल कुल श्रेष्ठ ने इस बारहमासे को कमजोर बतलाया है।[३६] यही नहीं, उन्हें मधुमालती में संयोग के कायिक पक्ष का अभाव प्रतीत हुआ है।[३७] इस सम्बन्ध में निवेदन है कि मंझन ने जो बारहमासा प्रस्तुत किया है वह संक्षिप्त अवश्य है किन्तु उसे कमजोर नहीं कहा जा सकता। उदाहरणार्थ निम्न पंक्तियों का

---

३६. हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य पृ० ३१४।
३७. वही, पृष्ठ ३००।

अवलोकन करें :—

सखी हे घट मो बिरह दुख, बकति न आवै मुख।
औ तापर लोयन चुवैं, लिखै न पावै दुख॥
× × ×
मोहिं तन आगि बिरह पर जारा, सरद चाँद मोहिं सेज अँगारा।
× × ×
बिरह डार पर बैसी बाला, रैनि गँवावै बरिसै सिर पाला॥
जेहि सुख सेज सखी है कन्तू, तेहि अनन्द बैसाख बसन्तू॥

उपर्युक्त पंक्तियाँ इसकी सबल प्रमाण हैं कि मंझन का बारह मासा सशक्त है, कमजोर नहीं। डा० सरला शुक्ल[२८] का अभिमत है कि मंझन ने बारहमासे में बिरही की दुखानुभूतियों का बड़ी सफलता से चित्रण किया है।

जहाँ तक संयोग के कायिक पक्ष का सम्बन्ध है उसका जो रूप हमें मधुमालती में प्राप्त होता है वह अन्य किसी सूफी काव्य में नहीं दृष्टिगोचर होता। मंझन की अखंड भारतीयता ने उसे ऐसे कायिक संयोगों को 'चित्रित करने के लिये वाध्य किया है जो अत्यन्त यथार्थ, परम्परागत एवं सजीव हैं। नीचे कुछ स्थल उद्धृत किये जा रहे हैं:—

तोहि बिना जग जीवन नाहीं, तुह सरीर हम तोहरी छाँही।
तुह परान हम काया तोहारी, तुह ससि मैं सो किरनि उजिआरी॥
× × ×
मैं तैं सदा दुओ सँग बासी, औ संतति एक देह नेवासी।
औ हम तुह तौ एक सरीरू, दुऔ माटी सानी एक नीरू॥
एक बारि दुइ भई पनारी, एक दीप घर दुइ उजियारी।
× × ×
तैं जौ समदि लहरि मैं तोरी, तैं रबि मैं जग किरनि अँजोरी।
× × ×
सहजे दुवौ जीव मिलि गये, रहै न अंतर एक जो भये॥
× × ×
सांते पिअत रूप चख दोऊ, रबि ससि मिलि एकै भौ दोऊ।
मुख मुख सन सौंह नहिं करई, प्रथम समागम उर थरहरई॥
कुँअर अधर अधरन्ह सौं जोरै, कुँअरि बिमुख भै भै मुख मोरै।

---

२८. हिन्दी सूफी कवि और काव्य, (सं० २०१३) पृ० ३४५।

दीप भरम मुख फूकै बाला, अधिकौ करै रतन उजियारा ॥
दुओौ कर लै लाजन्ह मुख झाँपै, अधर दसन कै खंडित काँपै ।
एक वोय परम पियारी, औ भै परथम संग ।
तिसरे लाज बियापेउ, पलकन्ह दुहुँ रति रंग ॥४५०॥

उपर्युक्त उद्धरणों में न केवल कायिक संयोग वर्णित है वरन् रहस्यात्मक संयोगानुभूति का भी चित्रण हुआ है ।

करुण रस :

मधुमालती के पक्षी हो जाने पर ताराचन्द उसे प्राप्त करके जिस प्रकार से मनोहर की खोज करने चला उसका अत्यन्त कारुणिक चित्रण मधुमालती में हुआ है :—

सुनि दुख वोहि उपजी जित दाया, छाँडिउ लोग कुटुम्ब कै माया ।
कहा न कछु चित चिन्ता करहू, करउँ सोइ जासौं उद्धरहू ।
उटवौं धरम पंथ चढि सोई, तुअ उद्धार जाहि तै होई ।
छाँडा .राजपाट सब चाऊ, उटवा दया लागि बौसाऊ ।
बाचा बाँधि पिंजरा सिर धरा, निसरेउँ राजपाट परिहरा ।
पुनि रानी के आगे, पिंजरा धरा कुमार ।
देखि डँफारि जो रोई, कोखि अगिन कै झारि ॥३६२॥

अथवा प्रथम बार जब मधुमालती राजकुँवर से पृथक होती है तो उसकी सखियाँ समझाते हुए कहती हैं:—

जौं प्रीतम सौं लाहा लहियै, तौ प्रीतम लागि दुख सहियै ।
दुख की रैनि जो जागि बिहाई, सौ इंजोर भिनुसारे पाई ।
बिन काँटै जग फूल न आवा, बाजु नाग केइँ अमृत पावा ।
मंझन यह कलि दुक्ख बिन, सुख मति चाहै कोइ ।
पहले तरु पतझार हो, तौ नौ पल्लौ होइ ॥१४०॥

अद्‌भुत रस :

खरग पानि सौं आग उठावौं, राकस धूरि बतास उड़ावौं ।
राकस प्रान देखि कस हरऊँ, एक निमिख माँहिं संघरऊँ ।
आइ बने छत्री जो भाजौं, कुल कलंक हों जनकी लाजौं ।
\+ \+ \+ \+
रूप भयानक विपरीत भाऊ, सरग माँथ धरति दुइ पाऊँ ।
सावन घटा वोनै जनु आवा, तस राकस मूरति देखरावा ।

पाँच माथ दस भुज बरियारे, दसौं नैन चमकै जनु तारे।

अलंकार :

मधुमालनी में रीतकालीन काव्य ग्रंथों के समान अलंकारों की भरमार नहीं है। कथा के प्रवाह के साथ स्वाभाविक रूप में जो भी अलंकार आये हैं, वे सरल एवं स्वाभाविक हैं। ऐसे अलंकारों में उपमा, उत्प्रेक्षा, अनुप्रास, यमक, दृष्टान्त अत्युक्ति आदि प्रमुख हैं।

उपमा :

१. सजग भए बिबि लोचन कैसे, उठैं अघात पारधी जैसे (६६.४)।

२ जिउ हरखा मन रहस अनंदू, कौल कुमुद जिमि दिनअर चंदू।
(२५४.१)

३. सुधा समान जीभ मुख बाला (८७.१)।

रूपक :

१. बिहुर नाग बिस लहरैं देई ।। (१८२.१)

२. प्रेम हाट है चहुँ दिसि पिसरी ।। (२७.६)

३. पेम दीप जाके हिय बरा ।। (२८.४)

यमक :

१. सारंग जो सारंग प्रतिपाला, ससि की प्रीति मृगा रथ चाला (१८१.४)।

२. जो रसना पर रसना लाइहि (८७.४)।

३. हरि नैनी हरि बैनी ससि बदनी निकलंक (१९०.७)।

उत्प्रेक्षा :

१. कै जनु अमी नदी बहि आई (७५.३)।

२. गढ कनैगिरि नगर सोहावा, जनु कबिलास उतरि कै आवा।
(४१.२)

३. कुंजल मेघ कीन्ह दग फेरा, दामिनि जनु आँकुस तिन केरा.
(४१५.२)।

भ्रान्ति या भ्रम :

कै यह सरग अपछरा बारी, इन्द्र सराप धरनि धै डारी।
कै यह सरग वनसपति नाऊँ, इहाँ आइ दिन कर बिलाऊँ।
कै यह डाइनि है बन केरी, माया रूप धरै है फेरी।
(१८३)

दृष्टान्त :

१. तिरिया काँटा केतुकी भौंर बोहट हुति बार (१५८.६)।

२. त्रिया प्रेम जो जीवन लाये, सेंवर सुआ तैस फल पाये (१५७.५)।
३. नरियर जैस प्रीत करु बारा, ऊपर करकस हिये रसारा।

अत्युक्ति या अतिशयोक्ति :

बारी बादि पौन सौं करई (२८३०४)।

(४) **बहुज्ञता का परिचय**–मंझनकृत मधुमालती में ऐसे अनेक स्थल हैं जिनके द्वारा कवि की बहुज्ञता का परिचय प्राप्त होता है। उदाहरणार्थ, अनेक लोक-रीतियों का विस्तृत वर्णन, वचन की महिमा का वर्णन, राशि और ग्रहों की चर्चा, बारहमासे की योजना, शिकार वर्णन आदि। इसके अतिरिक्त भी कुछ सूक्ष्मातिसूक्ष्म निरीक्षण मिलते हैं। यथा—

(१) मध्ययुग में काशी और प्रयाग जाकर करवत लेने की प्रथा का उल्लेख (८६.२)।

(२) चोरी इत्यादि का अभियोग लगाये जाने पर लोहे की तप्त शलाका का प्रयोग किया जाना जो "दिव्य कराना" कहलाता था (१३७.३)।

मंझनकृत मधुमालती में अनेक स्थलों पर ऐसे भी भाव व्यक्त हुये हैं जो किसी पूर्ववर्ती कवि द्वारा पहले ही कहे या लिखे जा चुके हैं। मधुमालती के कई दोहे संस्कृत श्लोकों के अनुवाद जैसे प्रतीत होते हैं। कबीर के "सात समुद की मसि करौं, लेखनि सब बनराइ ....." इस दोहे के ही अनुरूप मंझनकृत निम्न दोहा द्रष्टव्य है :—

सात समुद जो होइ मसि, कागद सात अकास।
चहुँ जुग कहत न निघटै, प्रेमा विरह उदास॥

कबीरदास के एक अन्य दोहे "यह तो है घर प्रेम का खाला का घर नाहिं" के समान मधुमालती की यह पंक्ति द्रष्टव्य है :

प्रथमहिं सीस हाथ कै लेई, पाछे वोहि मारग पगु देई।

संस्कृत के एक श्लोक "मौक्तिकं न गजे गजे ....." का भावांतर मंझन की निम्न पंक्तियों में मिलता है:—

रतन कि सायर सायर, गजमानिक गज कोइ।
चंदन कै बन बन उपजै, बिरह कि तन तन होइ॥२३२॥

गीता में जिसे सात्विक सुख कहा गया है वह मंझन के शब्दों में :—

दुइ दुख बीच सुख है, निजु जानहु संसार।
जौ अति रैनि अंधेरी, तौ इंजोर भिनुसार॥

(ट) मधुमालती में प्रेम एवं विरह

(१) मधुमालती में 'प्रेम' तत्व

मंझन ने मधुमालती के अन्तर्गत 'प्रेम' के जिस स्वरूप का अंकन किया है वह अद्वितीय है। उसमें न किसी प्रकार का कलुष है और न आग्रह। वह तो शरीर की सृष्टि के ही पूर्व ब्रह्मा द्वारा उत्पन्न किया जा चुका था। प्रेम का महत्व यही है कि इसमें प्रेमी और प्रेमिका दो शरीर धारण करते हुए भी एक होते हैं—मानों प्रेम रूपी जल से सींची दो मिट्टियाँ हों, अथवा दो पनालियों में से होकर एक ही जल प्रवाहित हो रहा हो या एक ही दीपक दो स्थानों में प्रकाशमान हो। मंझन ने प्रेम की व्याख्या में अत्यन्त रहस्यवादी दृष्टिकोण अपनाया है। जब प्रथम बार राजकुमार और मधुमालती परस्पर मिलते हैं तो राजकुमार कहता है:—

मैं तैं सदा दुश्रौ सँग बासी, औ संतत एक देह नेवासी।
औ हम तुह तौ एक सरीरू, दुश्रौ माटी सानी एक नीरू।
एक बारि दुइ बहीप नारी, एक दीप दुइ घर उजियारी।
एक जीव दुइ घट संचारेउ, एक जन्म दुइ ठाँ औतारेउ। (अ० ११४)

प्रेमी और प्रेमिका के सम्बन्ध को कोई भी तोड़ नहीं सकता। उनमें तो शरीर और प्राण अथवा समुद्र और लहर जैसा सम्बन्ध होता है :—

तैं जो समुद लहरि मैं तोरी, तैं रवि मैं जग किरनि अँजोरी।
मोहि आपुन जै जानु निनारा, मैं सरीर तैं प्रान पिआरा।
मोहिं तोहिं को पारै बेगराई, एक जोति दुइ भाव देखाई।

यह प्रेम भाव सम्पूर्ण सृष्टि में समाया रहता है। यही शिव है और यही शक्ति है। यही रूप जल और स्थल में व्याप्त है :—

इहै रूप तौ अहै छपाना, इहै रूप सब सिस्टि समाना।
इहै रूप सकती औ सीऊ, इहै रूप त्रिभुवन कै जीऊ।
इहै रूप त्रिभुवन कै बेलसै, महि पताल अकास।

× × × (अ० ११६)

प्रेमी और प्रेमिका में एक दूसरे से बढ़कर प्रेम भाव समाया रहता है:—

जस जिव तुह प्रीतम मदमाता, मोर जीव तोहिं चौगुन राता।

मंझन ने जिस प्रेम की व्याख्या की है, वह अत्यन्त निष्कलुष है। यद्यपि

प्रेमी और प्रेमिका के परस्पर मिल जाने पर काम-वासना का उदय स्वाभाविक है किन्तु जब तक वह प्रकट रूप में लोक द्वारा मान्य न हो जाय, उसमें रंचमात्र भी कलुष लाना उचित नहीं। इसीलिये मधुमालती राजकुमार से कहती है कि क्षण भर के आनन्द के लिए माता-पिता को कलंकित करना ठीक नहीं :—

कहेसि कुँअर एक कर्म न कीजै, मात.पितहिं अकलंक न दीजै।
तिल एक सुख के कारन, जनि आपुहीं नसाउ।
तिरिअहिं थोरे अपकरम, जग अपकीरति पाउ ॥१२२॥

प्रेमी और प्रेमिका के लिये प्रेम कोई सामान्य खिलवाड़ नहीं रहता। वह तो धर्म-पथ है जिसमें 'सत' की मर्यादा स्थापित करनी पड़ती है। इसके निर्वाह के लिये वे 'बाचा' या प्रतिज्ञा करते हैं।

पाप पंथ चढ़ि जो सत राखा, सुरस अमीरस ते पै चाखा।
(अ० १२४.५)

प्रेम की प्रखरता के आगे प्रेमी राजपाट, यौवन, जीवन इन सबकी परवाह नहीं करता। उसका मोह दूर हो जाता है और वह अपना सिर तक अर्पित करने के लिये उद्यत रहता है :—

मंझन चढि कै प्रेम पंथ, करिअ न जिव कर लोभ।
प्रीतम काज जो जिउ घटै, सोइ दुओ जुग सोभ॥
× × ×
प्रथमहिं सीस हाथ कै लेई, पाछे वहि मारग पगु देई।

फिर भी उसके प्राण सरलता से निकल नहीं पाते क्योंकि वह प्रेम के तानों-बानों में ही उलझा रहता है। वह अपनी प्रेमिका के दर्शन कर लेना चाहता है:—

प्रेम वियोग न सहि सकौं, मरौं तौ मरै न जाइ।
दुइ दूभर मो हौं परी, दगधि न हियै बुताइ॥

वियोग के बाद जब संयोग की घड़ी आती है तो प्रेमी की दशा विचित्र हो जाती है। उसे यह विश्वास ही नहीं बँध पाता कि यह मिलन स्थायी होगा, फिर भी वह जिससे मिलने के लिए आतुर रहता है, उससे मिलने पर एकाकार हो जाता है:—

प्रान एक भौ एक जो देही, मिलते दूनौ प्रेम सहेली।
विरहे बिछुरे अहे जो ओऊ, सांते पिअत अमोरस दोऊ।
× × ×

अधर अधर उर उर सौं, मेरै रहे मुख सोइ।
देखि समुझ ना मन परै, दहु इहिं एक कि दोइ ॥

इस प्रकार से प्रेम की अग्नि से जो अपने शरीर को तपाता है, मृत्यु उसका कुछ नहीं कर सकती। वह अमर हो जाता है, क्योंकि प्रेम अमर है।

प्रेम की आगि सही जेइ आँचा, सो जग जनमि काल सौं बाँचा।

मंझन का यह प्रेम-वर्णन सूफियों की विशेषता है। जायसी ने भी प्रेमी और प्रेमिका के मिलन का ऐसा ही अनूठा वर्णन किया है :—

दुइ घट मिलि एकै होइ जाहीं, ऐस मिलन तउहूँ न अघाहीं।

× × ×

जेहि के हिए प्रेम रंग जामा, का तेहि नींद भूख बिश्रामा।

× × ×

प्रेम पंथ जो पहुँचै पारा, बहुरि न मिलै आइ एहि छारा।

कुतुबन ने भी "मृगावती" में प्रेम की नैसर्गिकता एवं मिलन के आनंद का वर्णन किया है :—

बिसमौ लाज हरख नहिं रहा, प्रेम आय चित चिंता गहा।

× × ×

प्रेम सुरा जिन अँचयेव, तिन्हैं कुछौ नहिं सुधि।

× × ×

मंझन ने प्रेम को कायिक व्यापार के रूप में नहीं स्वीकार किया। उनके लिये तो प्रेम धर्म का स्वरूप है जिसका पालन प्रेमियों को कठिन से कठिन अवस्था में भी करना चाहिए। इसीलिये राजकुमार और मधुमालती को अनेक बार मिलाकर, विलग करते हुए प्रेम का मूल्यांकन कराया है। यही नहीं, एक बार भाई या बहिन का भी सम्बन्ध स्थापित हो जाने पर प्रेमा और राजकुमार ने इस सम्बन्ध को अन्त तक निबाहा है। वे एक दूसरे के लिये सभी प्रकार के त्याग करने के लिये तत्पर रहते हैं।

(२) मधुमालती में विरह की अनुभूति

प्रेम-प्राप्ति का चरम है—तादात्म्य; किन्तु संयोग की घड़ियाँ अपरिमित नहीं होतीं। यदि ऐसा होता तो सृष्टि की प्रगति एकांगी होती। अतः संयोग के बाद वियोग या वियोग के बाद संयोग—यह क्रम चलता रहता है। जहाँ संयोग

आत्म-विभोरता एवं सुख देने वाला है, वहीं वियोग आत्मग्लानि, स्मरण एवं दुख का उत्प्रेरक है। जहाँ प्रेम की कल्पना मात्र हुई कि वियोग उसमें अन्तर्हित हुआ। चाहे प्रारम्भ में अभीष्ट पूर्ति के पूर्व यह दुख भोगना पड़े, चाहे बाद में, दोनों मे अन्तर केवल इतना है कि पहले दुख सह लेने पर संयोग-जन्य सुखानुभव के समक्ष पुराने दुख नगण्य जान पड़ते हैं। किन्तु, संयोग के पश्चात् विघटन की पूर्वकल्पना ही दहला देने वाली होती है। प्रेमी को फिर अपने इष्ट की प्राप्ति के लिये विकल रहना पड़ता है। परन्तु क्रम के वृत्त में संयोग-वियोग साथ-साथ एवं पास-पास घूमेंगे। संयोग दो वियोगों के बीच या वियोग दो संयोगों के बीच पड़ सकता है। यही सृष्टि का नियम भी है और इसीलिये सूफियों ने बड़े ही विनीत भाव से वियोगजन्य दुख या विरह को एक नैसर्गिक देन समझ कर उसे सहने का विधान-सा बना लिया। उनका विश्वास है कि विरह की ज्वाला को एक बार सह लेने पर आगे सुख ही सुख मिलेगा। उनकी यह भी धारणा है कि जिन्हें प्रेम-पंथ में वियोग या विरह नहीं हुआ, उनका जीवन अधूरा है। विरह-जन्य दुखों को वे ईश्वर-प्रदत्त समझते हैं, और विरह को 'राजा' की संज्ञा से विभूषित करते हैं। वे दूसरों की विरहावस्था पर वेदना एवं सद्भावना प्रकट करते हैं। कुतुबन, जायसी और मंझन तीनों ने समान रूप से विरह की व्यवस्था की है। 'मधुमालती' में मंझन के तत्संबंधी दृष्टिकोण का परिचय निम्न उद्धरणों से मिल जावेगा:—

विरह घाय जा एक न मारा, विरह खरग दुहुँ दिसि है धारा।
जहाँ भैउ विरहा मन राजा, तहाँ न रहै सुधि बुधि लाजा॥

विरहजन्य अग्नि इतनी प्रखर होती है कि वह अन्तरतम को भस्म कर देती है:—

जम की म्रितु खनक निरबाहै, यह रे बिरहा खिन खिन दाहै।

× × ×

पीर करेजे हिये दुख, बिरह दग्ध उत्पात।
दैथा कैंउ कर बियौं, यह दुख बिरह संताप॥

विरह का अनुभव विरही ही ठीक से कर सकता है:—

दुखिया सो दुख जानै, जेहि दुख होइ सरीर।
बिनु दुख क्यों कर जानै, दुख दाघे की पीर॥२१५॥

× × ×

सात समुंद जो होइ मसि, कागद सात अकास।
चहुँ जुग कहत न निघटै, पेमा बिरह उदास॥२२२॥

जिसके बिरह उपजता है, वह धन्य है। कोटि में से एक को ही विरह उत्पन्न होता है और विरह-दुख के पश्चात् सुख ही सुख हैं :—

जेहि जगत बिरह दुख भैऊ, त्रिभुवन केर राउ सो भैऊ।

× × ×

धन जोबन तेहि केरा भारी, जो जग भयौ बिरह भिखारी॥

× × ×

कोटिन्ह महँ बिरला जन कोई, जेहि सरीर बिरहा दुख होई।
सरग बिन्दु सब होहिं न मोती, सब घट बिरह देइ न मोती॥
बिरह दुक्ख दुख कहै न कोई, पाछे दुक्ख ताहि सुख होई।
जेहि जिव दैव बिरह दरसावै, दुख सुख तेहि तैसे मन भावै॥

× × ×

मूरख लोग न जानै ऐसी, जहाँ बिरह तहँ सिख बुधि कैसी।
बुधि बिरह की सरबरि पावै, बिरह पौन मिसु दिया बुतावै॥

× × ×

मंझन जो जग जन्मि कै, बिरह न कीन्हा चाउ।
सूने घर का पाहुना, ज्यों आवै त्यों जाय॥

कुतुबन ने 'मृगावती' में वियोग-जन्य दुख की इतनी कराल-कल्पना की है कि उसके पढ़ने से ही भीषण दुख का अनुभव होने लगता है। कुतुबन प्रेम के विरह पक्ष को और पैनी दृष्टि से परखने के आदी प्रतीत होते है :—

आगि कै औषध सब कोइ जाना, यह न को रे औषध कै माना।
और आगि जल सींचि बुझाई, यह न बुझाइ समुद लै जाई॥
समुदौ जरी गगन सब जरा, और बासुकी जर नाउँ बरा।
भावंता नहिं मेटियै, उठी जो नख सिख आगि।
बसुधा जरै न उबरै, आगि बिरह की लागि॥

जायसी ने भी बिरहाग्नि की प्रखरता का चित्र प्रस्तुत किया है :—

जग महँ कठिन खड्ग कै धारा, तेहि ते अधिक बिरह कै झारा।
बिरह के दगध कीन्ह तन भाठी, हाड़ जराय कीन्ह सब काठी॥

× × ×

पद्मावती तेहि जोग सजोवा, परी पेम बस गहे बियोगा।
नींद न परै रैनि जौं आवा, सेज केंवाच जानु कोइ लावा।
कलप समान रैनि तेहि बाढ़ी, तिल तिल भर जुग जुग बिमि बाढ़ी।

(ठ) मंझन के सन्देश

(१) मधुमालती के द्वारा मंझन ने भारतीय समाज की कतिपय ऐसी मूलभूत परम्पराओं की पुष्टि की है जिनकी ओर पाठकों का ध्यान बरबस आकृष्ट हो जाता है। मंझन के इस भारतीय दृष्टिकोण की जितनी भी सराहना की जाय वह थोड़ी ही है। वे इतने करुणावान थे कि जिस मधुमालती के आदर्श प्रेम को उन्होंने अंकित किया, उसे वे अपने सन्तसुलभ गुण—करुणा अथवा ममता के कारण मार नहीं पाये। उस समय समाज में 'सती-प्रथा' का प्रचलन था। कुतुबन और जायसी ने 'मृगावती' और 'पद्मावती' को जलाकर राख करके उसी में उनकी अमरता सिद्ध की किन्तु मंझन इस बात में अपने पूर्ववर्ती सूफियों से सर्वथा भिन्न दिखाई पड़ते है। उन्होंने मधुमालती को सती न होने देने का कारण भी दिया है।

उतपति जग जेती चलि आई, पुरुष मारि अब सती कराई।
मैं छोहन्ह यहि मार न पारेउँ, सहीं मरिहिं जो कलि औतारेउँ।

उनका विश्वास है कि कलियुग में जन्म लेने के कारण मधुमालती स्वयमेव मर जावेगी, इसीलिए स्नेहवश वे नहीं मार सके। मंझन का दृष्टिकोण मानवतावादी है। मनुष्यों में भी वे आदर्श की कामना करते हैं।

(२) अपने इस 'छोह' के कारण ही मंझन ने स्त्रियों के गुण-दूषण का भी पूरा वर्णन किया है। जब राजकुमार मधुमालती के विरह में तड़पता रहता है तो राजा का महथा आकर स्त्री-जाति की बुराइयाँ गिनाता है और यह कहता है कि उनके जाल में पड़ना वृथा है :—

त्रिआ जाति महा राकिसिनी, बनि पतिआहि ऊपर देखि बनी।
जो बिरचै तौ बिरहै जारै, जौ नहिं रचै तौ खन महँ मारै।
ऊपर निर्मल पूनिंव देही, भीतर स्याम अमावसि जेही ॥१५८॥

× × ×

बनि पतिआहि त्रिआ जग भली, भौंर पुरुष वह केतुकि कली।
बरबस पेम करै बरिआई, पै सब अपनी चाँड की ताईं ॥१५९॥

× × ×

त्रिया जगत भई नहिं काहू, तिरिया प्रेम केहु भई न लाहू। (१५७.४)

तुलसीदासजी ने भी नारी-जाति के दूषणों का खुलकर वर्णन किया है। किन्तु इन सब दूषणों के होने पर भी मंझन स्त्रियों को क्षम्य एवं पूज्य मानते हैं क्योंकि वे ही महापुरुषों की जननियाँ हैं। मंझन की इस सदाशयता के आगे

स्त्री-जाति पर दोष लगानेवाले लोग मूक बन जाते हैं। शायद ही किसी अन्य सूफी कवि अथवा अन्य हिन्दू कवि ने स्त्रियों के इस महान् गुण की ओर संकेत भी किया हो :—

त्रियहिं सबै अलच्छन, एक सुलच्छन सार।
महापुरुख जग माहीं, त्रियहीं ते औतार॥

यही नहीं, मंझन ने उन पुरुषों को, जो स्त्रियों के गुण-दोष देखते हैं और अपने को नहीं देखते, "महादुष्ट" कहकर सम्बोधित किया है और उनके शंकालु स्वभाव की भर्त्सना की है।

(३) कुमारिकाओं को प्रणय-व्यापार करने की छूट किसी भी काल में नहीं रही। यदि कोई कुमारी अपने माँ-बाप के रहते उनकी इच्छाओं के विरुद्ध किसी से अवैध प्रेम करने लगती तो उसे कुत्सा की दृष्टि से देखा जाता था। यही कारण है कि जब राजकुमार स्वप्न में मधुमालती से मिलता है तो वह उसे सम्भोग करने से वर्जित करती है और कहती है :—

सुनसि कुँअर तैं बात हमारी, धरम पंथ जो दैअ सँवारी।
जाके जीव धरम गा जागी, सो कस परै पाप की आगी।
कुल औ धरम दुऔ रखवारी, मात पितहिं दै जाय न गारी।
निमिख लागि पापी का होई, करिकै पाप धरम का खोई॥

(अ० १२४)

यद्यपि मधुमालती अपने हृदय से राजकुमार को प्यार करती है किन्तु जब प्रेमा राजकुमार का परिचय यह कह कर देती है कि वह जो तुम पर अनुरक्त है तो वह तिलमिला उठती है और प्रेमा को फटकारती हुई कहती है :—

कौन कुँवर का जानौं बाता, मोरे रूप कहवाँ वह राता।
देखैं वोइ कहँवा मोहिं पावा, औ मोर के वोह नाव सुनावा॥
पिता गिरिह मैं राजकुमारी, पर पुरखहिं मोहिं कैस चिन्हारी।
जौ अस मात-पिता सुनि पावहिं, मोहिं जिअत धै गढ़ा भरावहिं॥
जस अपजस तैं पेमा, कहा लगावसि मोहिं।
मोहिं लाहैं तोहिं लाहा, खत मोरे खत तोहिं॥२०२॥

× × ×

अजहुँ जननि कोरा मैं बारी, का जानौं पर पुर्खहिंआरी।
पुर्ख न जानौं कार कि सेतू, पर पुरखहिं मोहिं कैसन हेतू।
जस अपजस कोइ लाव न केही, भीति देखि कै करी उरेही॥ (अ०२०४)

तात्पर्य यह कि कुमारिकायें अपने प्रेम को गुप्त रखती हुई सभी प्रकार से कुल की रक्षा करती थीं। माताएँ भी नहीं चाहतीं कि अविवाहिता कन्यायें उनकी अनुमति के बिना किसी से किसी प्रकार का प्रेम-भाव करें। तभी तो मधुमालती की माँ चित्रसारी में राजकुमार और अपनी पुत्री को एक साथ देखकर आश्चर्यचकित हो जाती है और कुल-मर्यादा की रक्षा हेतु मधु-मालती को पक्षी बनाने के लिए बाध्य हो जाती है।

(४) वस्तुतः मंझन भारतीय नारी-वर्ग की इस मर्यादा के पोषक थे। उन्होंने वैधानिक विवाह को ही मान्यता प्रदान की है। वे मधुमालती और राजकुमार तथा प्रेमा और ताराचंद का विवाह विधि-पूर्वक सम्पन्न कराते हैं। साथ ही कन्यादान, दहेज, गौना, विदा इन समस्त रीतियों का यथाविधि उल्लेख करते हैं। आज भी यदि किसी की कन्या बड़ी हो जाती है, और कन्यादान नहीं हो पाता तो लोग उसे हेय दृष्टि से देखते हैं :—

सबन्ह कहा धी बैस जो होई, पिता ग्रिह भल बोल न कोई।
आठ बरिस लहि दुहिता बारी, नवएँ रहै पिता कहँ गारी॥

कन्यादान के पश्चात् ही किसी प्रकार का सम्भोग विहित माना जाता है:—

जौं लगि पिता न संकल्पै, करै न कन्यादान।
तौ लगि होइ न सुरत रस, और सबै रस मान॥

(५) मंझन ने अपनी मानवीय दृष्टि एवं स्त्रियों के प्रति आदर भाव के कारण ही मधुमालती की बिदाई के समय का जो विक्षुब्ध वातावरण अंकित किया है वह सर्वथा भारतीय है। जिस प्रकार शकुन्तला की विदाई के समयी कण्व ऋषि के आश्रम का कण-कण परितप्त एवं व्याकुल हो उठा था, ठीक उस प्रकार से मधुमालती की बिदाई के समय समस्त परिजन एवं पुरजन क्षुब्ध हो उठता है। मधुमालती को अपने घर का कोना-कोना प्रिय लगने लगता है। वह क्षण भर के लिये भी विलग नहीं होना चाहती। किन्तु यह हिन्दू-समाज की प्रथा है कि विवाहित होने पर लड़कियों को अपने स्वजनों का परित्याग करना ही पड़ता है :—

सुना सखीं मधुमालती चली, सुनतै मया मोह जिउ जरी।
जो जैसहिं सो तैसहिं आई, रोइ सखी सभ अंकम लाई॥
रोवैं सभ गले लाइ सहेली, सौंरि सँग साथ जौ खेली। (अ० ५०९)।

× × ×

देखि कुँवरि कै कुटुंब बिछोवा, पर आपन जे गहबरि रोवा।
जेइ देखा सो हिये कर रोवा, नैन सलिल रकत तन धोवा।
पाथर केर हिया जेहि केरा, आँसु न रहा नैन तेहि बेरा ॥५१३॥

× × ×

समदै सब परिजन परिवारा, समदै फिरि फिरि पौरि कँवारा।
समदै पालक सेज तुराई, समदै राजमंदिल गीव लाई ॥५१६॥

× × ×

हिन्दू-समाज में लड़कियाँ बिदा होते समय माँ-बाप के पैर छूती हैं। उस समय जितनी करुणा उमड़ती है वह अवर्णनीय होती है। माँ-बाप के हाथ में तो लड़की का पालन-पोषण रहता है, उसके बाद अपने कर्म के अनुसार ही लड़की सुख या दुख का भोग करती है। वे तो उसके अखण्ड सुहाग की कामना ही कर सकते हैं और पति-सेवा की शिक्षा देते हैं :—

कुँवरि जननि पाँ लागी धाई, रानी गीव उठाइ कै लाई।
(अ०५१६.१)

× × ×

बहुरि पिता पाँ लागी बारी, राय हेतु सौं अंकम सारी।
(अ० ५२०.१)

× × ×

जौ लगि धरती गंग जल, औ ससि सूर अपार।
तौ लगि राज सोहाग तुअ, राखौ सिरजनहार ॥ ५१६ ॥

× × ×

साईं सेवा जीवन राखेहु, पूछत बात मधुर सौं भाखेहु।

× × ×

(६) काल की करालता अथवा कर्म या भाग्य पर भी मंझन को अटूट विश्वास था। भारत का बच्चा-बच्चा भाग्य एवं कर्म-रेखा पर विश्वास करता है। मंझन का कथन है कि कर्म किसी के वश की बात नहीं। जो ब्रह्मा ने छठी की रात में लिख दिया है, वही होगा :—

कर्म न होइ माय बाप के हाथे, भूजहिं लिखा दैअ जो माथे।

× × ×

तेहि पाछे जो विधि लिखा, छठी कि राति लिलार।
सो भूँजिहि गै आपन, भल मंद सिरजनहार ॥५१८॥

जन्मौती खति लाभ दुख, जो रे परा लिलार।
तेहि त्रिभुअन जौ लागे, लिखा को मेटै पार ॥६०॥

यही नहीं, सूफी होने पर भी मंझन ने कथा के नायकों एवं नायिकाओं को हिन्दू-वृत्तियों का ही सहारा दिया है। जहाँ कहीं भी, नायक या नायिका विपत्तिग्रस्त हुए हैं, मंझन ने उनके मुखों से ईश्वर के उन्हीं रूपों का ही स्मरण कराया है जो पात्रों के अनुकूल हैं। यही नहीं, शिष्टाचार की समस्त बातें भी पात्रों के अनुकूल अंकित हुई हैं। मुरारी (२७७.३), दयाला, हरि, ब्रह्मा, रुद्र आदि के स्मरण या उनकी शपथ इसके प्रमाण है। यहाँ तक कि स्वयं मंझन ने अपने प्रसंग में भी एक स्थान पर लिखा है :—

हरि हरि कहाँ गयेउँ का कहेऊँ।

यह मंझन की उदारता है कि सूफी होते हुये भी उन्होंने हिन्दू-प्रतीकों का ही व्यवहार किया। रचना के प्रारम्भ में वह 'एकोंकार' की बन्दना करने के पश्चात् ही मुहम्मद या पीरों के नाम लेता है।

(७) मंझन पर भारतीय रहस्यवाद की गहरी छाप थी या यों कहें कि इस सम्बन्ध में वे अन्य सूफियों से सर्वथा भिन्न थे। वे ईश्वर की अद्वैतता एवं उसकी सर्वव्याप्ति में विश्वास करते थे। वे भारतीय योग के भी उपासक थे। समाधि में उनका विश्वास था।

तोर जोति सकल परगासा, त्रिहुलोक पाताल अकासा।
सकल सिस्टि मों परगट तहीं, सरबस तैं दोसर जो नहीं।
जो कोइ खोव सोइ पै खोवा, सो का खोव जो न कछु खोवा।
कौन सो ठाउँ जहाँ तैं नाहीं, तीनि भुवन उजियार।
निरखि देखुँ तैं सरबस, पुरे सब ठां तोर बेवहार॥

× × ×

तन सौं उरध लेहि गहि साँसा, अग्नि डोल जो डोल बतासा।
झरकै पौन अग्नि उदगरई, तौ रे कलंक कया कर जरई।
जौ लगि कस्ट गहे रह सोई, तौ लगि सरब गात धुनि होई।
औ तेही धुनि मो कर वासा, ताहि जोति भीतर कबिलासा। (अ०३१)

× × ×

परिहरि सुद्धि बुद्धि जे ग्याना, कया बेवरजित लाये ध्याना।
जौ समाधि लौ लागै तहाँ, आपु अपान न पावै जहाँ।

× × ×

सहज अलोलै लाइ कै, निगम गोफ रह सुति।
जहाँ न तैं औ कोइ नहिं, अरु एकौ करतूति ॥३२॥

(ङ) मधुमालती का संक्षिप्त भाषावैज्ञानिक अध्ययन

पहले यह कहा जा चुका है कि मधुमालती की भाषा बोलचाल प्रयुक्त होने वाली अवधी है जो जौनपुर के आसपास बोली जाती रही होगी। यहाँ पर अब हम मधुमालती के स्वीकृत पाठ के अनुसार उसका भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत करेंगे जिसका मुख्य उद्देश्य संज्ञा, सर्वनाम एवं क्रिया-रूपों का विशेष परिचय प्रदान करना है। ऐसे अध्ययन के फलस्वरूप प्राप्त परिणामों से हम अन्य पूर्ववर्ती एवं परवर्ती सूफी काव्यों के साथ मधुमालती की तुलना कर सकते हैं। साथ ही अवधी के तत्कालीन स्वरूप को जानने में भी सुविधा हो सकती है।

(१) **व्यंजन एवं उच्चारण**—मधुमालती में शब्दों के साथ ऋ, लृ, श, ष, ञ ये पाँच व्यंजन प्रयुक्त हुए नहीं मिलते। ण का प्रयोग केवल एक स्थान पर हुआ है। क्ष और त्र जो कि संयुक्त व्यंजन हैं, इसी रूप में मिलते हैं।

(२) **कारक**—संज्ञा एवं सर्वनाम शब्दों के विविध रूपों को कारक चिह्नों द्वारा व्यक्त किया जाता है। मधुमालती में कारक दो प्रकार से व्यक्त हुए हैं :—

(क) शब्दों के साथ विभक्तियों के रूप में तथा

(ख) शब्दों के साथ परसर्गों के रूप में।

(क) विभक्तियाँ—संज्ञा एवं सर्वनाम शब्दों के साथ विभक्तियों का व्यवहार न केवल ब्रजभाषा की ही विशेषता है वरन् यह विशेषता अवधी भाषा में भी पाई जाती है। ये विभक्तियाँ इन शब्दों के एकवचन तथा बहुवचन दोनों ही रूपों के साथ-साथ जुड़ी हुई मिलती हैं। ये कर्ता, करण, सम्प्रदान, सम्बन्ध, अधिकरण एवं सम्बोधन कारक-चिह्नों के लिए विशेष रूप से व्यवहृत मिलती हैं।

(ख) परसर्ग तथा परसर्गीय पदावली—खड़ी बोली में विभक्तियों का अभाव होने के कारण उसमें विभिन्न कारक-चिह्नों के लिए परसर्गों का व्यवहार किया जाता है। अवधी भाषा में भी ऐसे अनेक परसर्ग पाये जाते हैं जो संज्ञा या सर्वनाम के पश्चात् आये हैं। इन परसर्गों द्वारा कर्ता कारक के अति-

रिक्त अन्य सभी कारकों का द्योतन हुआ है। कुछ परसर्ग क्रियाविशेषण अथवा अव्यय रूपों में भी प्रयुक्त मिलते हैं। इन परसर्गों म कहीं-कहीं स्त्रीलिंग और पुल्लिग रूप पृथक-पृथक है।

(३) संज्ञा—मधुमालती में आये हुए संज्ञा शब्द दोनों ही लिंगों (स्त्रीलिंग तथा पुल्लिग) और दोनों वचनों (एकवचन तथा बहुवचन) में प्रयुक्त हुए हैं। संज्ञा शब्दों के बहुवचन उन शब्दों के पुल्लिग एकवचन रूप में–"अन्ह", प्रत्यय और स्त्रीलिंग एकवचन में "इन्ह" प्रत्यय लगाकर निष्पन्न हुये हैं। यथा :—

नैनन्ह (१०४.६) स्रवनन्ह (१०४.७) चर्नन्ह (१०८.२)।
बैदन्ह (१५१.६)।
अछरिन्ह (१३४.१), बरुनिन्ह (४५८.४)।

कतिपय संज्ञा शब्दों (आकारान्त तथा ईकारान्त) के बहुवचन निम्न रूपों में उपलब्ध होते हैं :—

जनां (५२७.२) जनीं (२०६.४)।
अबलां (९०.२), हयोरीं (९०.४)।
'लहर' का बहुवचन रूप लहरैं (१८२.१) प्राप्त होता है।

संज्ञा शब्दों के कारकीय रूप विभक्तियों एवं परसर्गों द्वारा निष्पन्न हुए हैं। नीचे एक या अधिक उदाहरण देकर इन्हें समझाने का प्रयत्न किया गया है। शब्दों के आगे अर्द्धाली संख्या दे दी गई है।

(अ) विभक्तियों के साथ संज्ञा शब्द

(१) कर्ता कारक : विभक्ति –ऐ (–अहिं) एक वचन।
–अन्ह बहुबचन।

उदाहरण : राजै (४४.१, ५१.५), तपै (४४.२), पेमहिं (४२०.६) लोगन्ह (४२.१)।

(२) कर्म कारक : विभक्ति –हिं।

उदाहरण : कुँअरहिं (५७.१), कुँअरिहिं, पुर्खहिं (१२०.६), सुतहिं (१५१.५) मधुरहिं (३४१.४), पितहिं (१२२.५)।

नोट : भाटन्ह (५१.३) तथा भाटिनि (५१.३) इसके अपवाद हैं।

(३) करण कारक : विभक्ति–न्ह।

उदाहरण : लाजन्ह (४५०.५), रिसन्ह (२६६.१),
छोहन्ह (५४८.२)।

(४) **सम्प्रदान कारक** : विभक्ति –हिं।
उदाहरण : कुँअरिहिं (१२८.४)।

(५) **अपादान कारक** : ×

(६) **सम्बन्ध कारक** : विभक्ति—हिं (इसके अतिरिक्त-आँ,–न्ह भी)
उदाहरण : मातहिं (३६१.५), कुँअरहिं (६७.५)
पेमां (३७१.४, ४२०.३), अमनैकन्ह (बहुवचन)
(५१.२)।

(७) **अधिकरण कारक** : विभक्ति –ए,–हिं,-न्हि (बहुवचन के साथ),–इ,-आं
उदाहरण : माथे (४७.६), बिरहे (.१४१.१), करेजे (२११.६)
हिये (६.७,२६.२), ससुरे (४६६.६) गरे (३२१.७), मनहिं
(२३.६), मनैं (१७६.७), नगरहिं (४४.५), जियहिं
(१००.६), नैनन्हि (१०१.७, १०२.४, ११७.२), कानन्हि
(८८.६), फूलन्ह (११७.३), अधरन्ह (१२६.६),
आगि (२४२.२), राति (४६.१), ठाईं (२.५)
ठाऊँ (२०८.१), कोरां (३०४.३)।

नोट : बिसहँ (८१.१) में भी।

(८) **सम्बोधन कारक** : कुँअर (२०६.४), पेमां (२४३.१), रानि (३६३.३),
महँथ (१६३.६), पूत (१६७.३), धाइ (१४६.५),
धाई (१४६.४, १४७.२)।

(आ) संज्ञा के साथ परसर्गों का प्रयोग

(१) **कर्ता कारक** ×

(२) **कर्मकारक : कहँ, को, के,** :
बिदेस कहँ (३७६.६), कुंअर कहँ (३६४.६,३६६.४) पिता
कहँ (३६७.५)।
पुहुमि को (४६६.१)
पेमा के (४४०.७), हरि के (३६६.२)।

(३) **करण कारक : हुँते, सौं, सैं, सन**
बचन हुँते (२४.५), बरसौ (७६.१), बरुनिन्ह (४५८.४)
आगि सैं (१७१.५)

मुख सन (४५०.२)

(४) सम्प्रदान कारक : कहँ, को, ताईं, हेत, लगि, कारन, काज

उदाहरण :-

रानी कहँ (२८६.२), राजा कहँ (४४.३), सुत ही कहँ (५६.२), पेमा को (४०२.७) धिय को (५०३.२)।

(५) अपादान कारक : सेती, ते, तैं, सैं, सों, से, हुँते, हुंती (स्त्री०)

उदाहरण : राकस सेती (२५६.६), चित सेती (२७७.२)

भुइँ ते (२५.३)

सिर सौं (५८.६), ठाँ सों (१३५.२)

घर से (२०४.५), रोम रोम से (३३४.७)

सरग हुँते (७५.७)।

(६) सम्बन्ध कारक : क, का, की, के, कै, कौ, कर, केर, केरि (स्त्री०)

उदाहरण :

सिस्टि क (७.५)

गरह का (४८.५)

तार की (३६.२), पाँव की (७.७), दुख की (११२.३)

मन के (१७.१)

करम कै (१६.५)

अहार कर (४.४), सुरहिनि कर (६५.५)

त्रिभुवन केर (२६.५)

मधुमालति केरि (२६१.५)।

(७) अधिकरण कारक : महँ, महि माँह, माहीं, माहे, मों, पै, पर, अन्तर, माँझ इत्यादि।

उदाहरण :

अधरन्ह महँ (१४५.४), कबि महँ (३७.७)

जिव महि (१५.५)

हिय माँह (२३.६)

जग माहीं (८५.७)

जिव माहें (४२६.६)

आँखिन्ह मों (१५४.४), जग मों (१०.४)

जग पर (११.७), नैनन्हि पर (१३३.७)

परग परग पै (४१८.६)

नैन माँझ (६२.७)।

नोट:—१. अधिकरण कारक में विभक्ति और परसर्ग का साथ-साथ प्रयोग भी मिलता है। उदाहरण :—

हिये माहँ (३२५.६)

२. मयंकम (८४.२) तथा अंकम (३९६.५) जैसे प्रयोगों में "महँ" का संक्षिप्त रूप "म" ही प्रयुक्त हुआ प्रतीत होता है।

(८) सम्बोधन कारक : हे, अरे, रे

उदाहरण : हे सखी (४०३.७), सखि हे (४०४.७),
हे वरनारी (४२६.५)
अरे (२३.१)
रे (अनेक स्थलों पर)।

(४) सर्वनाम : मधुमालती में प्रयुक्त सर्वनामों में संज्ञा शब्दों की ही भाँति वचन तथा कारक पाये जाते हैं। इनका लिंग अधिकांशतः क्रिया द्वारा जाना जाता है किन्तु जहाँ पुरुषवाचक सर्वनाम के सम्बन्ध कारक के रूप विशेषण की भाँति प्रयुक्त हुए हैं, उनके लिंग तथा वचन विशेष्य के अनुसार हैं। सर्वनामों को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है :—

(अ) पुरुषवाचक सर्वनाम : इसके अन्तर्गत तीन पुरुष मिलते हैं :—

(क) उत्तम पुरुष (ख) मध्यम पुरुष तथा (ग) अन्य पुरुष।

(क) उत्तम पुरुष : मैं, मइँ (२६१.२ ३२.२) तथा हौं (२०७.५,३११.७)

ये तीन रूप उपलब्ध हैं। अपभ्रंश में हउँ (हेमचन्द्र ४।३३८) और मइँ (हेम० ४।३३०) ये रूप उपलब्ध हैं। हउँ से ही हौं तथा मइँ से मैं विकसित हुए हैं।[३९]

बलाघात के कारण महीं (१०७.४,२२३.५) तथा महूँ (५२५.१) रूप प्राप्त हैं। ये मैं ही तथा मैं हूँ के संक्षिप्त रूप हैं।

बहुवचन में 'हम' प्रयुक्त हुआ है।

इन रूपों के अतिरिक्त विभक्तियों तथा परसर्गों के साथ निम्न रूप प्राप्त होते हैं :—

---

३९. सूर पूर्व ब्रजभाषा और उसका साहित्य : डा० शिवप्रसाद सिंह : हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी, (१९५८), पृ० २४९।

	विभक्ति सहित		परसर्ग के साथ	
	(ए० ब०)	(ब० ब०)		
कर्म कारक	मोहिं (३९.१) मोहीं (९८.५)	हमहिं ४२.३)	मो कहँ (४०८.६) (४८१.७)	हमकौं (३९८.७)
	नोट :–बिना विभक्ति अथवा परसर्ग के		हम (२०७.५)	
करण कारक	×		×	
सम्प्रदान कारक	×	×	मोहिं लगि मोसौ(११९.४) मोसैं (१९१.६) मोतैं (३०५.४)	हन लागी (३२४.१) हम सेती ३२९.१)
अपादान कारक	×		×	×
सम्बन्ध कारक	(१) मम (२५८.७,मम३९९.७) (२) मो (३३२.६) (३) मोर } पुल्लिग (४) मोरा } (५) मोरे (६) मोरी (स्त्रीलिंग)	हमरे हमारे (२५२.७)		
	[नोट : बिना विभक्ति के हम (२५१.४)]			
अधिकरण कारक	मोरे (१२०.२)	×	मो पहँ (३७८.३) मोहिं मों (११९.६) (नोट : यहाँ पर विभक्ति तथा परसर्ग दोनों साथ साथ प्रयुक्त हुए हैं)	

(ख) मध्यम पुरुष : तू, तैं एकवचन कर्ता कारक के रूप हैं जब कि तुह (२९.५,३७.५) और तुम (१६५.४) बहुवचन रूप हैं। ये रूप संस्कृत के त्वम् के अनुरूप हैं।

बलाघात के द्वारा एकवचन में तहीं (३०.४) तथा बहुवचन में तुँहहु

तेहि कँसे कै सपन कहाई, सौतुख सभै भाव जेहि पाई।
सौतुख देखेउँ सेज सँवारी, औ सौतुख मुँदरी कर बारी।
औ अधरन्ह महँ काजर लीका, औ सौतुख आखिन्ह मो पीका।
औ उर हार चीन्ह जौ देखौं, सौतुख सबै जो भाव बिसेखौं।

बिरह आगि सुनि धाई, मो तन लागी आइ।
की मधुमालति मिलि बुझै, की मोहिं मुएँ बुझाइ ॥१४५॥

सुन धाई दुख बात हमारी, तोसौं मैं सब कहौं उधारी।
प्रान गयेउ परिहरि मम देहा, कया बाजु जो मरन सँदेहा[1]।
दुख की बात कहै नहिं पारौ, जिउ घट होइ तौ कहत सँभारौं।
मधुमालति जिउ लीन्ह अछोरी, धाई कया बाजु जिव मोरी।
प्रान बिना भइ कया हमारी, जिव लै गई सो प्रान पिआरी।

भावंता से धाइ सुनु, मति जग बिछुरै कोइ।
सुजन जन खति जानसि, बरु जिव खति सब[2] होइ ॥१४६॥

कत मैं देखी नैन सो बाला, जेहि बस परा बिरह कै जाला।
हरख अनंद रहस गा धाई, जेहि जिअ पेम समाना आई।
जिउ पतंग घट अहै जो मोरा, जरा जाइ सो पेम अंजोरा।
पेम बनिज जो जगत सुठानी, लाभ न रहा मूल भा हानी।
जग उपखान जो कहिअत आहा, धन खोये बौराइ जोलाहा।

धाई हर्ख अनंद[1] गौ, औ रहस अभिमान।
मधुमालति कँ बिरह दुख, मोहिं लै[2] रहा निदान ॥१४७॥

पेम आगि[1] जो जिउ उदगरई, प्रीतम राखि और सब जरई।
पेम दुक्ख सब दुख सौं भारी, तिल तिल मरन सहस देवहारी।
प्रान जात बरु छांड सरीरा, बिधि कत सिरै पेम की पीरा।
राज गर्ब धन जीवन गैऊ, जब सौं जीव बिसँभर[2] भैऊ।
चढ़ा पेम पंथ दुर्गम भारी, कँ जिउ जाइ कँ मिलै सो बारी।

---

[१४५] १ सभै एक० ।
[१४६] १ सनेह एक० । २ × एक ।
[१४७] १ अनेग एक० । २ जिउ रा० ।

धाई पेम समुंद महँ, देखि दौरि धंस लेउँ।
कै मानिक लै उबरौं[3], कै वोह पंथ जिउ देउँ ॥१४८॥

बिरह कठिन कोइ जान न पीरा, कै बिधि जान कै जान सरीरा।
राज सुक्ख बिखै परिहरेऊँ, बिरह दुक्ख जे अंम्रित भरेऊँ।
अब ओही मारग जिउ लावौं, पेम प्रीति लै सिर पहुँचावौं।
कै वोहि पंथ मोर जिउ जाइहि, कै बिधि प्रीतम आनि मिलाइहि।
धाइ केतिक दुख सहबे[1] मोरा, बात बड़ी जग जीवन थोरा।

धाई सो बात पिरम की, मोंहि मुख कहै न जाइ।
जौ मैं सहस जीभ सौं बकतौं, चहुँ जुग कहि न सिराइ ॥१४९॥

उगा सूर जग भा अँजोरा, उठा कुंवर बिरहे झिझकोरा।
चेत हरा[1] जिउ गा बौराई, कया नगर भै बिरह दोहाई।
बिरह निसान चहूँ जुग बाजा, जिउ परजा बिरहा तन राजा।
चढ़ा पेम पंथ अंग न मोरेउँ, झंगा फारि केस सिर तोरेउँ।
बिरह[1] दुक्ख[2] दुर्गम न संभारेसि, उठतै आपु आपन दै मारेसि।

लोग कुटुंब सब धाये, राजा ग्रिह भा रोर।
माय सुना कौंलादेई, व्याकुल फारु पटोर ॥१५०॥

नगर देस माँ परिगा रोरू, राजमंदिल कछु उठा अंदोरू।
बैद सयान गुनी जन आये, मात पिता जन परिजन धाए।
कहै राउ मैं धन गुन त्यागा, जीउ मोर एहिके जिउ लागा।
अर्थ दर्ब जत लागै लावहु, कुंअर क जिउ कैसेहु पलटावहु[1]।
कै उपकार[2] सुतहि पलटावहु, मोर जिउ लाग तौ लाइ जिआवहु।

बैदन्ह आइ नाटिका पकरी, बूझि बिचारा पीर।
चाँद सूर्ज दुइ निर्मल, दोख[3] न कुंअर सरीर ॥१५१॥

फिरि फिरि बैद नाटिका गहई, बेदन बिरह बैद का कहई।
बहु देखा करि कै जो उपाई, कुंअर सरीर न बेदन पाई।

---

[१४८] १ प्रीति एक० । २ बिरहावस भा० । ३ निकरौं रा० ।
[१४९] १ सुनिहसि ।
[१५०] १ रहा एक० । २ चढ़ा पेम एक० (पुनरुक्ति) ।
[१५१] १ बहुरावहु रा० । २ प्रकार एक० । ३ औगुन भा० ।

उठि कै बैद एक अस कहा, बिरह भाव कुछ[१] जानित अहा।
कहा कुंअर लोयेन सर मारा, बेदन सो नहिं काज हमारा।
जौ किछु बेदन होइ तौ पाई, कहेसि चलौ तौ राउ जनाई।
उठि निरास भै बहुरे, पंडित गुनी सयान।
कुअरहिं पीर पिरम की, औखध कोउ न जान ॥१५२॥

---

[१५२] १ तौ एक०।

महथा खंड

राज क महथ एक अहा[1] सयाना, गुन निधान[2] चहुँ खंड बखाना।
वोइ सरबरि कोइ पार न पावै, गुननिधान जगु नाम कहावै।
गुन सो नाउ चहूँ खंड बाजा, कलि सहदेव कही तौ छाजा।
महा सुबुद्धि चतुरदस माहीं, जानै जीव क समस्या जाही[3]।
औ मनि मन्त्र बहुत तौ जानै, एक मूरि गुन सहस बखानै।

सुनेसि कुंअर कै औनुस, आय बिचारेसि पीर।
कहेसि नाटिका गहि कै, दोख न कुंअर सरीर ॥१५३॥

कै देखेसि बहु भाँति विचारा, कफ पित बात न अहै बिकारा[1]।
कहेसि ज्ञान जौ बेदना होई, नारी मांह रहै नहिं गोई।
आठौं आँग देखि किछु नाहीं, खन खन नैन झाँपि क्यौं जाहीं।
चाँद सुर्ज निरदोख अकासा, उठै ऊर्ध केहि कारन साँसा।
औ लोयेन नहिं पलक पराहीं, बिरह भाव यह सब जग माहीं[2]।

ढरै नीर दोइ लोयेन, चित नहिं चेत संभार।
बिरह खरग कर घायल, किछु नाहीं उपचार ॥१५४॥

पुनि सन्मुख भै पूछै बाता, कुंअर तोर जिउ कासौं राता।
कहु तोर जीउ केइँ हरि लियेऊ, पेम अमी तैं कहवाँ पियेऊ।
जौ मो सौं सत बकसति बाता, मेरवौं ताहि जाहि हहिं राता।
सरग देव कन्या जौ होई, मंत्र सकति कै[1] मेरवौं सोई।
कुंअर जीउ जै[2] होइ निरासा, त्रिभुअन धँस लै पुरवौं आसा।

कहसि बात निज मो सौं, केहि जिउ लागा तोर।
मैं ब्रिद्या गुन सकति सौं, मेरवौं चाँद चकोर ॥१५५॥

जौ येह तीनि लोक महँ होई, मैं तोहि आनि मेरावौं सोई।

---

[१५३] १ है एक०। २ विद्या। ३ गहे एक०।
[१५४] १ सँचारा। २ बिरह बाँझु एहि औगुन नाहीं रा०।
[१५५] १ तें रा०। २ जनि रा०।

चढ़ि अकास ससि[1] अंब्रित गारौं, सरग अपछरा मंत्र उतारौं।
मंत्र सकति सौं गा बहुरावौं, कहहु तौ मुआ जिआइ देखावौं।
सुर नर नाग लोक कर भेऊ, कहौं सबै जो पूछत केऊ।
सेस इन्द्र कर[2] सकति बोलावौं, कहहु तौ मेरु सुमेरु डोलावौं।

कहु मौ सौं जनि गोवसि, कौन पीर तोरे जीअ।
कै रे सहज किछु उपजा, कै काहूँ किछु कीअ ॥१५६॥

महँथै बात कही रस भरी, कुंअर जीउ आये गहबरी।
अपने दुख[1] दुखिया जे पायेसि, सपनें[2] कथा जो बकतिं[3] सुनायेसि।
कहै कुंवर जग जीव पदारथ, तिरिआ लागि का खोवसि अकारथ।
तिरिआ जगत भई नहिं काहू, तिरिआ पेम केहु भई न लाहू।
तिरिआ पेम जो जीवन लाये, सेंवर सुआ तैस फल पाये।

तिरिआ आपन कै कै, जग मति जानै कोइ।
जौ जौ अंब्रित सींचियै, निमकी मधुरी होइ[4] ॥१५७॥

भल जौ होत त्रिया बेवहारू, तुरकी भाखा कही न मारू।
काहु न सका त्रिया जग साधी, तिरिया औखध रूप बिआधी।
तिरिया जाति महा राकसिनी, जानि पतिआहि उपर देखि बनी।
जौ बिरचै तौ बिरहे जारै, जौ नहिं रचै तौ खन महँ मारै।
ऊपर निर्मल पूनिव देही, भीतर स्याम अमावसि जेही.

तिरिया काँटा केतुकी, भौंर वोहट हुति बार।
कपट रूप देखु कै भूलहिं[1], होइहै अंत बिकार ॥१५८॥

दिस्टि परत मन चित थरहरई, कया हानि तेहि पुर्ख कि करई।
जबहीं सुरति होइ निजु जानां, कया मूल तन भखै परानां।
जनि पतिआहि त्रिया जग भली, भौंर पुरुख वह केतुकि कली।
आपन सुख जहँवा[1] लगि पावै, अधिक त्रिआ पुर्खहिं मन लावै।

---

[१५६] १ जे एक०। २ गुन रा०।

[१५७] १ × एक०। २ सुहिन भा०। ३ कहि एक०।
४ जनम जौ अंब्रित सींचहिं नींब कि मधुरस होइ।

[१५८] १ प्रगट सरूप देख जनि भूलहि।

बरबस पेम करै बरिआईं, पै सब अपनी चांड कि ताईं।
चहुं जुग त्रिया न आपनि, समुझि देखु मन ग्यान।
तिरिआ पेम लगि जनि त्रिया, नाससि कुंवर अपान ॥१५९॥

जिय दै[1] जनि दुख लेहु अपारा, जनि दुख देखसि राजकुमारा।
तिरिआ पेम त्रिया संसारा, तिरिआ ताकै मंद बेवहारा।
परिहरि कुंअर त्रिआ औसेरी, त्रिआ जगत भई केहि केरी।
बायें अंग त्रिआ औतारू, संतति बायें जानु कुमारू।
चौथें[2] ग्रंथ पुनि बावाँ कहई, मूर्ख[3] होइ सो दाहिन चहई।
तिरिअहिं सबै अलच्छन, एक सुलच्छन सार।
महापुर्ख कौ जग महँ, तिरिअहिं तें औतार ॥१६०॥

अनख बचन सुनि रहा न गैऊ, कुंअर जीउ बिस्मै किछु भैऊ।
ए महथा तैं कलि सहदेऊ, कहतेव और कहत जौ केऊ।
पेम पीर जेहि जीउ समाना, कहत भले सो वात अयाना।
तोहि[1] कहँ अस केसे कहि आऊ, जानै तीनि भुअन कर भाऊ।
मैं अपान सब बैसा खोई, सिख बुधि सुनौ जौ रे जिउ होई।
पेम पंथ सुनु महँथा, मैं बैठा जिउ खोइ।
सुनौं सिक्ख तौ तौरी, जौं घट मो जिउ होइ ॥१६१॥

बैठ महँथ सुन बात हमारी, पंडित भै का करहु गँवारी।
जीउ भैंउ गै परबस मोरा, दहु कहु कहा सुनौं कस तोरा।
जिउ अरु कया केर चित राजा, जहाँ गैउ साथ सब काजा।
चित गयंद गौ फेरि को आना, ग्यानहु केर न अंकुस माना।
चित राजा कहँ रहै लोभाई, नैन सैन रसना सँग जाई।
तैं सब गुन सापूरन, देखु बिबेक बिचारि।
खाट तुरंग कि चित मिथ्या, कर सौं गौ करुआरि ॥१६२॥

---

[१५९] १ जौ वह एक०।
[१६०] १ तै एक०। २ औ। ३ पुर्ख एक०।
[१६१] १ एहि एक०।
[१६२] यह मा० रा० प्रति में नहीं है।

तोहि जिअ पेम न उपजा आई, का जानसि दुख बात पराई।
तैं सुजान अति चतुर सुजाना, जानि बूझि का होहु अयाना।
बिरह आगि महँ कनक सोहागा, तोहिं तन आँच धूंअ नहिं लागा।
कया भस्म भै झोल उड़ानी, कौन सुनै तोरि सीख कहानी।
गये नाग का धरुनी[1] ठठावसि, जानि बूझि कत मोहिं बौरावसि।

उठहु महँथ पा लागौं, मैं तौ चेर तोहार।
जानि बूझि तैं बरबस, गांठी बांधि अंगार[2] ॥१६३॥

कठिन बिरह दुख जान न कोई, बिरह बिथा दहुँ कैसनि होई।
जो आवै सो कहै सोहाती, अधिकौ उठै बिरह तन छाती।
जेहिं जिय आइ समानेउ[1] कोई, प्रान साथ पै निसरै सोई।
मूरख लोग न जानै ऐसी, जहाँ बिरह तहँ सिख बुधि कैसी।
बुधि कि बिरह की सरबरि पावै, बिरह पौन मिसु[2] दिआ बुझावै।

कुंअर सरीर सो ओनुस[3], जेहि जग मंत्र[4] न मूरि।
मूरख सब बरिआई, सुरज कि ढाँपै धूरि[5] ॥१६४॥(अ)

जौ महतै अस कीन्ह बिचारा, बेदन सो जो न काज हमारा।
बहुत बचन औ बहुत उपाई, कै देखेसि पुनि आपनि गुनाई।
जो निस्चै जिउ भैउ निरासा, चलेउ महंथ निज परिहरि आसा।
जाइ राइ सों कहेसि पुकारी, बेगि गिरिह गै पूत गौहारी।
सुनत राय ब्याकुल होइ धावा, अचक भयेउ मुँह बकत न आवा।

राय रारि दुख बाहे, मंदिर भयेउ अंदोर।
सगर नगर बिसमादा, राजगिरिह सुनि रोर ॥१६४॥ (आ)

राय पाग सिर भुँइ दै मारी, राजमंदिल रोवैं बर नारी।
कौला आइ परी लै पाऊँ, कहै पूत का भयेउ बिपाऊ।
मोहिं पूत नहिं करहु निरासा, दूनौ जग मोहिं तोरी आसा।
पीर कहहु माता बलिहारी, केहि औगुन तुम भैहु भिखारी।
कौनि आगि जे त्रिभुअन जरई, कौनि सकति मोरि अस जिउ रहई।

---

[१६३] १ खंसन भा०। २ जाल कि मोंट बतास भा०।
[१६४] १ समाना है एक०। २ बुधि। ३ औगुन। ४ बिय जगत एक०।
५ मूरख सब बिरहा में सुरज कि ढाँकहिं धूरि—भा०।

मात पिता के देखत, दया उपज कुंअर के जीअ।
नैन उघारि कहेसि दुख, मधुमालति जिअ लीअ ॥१६५॥

पुनि कह कुंअर पिता सौं रोई, मैं आपन जिउ बैसा खोई।
दिन दस राय रजायेस पावौ, आपन जीउ ढूँढ़ि लै आवौं।
दहुँ जग नगर महारस कहाँ, मोर जीउ हरि लीन्हा तहाँ।
आयेस होइ जाइ जिउ हेरौं, जिउ मिलि कया पाप[1] जे फेरौं।
मकु सो करम जागि मोहिं[2] जाई, सपने पेम प्रीति जो लाई।
आयस होइ जाय जिउ हेरौं, मोर जिव जिअन सिरान।
करम होइ मकु दाहिन, मोहि मिलि जाइ परान ॥१६६॥

माता पिता सुनत गहबरे, दोउन कुंअर के पावन्ह परे।
कहेन्हि पूत जानेसि परवाना, हम दूनहुं कर घट तुहहीं प्राना।
बरु हम पूत अंडारहु मारी, ब्रिध बैस जनि जाहु अंडारी।
राज पाट सब मिलिहै माटी, हम तुह बाजु मरब हिय फाटी।
आयु सूर पिअर जम घेरा, सरवन मोर तुह रे दुख[1] केरा[2]।
बिरिध बैस जो दारुन, पूत न छांडहु भीर।
जस संमुद कै बोहित, तुह बिनु लाव को तीर ॥१६७॥

———

नोटः—एक० प्रति में १६४ आ छन्द के स्थान पर छन्द संख्या १८८ की पाँच पंक्तियाँ और १६६ का अन्तिम दो पंक्तियाँ हैं। अतः इस छन्द को अन्य प्रतियों के साक्ष्य पर पूरा किया गया है।

[१६६] १ कयान एक०। २ मकु एक०।

[१६७] १ जौ एक०। २ फेरा एक०।

जिअ भरोस जै[1] करहु हमारा, आयु दीपक मोर भिनुसारा।
माता पिता न करहु निरासा, बिछुरे बहुरि न मिलनां आसा।
जौ मैं कलि यह[2] परिहरि जाऊं, तोहिं सौं जिअत रहै जग नाऊं।
सुत बियोग दसरथ कै नाईं, मैं पुनि पूत मरब तोरि ताईं।
हम पहिले दूनहुं जिउ मारहु, तौ तुम्ह पूत बिदेस सिधारहु।

मोहिं जिअत नहिं मारहु, मोरे और न कोइ।
हिआ फाटि ररि मरिहौं, सो हत्या तुह होइ[3] ॥१६८॥

मातै पितै रोइ जत कहा, कुंअर के कान न एकौ रहा।
पेम पंथ जेइं सुधि बुधि खोई, दोनौं जग कछु समुझ न कोई।
कठिन बिरह दुख जा न सँभारी, माँगा खप्पर डंड अधारी।
चक्र हाथ मुख भसम चढ़ावा, स्रवन फटिक मुंद्रा पहिरावा।
उडिआनी कर किंग्री सांटी, गुन किंग्री बैरागी ठाठी[1]।

कंथा मेखलि चिरकुटा, जटा परा जो केस।
बज्र कछोटा बांधि कै, बैसा गोरख भेस ॥१६९॥

दुख उदास बैराग मेरावा, इन्ह तीनहु तिरसूल गढ़ावा।
औ रुद्राख केरि जपमारी, औ सिंगी जो अलप अधारी।
बैसाखी गोरख धंधारी[1], ध्यान धरै मन पौन संभारी[2]।
पेम पाँवरी राखेसि पाऊँ, म्रिगछाला बैराग सुभाऊ।
दरसन लागि दरस ते फेरा, जाँचै[3] दुख मधुमालति केरा।

ग्यान ध्यान औ आसन, सुनत पंथ लौ लाइ।
दरसन लागि भेस ते फेरा, मकु गोरख मिलि जाइ ॥१७०॥

सिद्ध रूप दीसै बैंरागी, मधुमालति के दरसन लागी।

---

[१६८] १ जनि। २ काली एक०। ३ सँवरिं सँवरि गुन रोइ।

[१६९] १ साँटी एक०। (पुनरुक्ति दोष)।

[१७०] १ धंधोरी। २ सँकोरी भा०। ३ जपै एक०।

मारग जोग सिद्धि निधि खोई, बहुरि मिले मधुमालति सोई।
गुर दरिसन सैं[1] लै उपराजी, सहज अनाहत[2] किंगरी बाजै।
मधु रूप सौं[3] अस चित भजा, आवा गौन पौन घट तजा।
बिरह आगि सैं तन मन जारा, पौन[4] पानि तैं नैन[5] पखारा।

कै गुरु रूप नैन गड़िआने, स्रवन समाने बैन[6]।
मधु दरसन सौं लाइ लौ, बैस साधि जे मौन ॥१७१॥

मात पिता सुनि आये पासा, देखि कुंअर उर काढ़ेनि साँसा।
औ मुख देख छार लपटानी, धोवा बदन कँवल के पानी।
कहहिं पूत तैं आस हमारी, राज छोड़ि कस होहु भिखारी।
और अहै जो अरथ भंडारा, अब लगि मैं तोहिं लागि[1] संभारा।
जो तुह काज न आवै आजू[2], सो मोरे पुनि कवने काजू।

अरथ दरब जन परिजन, संग लेहु बहुताइ।
जौ मधुमालती मिलै, मांगि बिआहेहु जाइ ॥१७२॥

भोर भए दर परिगह साजा, कोस बीस संग आये राजा।
हाथी घोरा सहन भंडारा, कटक अनेग गनै को पारा।
औ जत अरिजन परिजन आये[1], कुंअर साथ सब राय चलाए।
पूँछत चले महारस देसा, जहँवा विक्रम राय नरेसा।
चलत आये सायर के तौरा, अगम अथाह अति गंभीरा।

हाथी घोर दर परिगह, औ जो सहन भंडार।
चढ़ा कुँअर लै बोहित, लिखा को मेटै पार ॥१७३॥

———

[१७१] १ लै एक०। २ अनंद एक०। ३ सुनि एक०। ४ नैन एक०।
५ पिंड। ६ सुनहु मान जे सैन एक०।

[१७२] १ × एक०। २ काजू एक०।

[१७३] १ राए एक०।

बोहित खंड

बोहित बोझि समुंद चलावा, बिधि का लिखा जानि नहिं पावा।
मास चारि गौ पानी पानी, पुनि सो अदिन घरी निअरानी।
समुंद लहरि दरसहिं[1] अंधियारी, दिसा भुलान बोहित कंडहारी।
मगु अगंम न जाइ बिचारी, बोहित परा लहरि उठ भारी।
परतहिं भयेउ टूक सै साता, चहुँ दिस बोहित उठा अघाता।

बूडा सबै मीत जन परिजन, औ जो सहन भंडार।
बूड़ा राजपाट जेत आहा, बूड़ा तुरै तुखार ॥१७४॥

कुंअर आस जिव कै परिहरी, पुनि कै ध्यान दै सुमिरा हरी।
तीनि भुअन तैं रछ्यक साई, केहि जांचौं तोहि छोड़ि गोसाईं।
जग जीवन दायेक बिनु तोहीं, को[1] बूड़त धै काढ़ै मोहीं।
जिन्ह गाढ़े सुमिरा करतारा, भौ ताकहँ फुलवारि अंगारा।
एहि आँतर बिधि दया जनाई, कुंअर टेक बूड़त महँ पाई।

बिधि परसाद कुंअर के आगे, काठ एक उतरान।
बूड़त राजकुंअर गहि पकरा[2], जात रहत[3] घट प्रान ॥१७५॥

भौ कुंअरहिं जे काठ अधारा, समुंद लहरि पुनि उठी अपारा।
पुनि जौ कुंअर लहरि मों परा, जिउ ते जीउ आस परिहरा।
बहुरि न जान कुंअर का भयऊ, कहँ ते कहाँ लहरि लै गयऊ।
लहरि कुंअर लै तीर अंडारा, जहाँ न चाँद सूर उजिआरा।
लहरि भँडार समुंद जो आई, कुअरहिं तीर अचेत लंडाई[1]।

पुनि जौ चेत चित चेतै, परा अहै बिसँभार।
आगू पाछु न कोई, बिनु दुख कुँअर दयार ॥१७६॥

राज सोज बूड़ा जत अहा, मधुमालती पै दुख संग रहा।
चहुँ दिस फिरि देखै कोइ नाहीं, रही एक पै संग परिछाहीं।

---

[१७४] १ निसि एक०।

[१७५] १ कर। २ एक-एक०। ३ राखत एक०।

[१७६] १ अँडाई।

जेहि बन कबहुं न मानुस आवा, तेहि बन लै जो कुंअर अँडावा।
पुनि उठि कुंअर चला बन माहीं, जहाँ पंखि पर मारत[1] नाहीं।
अगम पंथ दुख साथ न कोई, खन धावै खन बैसै रोई।

सीस रुधिर पाँव आवै, पाँव रुधिर सिर जाइ।
बेर सहस जौ बैसे, तौ एक धाप सिराइ ॥१७७॥

चला जाइ बन माँह अकेला, अगम पंथ अति[1] कठिन दुहेला।
सिंघ सेंदुर चिघारैं हाथी, एकसर कुंअर न दूसर साथी।
चलत न खिन मानै बिस्राऊँ, चित चिंता जो[2] प्रीतम नाऊँ।
पुनि केदली बन केर पसारा, परी सांझ औ भा अंधियारा।
जौ असूझ जहँ रेंगि न जाई[3], बैसि कुंअर तहँ रैनि बिहाई[4]।

आसन लाइ कै बैसा, पकरि एक तंत ध्यान।
जुग सम[5] रैनि बियोग कै, जागे भाव सो जान ॥१७८॥

---

[१७७] १ मारथ एक०।

[१७८] १ जो एक०। २ जपत जीभ जा भा०। ३ अति भा अँध्यारा एक०। (परवर्ती अर्द्धाली द्रष्टव्य)। ४ जो लीन्ह बैसारा एक०। ५ जगमग एक०।

भा भिनुसार चला उठि राऊ, पिरम पंथ सिर दै कै पाऊ।
बिरह सरीर आइ अधिकानां, कहा करौं नहिं जाय बखानां।
मधुमालति मधुमालति ररई, सौंरि सौंरि सिर भुँइ लै धरई।
चेत औ ग्यान सबै हरि लीन्हा, भौ अचेत न काहू चीन्हा।
पिरम पंथ जिव देत न हारौं, जौ सौ जीउ होइ तौ वारौं।

चलत चलत बन भीतर, देखी चौखंडि राइ।
चित मो चेत भा तेहि देखे, समुझहिं मनैं गुनाइ ॥१७९॥

तिल एक मनै माँह गुन राऊ, पुनि भीतर अवधारा पाऊँ।
देखा सेज नौल रँगराती, तापर राजकुँअरि मदमाती।
छिरका सेज सुगंध सुबासू, लुबुधे भौंर न छाँड़े पासू।
पुनि चलि राउ सेज तन गैऊ, उपजी संक भरम मन भैऊ।
ससिबदनी जोबन बिकरारी, निहकलंक बिधनै औतारी।

गुनवंती जों आगरी[1], मनमोहनि संसार।
धन्य सिस्टि जे सिरजा, धन धन सिरजनिहार[2] ॥१८०॥

सोवत सेज[1] मैं बरनौं कहा, कँवल भँवर जनु संपुट गहा।
अंब्रित बिस दुइ जानि न गये, बिबि लोयेन दहुँ काके भये।
बदन लिलाट सराहि न जानौं, खन पूनिव खन दूजि बखानौं।
सारंग जो सारंग प्रतिपाला, ससि की प्रीति म्रिगा रथ चाला।
तिल कपोल पर बनेउ अपारा, एक बूंद भौ सहस सिंगारा।

नौ सत साजे बाला, निभरम नींद सुख सोव।
दुइ चखु कुँवर चकोर जेंउ, चन्द्रबदनि मुख जोव ॥१८१॥

चिहुर नाग बिस लहरैं देई, देखत जिउ जोबन हरि लेई।
अपिय[1] अमीरस भरे कटोरा, उलटि धरे[2] मानों कनक कचोरा।

---

[१८०] १ नागरी। २ सूतनिहारि रा०।

[१८१] १ सैनिक रा०। नैन भा०।

रंग मेंहदी कर पल्लौ राती[3], रोंव रोंव जोबन मदमाती।
बेनी भाव बरनि नहिं जाई, सेस मुमेरु चढ़ा जनु आई।
अधर सुरंग देखि मन हरई, त्रिभुअन मुनिजन धीर्ज न धरई।

चतुर[4] सहज रसमाती[5], नख सिख बने सुरेख।
जन्म खुरक हिय ताके, एक निमिखि जो देख ॥१८२॥

देवस चांद मकु इहां रहाई, रैनि सरग[1] गये उदै[2] कराई।
कै यह सरग अपछरा बारी, इन्द्र[3] सराप धरनी धै डारी।
कैं यह सरग बनसपति नाऊँ, इहाँ आइ दिन करु बिस्राऊँ।
कै यह डाइनि है बन केरी, माया रूप धरेसि है फेरी।
सै जोजन कोइ आस न पासा, इहाँ कहाँ दहुँ मानुस बासा।

कै यह भेस धरे बनसपति, कै मोर जिउ भर्मान।
कै काहू मोंहि भोरवै, कै उटवा[4] मया मसान ॥१८३॥

निरभम[1] नींद सोवै बर नारी, भर जोबन जो पेम पिआरी।
देखि कुँवर चित रहा लोभाई, सेज निअर भै बैसा जाई।
कबहीं भरम जीव मों धरई, कबहीं पिरम रस निभरम करई।
पुनि करवट लीन्हा अंगिराई, सहज भाव चित पैसा आई[2]।
अंगिरानैं भुअडंड पसारे, ससि रे सूर दुइ भये उघारे।

सँजग भए बिबि लोयेन, भौंहे चढ़ीं कमान।
सरग इन्द्र नर प्रथिमी, फनपति हेठ सँकान ॥१८४॥

जागि उठी पुनि नैन उघारे, भए कुरंग[1] जो चित अनियारे।
पुनि जौ डीठ कुँवर पर परी, भरमित भै जौ चित मों डरी।
पुनि रस बचन सहज तौ बोला, बर कामिनी जे रूप अमोला।
पूछेसि तैं को कहाँ ते आवा, भएउ ऐस का कर बौरावा।
मदन मूरती मानुस अहही, कहु नाव कस[2] बात न कहही।

---

[१८२] १ आपै एक० । २ उलथिर एक० । ३ तरुवा रंग महावर राती भा० । ४ चित्र भा० । ५ रंग भीने भा० ।
[१८३] १ सुरंग एक० । २ सेवा एक० । ३ केहि एक० । ४ एतौ भा० ।
[१८४] १ सुभर । २ आई जमुहाई भा० ।

सत भाखु तैं मोंसौं, को हँसि भूत बैतार।
राजकुँवर मनुसे जस देखौं, कस छांडेसि घरबार॥१८५॥

केहि बियोग छाँड़े घरबारा, सत भाखु सत जगत पिआरा।
जेहि जिउ सत संघाती होई, तेहि सरि और न पूजै कोई॥
सती असत्त न भाखै काऊ, सत आहै संसार सुभाऊ।
तैं पुनि कहु मोसौ सत बाता, नाव कहौ जाके रँग राता।
समुंद नाव महँ सत कंडहारा, बिन सत केउ न उतरै पारा।

सत कहौं सत जानेहु, सत साथी नौ खंड।
मनुसे जौ सत भाखै[1], पिंड चढ़ै ब्रह्मंड॥१८६॥

कै तोहि आह प्रीतम मदमाता, कै कहूँ तोर जिउ हरि राता।
कै मूरख मन रहसि भुलाना, कै चित मों न ग्यान समाना।
कै तोर अर्थं दर्ब हरि लीन्हा, कै चिल्हवाँस सत्रु तोहि दीन्हा।
कै रंग मदमाता न संभारेसि, कै रे गरब सें कहै न पारसि[1]।
कै भरमसि देखे येहि ठांई, बकत सिद्धि[2] परसिद्धि गोसाईं।

निभरम होहु भर्म तजि, जनि जिअ मानहु संक।
सहज भाव ते पूछौं, ससिबदनी निकलंक॥१८७॥

कै तैं आय सहज चित चढ़ेऊ, कै तैं पेम सास्तर पढ़ेऊ।
फै रे माय तोहिं दीन्ही स्रापा, कै काहू सिर टोना थापा।
कै रे गूद तोरे सिर फिरेऊ, कै रे सिस्टि बिधि[1] बाउर सिरेऊ।
कै रे ब्रह्म भेद[2] तैं जाना, कै काहू के रूप भुलाना।
कै तोर जीउ सहज हैं राता, कै तैं पेम सुरा कर माता।

कै तैं मूल गंवाए, कै तोहिं कुटुंब[3] बियोग।
कै बर कामिनि बिछुरी, तेहि उपजा जिउ सोग॥१८८॥

पुनि उठि कुँवर बात अनुसारी, बर कामिनि सुनु पेम पिआरी।

---

[१८५] १ सुगंध एक०। २ सत एक०।
[१८६] १ सँभरै भा०।
[१८७] १ रंग मदमाता न सँभारेसि एक०। (पुनरुक्ति)। २ सत्त।
[१८८] १ जग एक०। २ बेद एक०। ३ कठिन एक०।

मैं आहौं परदेसि बटाऊ, मन बैराग पंथ सिर पाऊँ।
सत पूछत आहौं मैं तोहीं, निस्चै सत्त कहसि तैं मोहीं।
सै जोजन मानुस नहि पाऊँ, मकु डाइनि आहै एहि ठाऊँ।
चहुँ खंड भँवत भँवत मैं आवा, मैं जाना तीर मैं पावा।

रूप धरे हसि डाइनि, देखौं लक्खन निनार।
नातरि ऐसे बन महँ, मानुस रहै कि पार ॥१८९॥

जेहि बन मों पंखी न उड़ाई, तहवाँ मानुस कहा कराई।
भरमित बन जन्तु खायें धावै, मनुसे कहाँ इहाँ दहुँ आवै।
अरु मानुस येहि रूप न होई, धरे रूप भयावन है कोई।
को आहहि कहु आपनि नाऊँ, कस कीन्हे[1] बन भीतर ठाऊँ।
अरु न कोइ सँग साथ सहेली, बन निकुंज किमि रही अकेली।

निरभम चित्त अकेली, बन मों रही निसंक।
हरि नैनी हरि बैनी, ससि[2] बदनी निकलंक[3] ॥१९०॥

केहि तैं आपन दुख सुख कहही, केहि जिउ लाइ रैनि निर्बहई।
दोसर कोइ न देखौं पासा, बैरागी ज्यौं अधिक उदासा।
प्रीति बास मोहि तोसैं आवै, नहि जानौं का भेद जनावै।
नैन चिन्हारी तोरि न पावहि, बचन तोर ज्यौं भेद जनावहि।
कहु केहि गन्ध्रप कै हसि[1] नारी, कौन राजघर[2] राजदुलारी।

प्रीति भेद मैं पावौं तों सौं, कहु मोसैं बर नारि।
काकरि परम[3] पिआरी, काकरि राजदुलारि ॥१९१॥

अब सुनु बात कहै बर नारी, मैं राजा घर राजदुलारी।
चित बिस्राउँ नगर मोर ठाऊँ, चित्रसेनि धिअ पेमा नाऊँ।
भाग फिरा जौ कुदिन जनाये, लोग कुटुंब सौं बिधि बेगराये।
अलप अभोली पिरम[1] न जानौं, पिता राज बालापन मानौं।
बासर खेलि खाइ बहलावा, बिनु[2] चिंता निसि सोइ बिहावा।

---

[१९०] १ कीते भा०। २ हरि रा०। ३ हरि लंक।
[१९१] १ धर भा०। २ बर रा०। ३ पेम।
[१९२] १ पीर एक०। २ चित एक०।
३ क्रीडा कोड कुराहर भा०।

हैं राजा, प्रधान, श्रेष्ठ। पालि में राजा तथा प्राकृत में राय रूप मिलते हैं जिनके अर्थ राजा ही हैं। उड़िया में राउ, राम्रो का अर्थ मरहठों की वंशगत उपाधि है। हिन्दी में राय, राव के अर्थ राजा, सरदार, भाटों की उपाधि हैं। वास्तव में राव तथा राना ये दोनों छोटे राजाओं के लिये प्रयुक्त पदवियाँ हैं अतः इसमें अर्थसंकोच का तत्व पाया जाता है।

(२३) रूख—यह संस्कृत "वृक्ष" का विकसित रूप है। प्राकृत में रुक्ख रुक्खो तथा बँगला में रुक, रुख रूप उपलब्ध है। इन सबों का अर्थ वृक्ष है। हिन्दी में भी यह इसी अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।

(२४) रेंगत—यह संस्कृत की रिंग् या रिख धातु से विकसित है। रिंग का अर्थ है सरकना, रेंगना, धीरे-धीरे आगे बढ़ना। प्राकृत में रिंगिअ या रिग्ग रूप इसी अर्थ का द्योतन करते हैं। हिन्दी में रेंगना धातु भी इसी अर्थ में व्यवहृत होती है।

(२५) सँवारी—यह संस्कृत सं + भृ धातु से विकसित है। प्राकृत में संभर रूप मिलता है और हिन्दी में सँभरना रूप। सँभरना से सँवरना निम्न प्रकार से बनेगा।

सँभरना > सँबरना > सँवरना

संस्कृत संभृ का एक अर्थ सजाना है। पालि में संभार का अर्थ सम्बल है और प्राकृत में संभर का अर्थ संकोच करना, धारण करना है। हिन्दी में सँभरना=किसी आधार पर रुके रहना, होशियार होना के अर्थ में प्रयुक्त मिलता है। किन्तु सँवारना, सँवरना का ही क्रिया रूप है। यहाँ पर यह सजाना या ठीक तरह से सम्पादित करने के अर्थ में प्रयुक्त है।

(२६) साहि (१०.१)— यह फारसी के 'शाह' का विकसित रूप है। शाह का अर्थ होता है बादशाह, महान। यहाँ पर यह बादशाह के अर्थ में प्रयुक्त मिलता है।

(ग) मधुमालती का पाठ

प्रस्तुत पाठ को तैयार करने में निम्न प्रतियों का सहारा लिया गया है:—

भा० प्रति : यह फारसी में अत्यन्त सतर्कता के साथ लिखी हुई है किन्तु फिर भी इसकी कुछ पाठ विकृतियाँ नागरी लिपि से सम्बन्धित हैं :—

थक थक > थल थल २६६.५ (क तथा ल एक प्रकार से लिखे होने के कारण)

सर्वविदित है, प्राचीन ग्रंथों में पूर्वकालिक रूपों में–इ रूप का लोप कोई नवीन बात नहीं है। ऐसी त्रुटियों को सर्वतः फारसी लिपि जन्य त्रुटियाँ मानना न्याय-संगत न होगा।

एक०प्रति में जो फारसी लिपिजन्य त्रुटियाँ थीं—यथा टे को ते, बे को पे या काफ को गाफ पढ़े जाने के कारण—उन्हें प्रस्तुत संस्करण में संशोधित कर लिया गया है और यथास्थान पाद-टिप्पणी में उनका उल्लेख भी कर दिया गया है। कुछ और भी संशोधन हुए हैं—यथा जो के स्थान पर औ, जुग के स्थान पर जग, भौ के स्थान पर भयेउ। ज•और अ कैथी लिपि में समान रूप से लिखे जाते हैं अतः 'औ' के स्थान पर 'जो' पढ़ा जा सकता है। 'भौ' क्रिया रूप कई स्थलों पर मात्रा संख्या में गड़बड़ी ला देता है अतः उसको 'भयेउ' कर दिया गया है। यही नहीं, जैसा कि पहले संस्करण की भूमिका में उल्लेख किया जा चुका है, कैथी लिपि में अन्य और दोष हैं जिनके कारण कभी कभी ह्रस्व और दीर्घ रूपों के पढ़ने–लिखने में कठिनाई होती है। मात्राओं के लिखने में भी कैथी लिपि में शिथिलता पाई•जाती है। यही कारण है कि प्रस्तुत संस्करण में अन्य तीन प्रतियों के आधार पर ऐसी त्रुटियों को बिना किसी प्रकार के उल्लेख के ही संशोधित कर लिया गया है।

डा० गुप्त द्वारा संकेत की गई त्रुटियों में से कुछेक तर्कसंगत नहीं प्रतीत होतीं। उदाहरणार्थ, उनका यह कथन कि 'नून' को 'ये' पढ़ने के कारण हो जनि>जै हो गया है अथवा अंत के 'हे' को न पढ़ने के कारण नहिं >न हो गया है, ठीक नहीं जान पड़ता। इसी प्रकार 'ये' को 'ई' न पढ़कर 'ए' रूप में पढ़ने के कारण गढी>गढे, परिहरी>परिहरे, धरी >धरे जैसे तर्क भी सबल नहीं प्रतीत होते।

(त) प्रतियों का पाठ सम्बन्ध

विकृति साम्य अथवा छन्दों की प्राप्ति-अप्राप्ति के आधार पर मा० तथा एक० प्रतियों में अत्यधिक समानता पाई जाती है। साथ ही ये दोनों नागरी लिपि में हैं।

भा० तथा रा० प्रतियाँ फारसी लिपि में हैं। इनमें से भा० तथा एक० प्रतियों में भी काफी साम्य है फलतः एक० प्रति भी रा० अथवा भा० प्रति की भाँति अत्यन्त उपयोगी प्रति सिद्ध होती है। अगले उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि मा० तथा एक० प्रतियाँ एक वर्ग की हैं और भा० तथा रा० दूसरे वर्ग की।

मा० तथा एक० प्रति	रा० तथा भा० प्रति
१. पुनि (२६३.१)	पै
२. सपत सींभु (२६७.७)	सपत सबहि
३. पै (३२३.२)	जिय
४. बागा (४५७.३)	झाँगा
५ ४४६ वें छन्द के पश्चात् एक छन्द जो भा० तथा रा० में है वह इन दोनों में नहीं है	एक छन्द और है
६. ५४८वाँ छन्द दोनों में है	नहीं है

उपर्युक्त के अनुसार विभिन्न प्रतियों में निम्न प्रकार का पारस्परिक सम्बन्ध अंकित किया जा सकता है :—

(थ) सम्पादन सिद्धान्त
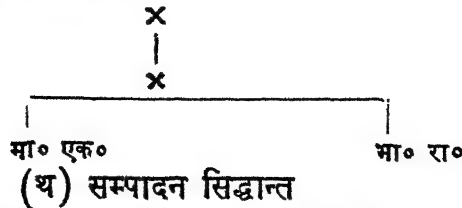
"मंझन कृत मधुमालती" में मैंने सन् १९५७ में केवल एक० प्रति के पाठ का सम्पादन किया था। उसके पश्चात् से ही उसके संशोधन की आवश्यकता का अनुभव होता रहा है। इसी बीच डा० गुप्त ने उसी नाम से मधुमालती का प्रकाशन पाठान्तर एवं संजीवनी टीका सहित कर दिया। मैंने इसे ध्यानपूर्वक पढ़ा। जो काम मैं रामपुर अथवा भारत कला-भवन, बनारस जाकर स्वयं करना चाहता था वह मुझे घर बैठे मिल गया। अतः द्वितीय संस्करण के लिये जब मैंने एक० प्रति के पाठ का संशोधन कार्य प्रारम्भ किया तो डा० गुप्त की कृति से मुझे काफी सहायता मिली।

मैंने संशयात्मक स्थलों के पाठ संशोधन में भा०, मा० तथा रा० प्रतियों के पाठ का विशेष रूप से उपयोग किया है। वे छन्द जो एक० प्रति में नहीं हैं, उन्हें पाद-टिप्पणी के रूप में समाविष्ट कर लिया है। कुछ छोटे-मोटे संशोधन और भी किये हैं जिनका उल्लेख पहले किया जा चुका है। मैंने पाठान्तरों को पाद-टिप्पणी के रूप में दिया है। एक० प्रति में प्राप्य खण्डों की व्यवस्था को

उसी प्रकार रहने दिया है। मैंने १६४वीं अर्द्धाली में 'अ' तथा 'आ' ये दो संख्यायें कर दी है क्योंकि दूसरी संख्या वाली अर्द्धाली एक०प्रति में नहीं थी।

(द) डा० गुप्त द्वारा स्वीकृत पाठों के सम्बन्ध में निवेदन

डा० गुप्त ने स्वसम्पादित "मधुमालती" में प्रस्तावित पाठों को तारक चिन्हों द्वारा अंकित किया है। इनमें से कुछेक के सम्बन्ध में मुझे निवेदन करना है:—

१. **मंता** (२८७.२)– यह शब्द भा०, मा०, रा० तथा एक० इन चारों ही प्रतियों में 'माँत' के रूप में प्रयुक्त हुआ है। माता के लिए 'मात' या 'मात' उपयुक्त है फिर भी न जाने गुप्त जी ने 'मंता'पाठ क्यों प्रस्तावित किया है ?

२. **अनबन:** (१.६ तथा अन्यत्र भी)–गुप्तजीने इसकी व्युत्पत्ति, 'अन्य वर्ण' से की है। अधिकांश प्रतियों में अनौन या अनवन पाठ मिलता है। यह 'अन्यान्य' से व्युत्पन्न माना जा सकता है।

३. **निरारा** (३.४,११५.२ तथा १२०.३)—तीनों स्थानों पर रा० प्रति में निरारा पाठ है किन्तु एक० प्रति में यह तीनों स्थानों पर "निनारा" रूप में मिलता है। भा० प्रति में (१२०.३) भी निनारा ही पाठ है। आज भी बोलचाल की अवधी में 'निनारा' बोला जाता है अतः गुप्त जी द्वारा स्वीकृत 'निरारा' पाठ ग्राह्य नहीं हो सकता।

४. **संघ** (२०.४)—रा० तथा एक० दोनों ही प्रतियों में यह 'संग' रूप में व्यवहृत है फिर भी न जाने गुप्त जी ने 'संघ' को क्यों अधिक प्रामाणिक माना है। सम्भवतः 'संघ' उन्हें अधिक प्राचीन लगता है। इसी प्रकार से गुप्त जीने 'सब' को सर्वत्र 'सभ' रूप में स्वीकार किया हैं। एक० प्रति में 'सब' और 'सभ' दोनों ही रूप मिलते हैं किन्तु उनमें कौन प्राचीन रूप है, कहना कठिन है। भा० प्रति में भी 'सब' पाठ ही मिलता है।

५. **सरभरि** (२५.४)—रा० तथा एक० दोनों ही प्रतियों में स,रबरि' पाठ उपलब्ध होता है। भा० प्रति में भी सरवरि (१५३.२) ही पाठ है। सम्भवतः देशी शब्दों में 'सरभरि' रूप प्राप्त होने के कारण ही गुप्त जी को यही रूप प्रिय लगा है।

६. **अगासा** (३०.३)—रा० तथा० एक० दोनों ही प्रतियों में 'अकासा' पाठ आया है, फिर भी गुप्त जी को 'अगासा' पाठ आकर्षक लगा है। क्या रा० प्रति में काफ>गाफ की सम्भावना नहीं थी ?

७. निलारा—एक प्रति में 'लिलारा' पाठ है जो ललाट से व्युत्पन्न है। व्युत्पत्ति के समय गुप्त जी का ध्यान 'निलाड' शब्द पर था इसीलिये उन्होंने 'निलारा' पाठ स्वीकार किया है। आजकल भी बोलचाल की अवधी में 'लिलार' ही बोला जाता है, निलार नहीं।

८. सबाई—यह शब्द २०१.६, २१०.६, २३१.१, २८६.४, २८९.५ इन पाँच स्थलों पर प्रयुक्त हुआ है। रा० तथा एक० प्रति में यह 'सवाई' रूप में ही उपलब्ध है। आजकल भी अवधी में 'पौन सवाई' के साथ यह बोला जाता है। यद्यपि अर्थ की दृष्टि से सबाई = सब + आई = संयुक्त रूप में ठीक प्रतीत होता है किन्तु फिर भी सवाई की व्युत्पत्ति अस्पष्ट ही समझी जानी चाहिए।

९. कुंत (५५.३)—यह शब्द मधुमालती के उस अंश में आया है जो केवल एक० तथा रा० प्रतियों में उपलब्ध है। दोनों प्रतियों में इसके स्थान पर 'कोत' पाठ है। यद्यपि अर्थ की दृष्टि से गुप्त जी द्वारा प्रस्तावित 'कुंत' ठीक है किन्तु क्या 'कोत' से वही अर्थ नहीं निकल सकता ?

१०. फुनि, पुब्ब, सब्ब, सब्ब, जब्ब, आदि—रा० तथा० एक० प्रति में समान रूप से "फुनि" के स्थान पर 'पुनि' पाठ है अतः 'पुनि' को मान्य न ठहराना युक्तियुक्त नहीं प्रतीत होता। पुब्ब (३३.७), सब्ब, जब्ब रूपों को स्वीकृत करते समय गुप्तजी में डिंगल काव्य की भाषा के स्वरूप के प्रति व्यामोह-सा लक्षित होता है अन्यथा तब की अवधी भाषा में ये रूप शायद ही प्रचलित रहे हों।

११. सयंसार (३५.४ तथा अन्यत्र भी)—'संसार' के स्थान पर 'सयंसार' की कल्पना तर्कयुक्त प्रतीत नहीं होती।

१२. हरुव (३७.७)—यह पाठ रा० प्रति का है और है संदिग्ध। एक० प्रति में इसके स्थान पर 'ओछ' पाठ है। अन्यत्र भी न्यून पद की चर्चा के समय कवि ने 'ओछ' शब्द का प्रयोग किया है अतः गुप्त जी ने एक० प्रति में उपयुक्त शब्द के रहते हुए भी न जाने क्यों संदिग्ध शब्द को ही मान्यता प्रदान की है। सम्भवतः वे एक० प्रति की अनावश्यकता को यहाँ भी नहीं भूल पाये।

१३. मुँह (३७.७)—एक० प्रति की सार्थकता को न मानने के ही कारण गुप्त जी ने "कबि महँ लेव छपाय" के स्थान पर "कबि मुँह लेव छपाय" पाठ स्वीकार किया है और इसका अर्थ इस प्रकार किया है—

कवि का मुँह छिपा लो। शुद्ध पाठ के होते हुए भी असंदिग्ध पाठ को स्वीकृत करने के कारण अर्थ में कितनी बड़ी गड़बड़ी हो गई है—इसका वास्तविक अर्थ है—काव्य में छिपा लो। अन्यत्र भी कवि का प्रयोग काव्य के लिए हुआ है।

१४. **अचिजु** (८०.६ तथा अन्यत्र) :—यद्यपि रा० तथा एक० दोनों प्रतियों में क्रमशः अजरज तथा अचरिजु पाठ हैं फिर भी गुप्त जी ने 'अचिजु' को मान्यता दी है।

१५. **अन्य पाठ :**

(क) **जगत क अन अहार कर दाता** (४.४)। इसमें अन और अहार में एक ही चीज दो बार कही गई है। एक० प्रति में "जग जीवन अहार……" पाठ है जो अर्थ की दृष्टि से ठीक बैठता है।

(ख) **तोहिं सेतें पै चाहौं तोही** (५.३)। गुप्त जी ने इसका अर्थ इस प्रकार किया है—तुझसे मैं तुझी को चाहता हूँ। एक० प्रति में इसके स्थान पर 'तेहि सेती परि जाचौं तेही' यह पाठ है जिसके अनुसार निम्न अर्थ होगा :—

मेरे मन में इच्छा है जिसके कारण तुझसे याचना करता हूँ।

(ग) **न्याइ किरति जग ऊँच उतंगा** (१२.१)। इस पाठ में ऊँच और उतंगा एक ही अर्थ के द्योतक हैं। गुप्तजी ने न जाने क्यों "ऊँची और अत्यंत ऊँची" ऐसे अर्थ से तुष्टि कर ली है। एक० प्रति में 'अति उतंगा' पाठ है जो सर्वथा उपयुक्त होगा।

(घ) **निह्कंटक** (१२.३)—एक० तथा० रा० प्रति में इसके स्थान पर नीर निकट तथा बहु कलंक रूप प्राप्त हैं। परन्तु न जाने गुप्त जी ने कैसे 'निह्कंटक' प्रस्तावित कर दिया है।

(ङ) **भीन हेम होइ जाय** (१६.६)। रा० तथा एक० प्रतियों में "भीन" के स्थान पर 'ताम' पाठ आया है। गुप्तजी ने भीन=भिन्न हीन (धातु) यह अर्थ लगाया है किन्तु यदि 'ताम' पाठ रहने दिया जाता तो क्या अर्थसंगति न बैठती ?

१६. **कुछ अन्य उल्लेख**

(अ) गुप्तजी को सानुनासिक रूप प्रिय हैं। उन्होंने ग्यानां, ध्यानां, सूनां, बिहूनां जैसे रूपों को ही मान्यता दी है परन्तु यदि इनमें अनुस्वार न भी लगें तो कोई क्षति की सम्भावना नहीं है।

(आ) गुप्तजी ने छन्द ६.२ के चरणों को परस्पर स्थानांतरित करके भले ही एकरूपता ला दी हो किन्तु एक० तथा रा० इन दोनों ही प्रतियों में वैसा नहीं है।

(इ) [पै] (३१.५)—गुप्तजी ने इस शब्द को अपनी ओर से जोड़ा है और टिप्पणी में यह लिखा है कि यह शब्द एक० तथा रा० दोनों प्रतियों में वर्तमान नहीं है। किन्तु ध्यान से देखने पर पता चलेगा कि यह शब्द तो एक० प्रति में पहले से विद्यमान है। फिर अपनी ओर से मिलाने की आवश्यकता कहाँ रही ?

(ई) छन्द संख्या ४५ :—इसके लिए गुप्तजी ने लिखा है कि यह एक० प्रति में नहीं है। यह अत्यन्त आश्चर्य की बात है कि गुप्त जी ने इस अर्द्धाली को एक० प्रति में देखा ही नहीं। यही कारण है कि इस छन्द की दूसरी पंक्ति में उनको एक शब्द "जब (जियत ?)" के सम्बन्ध में कोई हल नहीं मिल सका। यदि उन्होंने एक० प्रति की सार्थकता को स्वीकार किया होता तो न केवल उनके इस ऊहापोह का प्रशमन होता, वरन् एक० प्रति भी उनको महत्वपूर्ण जान पड़ी होती। एक० प्रति में उनके "जब (जियत ?)" शब्द के स्थान पर 'जगत' पाठ है जो वहाँ पर सटीक बैठता है।

(उ) अत्यन्त सावधानी बरतने पर भी गुप्त जी की पुस्तक में दो महत्वपूर्ण त्रुटियाँ पाठ में आ गई हैं (यद्यपि टीका में उनके अर्थ शुद्ध शब्द के अनुसार है)। त्रुटियाँ निम्न हैं :

पौनि के स्थान पर पैनि (२८६.४), उनकी पुस्तक में पृ० २४२ पर,

बसह के स्थान पर बहस (४५५.७) उनकी पुस्तक में पृ० ४०० पर,

डा० गुप्त द्वारा सम्पादित मधुमालती के पाठ के सम्बन्ध में ऊपर कही गई बातें किसी कटुता या आलोचना की भावना के वश नहीं कही गईं वरन् इस लिए कि उनके प्रकाश में "मंझन कृत मधुमालती" का यह द्वितीय संस्करण आवश्यक प्रतीत होता है। अधिकांश लोगों की धारणा है कि पाठ-भेद या प्रामाणिक पाठ प्रस्तुत करने के लिए फारसी लिपि में लिखित प्रतियों का मूल्य अधिक होता है परन्तु मेरी यह धारणा है कि फारसी लिपि में लिखी हुई अच्छी से अच्छी प्रति भी पढ़नेवाले अथवा प्रतिलिपिक की योग्यता के अनुसार अच्छी या बुरी बन सकती है। उदाहरणार्थ, रामपुर की फारसी प्रति (रा० प्रति) के पाठ, (जो भारत-कला-भवन में नागरी लिपि में लिखा हुआ, सुरक्षित है) और डा० गुप्त द्वारा दिये गये पाठ– इन दोनों में काफी विषमता है। तुलनार्थ एक अर्द्धाली के पाठान्तर प्रस्तुत हैं :—

भारत-कला भवन में सुरक्षित पाठ—

एक अनेक भाव परमेसा, एक रूप काछेन यह भेसा।
तीन लोक जहँवँ लहि साईं, भोग के अनूप रूप गोसाईं।
करता करै जगत सब जाही, जम था जम रहै जम आही।
बाज ठाँव सबै जेहि ठाईं, निरगुन एक ओंकार गोसाईं।
गुप्त रूप सब ठाईं, बाज रूप यहै गोसाईं।
तिभुवन पूरा पूर की, एफ जोति सभ ठाँव।
जो जेहि अनवन मूरत, मूरत अनवन नाँव॥

डा० गुप्त ने इसी छन्द को निम्न रूप मे पढ़ा है :—

एक अनेक भाउ परमेसा, एक रूप काछैं बहु भेसा।
तीनि लोक जहँवा लहि ताईं, भोग कै अनूप रूप गोसाईं॥
करता करै जगत जेत चाहैं, जमु था जंमु रहै जमु आहै।
बाजु ठाउँ बसियै सभ ठाईं, निरगुन एक ओंकार गोसाईं॥
गुपुत रूप सब ठाईं, बाजु रूप बहु गोसाईं।
त्रिभुवन पूरि अपूरि कै एक जोति सभ ठाँउ।
जोतिहि अनबन मूरति, मूरति अनबन नाँउ॥

स्पष्टतः प्रथम पंक्ति में गुप्त जी द्वारा पठित बहु > यह, दूसरी पंक्ति में ताईं > साईं, तीसरी पंक्ति में जेत > सब, चौथी पंक्ति में बसियै > सबै, पाँचवीं पंक्ति में बहु > यहै एवं सातवीं पंक्ति में अनबन > अनवन ये रूप बटुकप्रसाद द्वारा पढ़े गये। अतः यह कहना कठिन है कि किस अवस्था में फारसी से नागरी में लिप्यंतर करते समय कौन सी त्रुटि हो गई है। ऐसी त्रुटियाँ केवल मधुमालती की विभिन्न प्रतियों के लिये सत्य सिद्ध होती हैं वरन् "मृगावती" तथा 'पद्मावत' के सम्बन्ध में भी लागू होती हैं। यदि नागरी लिपि में कोई भी प्रति उपलब्ध हो तो उसके आधार पर फारसी लिपि को पढ़ लेना सरल होता है। एक० प्रति के प्रकाशित होने के कारण डा० गुप्त को नरा० तथा भा० प्रतियों को पढ़ने में अवश्य ही सरलता हुई होगी।

शिवगोपाल मिश्र

२५ अशोक नगर, इलाहाबाद
१५ अक्टूबर १९६३ ई०
(निराला जी की दूसरी वर्षी)

———

आभार

मैं एकउला निवासी रावत ओउम प्रकाश सिंह तथा राजेन्द्रपाल सिह का अत्यन्त कृतज्ञ हूँ जिन्होंने मधमालती की हस्तलिखित प्रति को "मंझनकृत मधुमालती" के पाठ तैयार करने के लिए मुझे सहर्ष प्रदान किया। मैं भारत कला भवन के अध्यक्ष श्री रायकृष्णदास जी का भी आभारी हूँ जिन्होंने मुझे भा० तथा मा० प्रतियों के अवलोकन एवं उनके कुछ अंशों के उतारने तथा फोटो लेने की अनुमति प्रदान की।

मैं उन कृतियों के लेखकों के प्रति भी अपना आभार प्रदर्शित करता हूँ जिनकी रचनाओं के कुछ अंशों को मैंने भूमिकालेखन में प्रयुक्त किया है। इस संस्करण में पाठान्तर प्रस्तुत करने में मुझे डा० माता प्रसाद गुप्त द्वारा संपादित कृति से अत्यन्त सहायता मिली है जिसके लिये मैं उनका भी आभारी हूँ।

मंझन कृत मधुमालती को सर्वप्रथम प्रकाशित करने का जो साहस बेरी बन्धुओं ने किया, उसके लिये वे बधाई के पात्र हैं। इस द्वितीय संस्करण का प्रकशित होना इस बात का प्रमाण है कि वे मधुमालती के प्रकाशन में सफल हुए हैं।

१५ अक्तूबर, १६६३
(निराला जी की द्वितीय वर्षी)

शिवगोपाल मिश्र

✣

म
धु
मा
ल
ती
क
था

श्रीगणेशाय नमः

मधुमालती कथा

पेम प्रीति सुख निधि के दाता, दुइ जग एकोंकारि[1] विधाता।
बुद्धि प्रगास नाहीं तुअ ताईं, तुअ अस्तुति जे करौ गोसाईं।
तीनि भुअन चहुँ जुग तैं दाता[2], आदि अन्त जग तोहि पै छाजा।
पंडित मुनिजन ब्रह्म विचारी, तुअ अस्तुति जग काहु न सारी।
एक जीभ मैं कैसे सारौं, सहस जीभ चहुँ जुग नहिं पारौं।

तीनि भुअन घट घटनं[3], अनौनं[4] रूप बेलास।
एक जीभ कहु ताहि कै, कैसे अस्तुति करै हवास ॥ १ ॥

गुपुत रूप परगट सब ठाईं, निरगुन एकोंकार[1] गोसाईं।
रूप अनेग भाव परमेसा[2], एक रूप काँछे बहु भेसा।
तीनि लोक जहवाँ लगि ठाईं, भोगी क अनवन रूप गोसाईं।
करता करै जगत सो चाहै, जमु था जमु रहै जो[3] आहै।
बाजु नाव बेलसै सब ठाईं, बाजु रूप बहु रूप गोसाईं।

त्रिभुअन अपुरी पूरि कै, एक जोति सब ठाउँ।
जोतिहि अनवन मूरति, मूरति अनवन नाउँ ॥ २ ॥

जो येहि तीनि लोक न समाना[1], सो कैसे कै जाइ बखाना।
त्रिभुअन भाव जान सब कोई, जो किछु भाव होइ सो होई।
चारौं जुग परगट न छपाना, बिरला जन काहू पहिचाना[2]।
परगट दसौं दिसा उजिआरा, सरब लीन पै आपु निनारा[3]।
जे आपुहीं[4] वोहि मन लावा, बिधि वोही पै आपु देखावा।

---

[१] यह छन्द एक प्रति के अतिरिक्त अन्य सबों में अप्राप्त है।
१ एकंकरी एक०। २ राजा (माताप्रसाद गुप्त द्वारा प्रस्तावित)। ३ घट महँ (माताप्रसाद गुप्त द्वारा प्रस्तावित)। ४ अनबन (माताप्रसाद गुप्त द्वारा प्रस्तावित)।
[२] १ एकंकार एक०। २ परवेसा एक०। ३ जमु रा०।

गुपुत रहै परगट जो वेलसै, सरव्यापी सोइ।
दूजा कोइ न आहँ, और भया नहिं होइ[६] ॥ ३ ॥

सुर नर नाग जहा लगि आही, कोटि वरिस जो अस्तुति सारहीं।
पाछे सब पछताइ कहाहीं, जस तौ तस हम जानै नाहीं।
कोटि वरिस जो मन फिरि आवै, बुधि वपुरी दहुँ कहवाँ पावै।
जग जीवन[१] अहार कर दाता, करता हरता एक विधाता।
त्रिभुअन चहुँ जुग एक अकेला, आपु अपानं रूप वहु खेला।

अलख निरंजन करता, एक रूप वहु भेस।
कतहूँ बाल[४] भिखारी, कतहूँ आदि नरेस ॥ ४ ॥

जो जग जन्मि तोहि न पहिचाना, आहर जन्म मुए पछताना।
जगत जन्मि लीन्हा ते[१] लाहा, जो तोहिं बिनु तोसें किछु चाहा।
करता किछु मन इच्छा मोहीं, तेहि सेती परिजाचौं[२] तोहीं।
जैसे जिव निस्चै तोहि जाना, तैसे जीभ न जाय बखाना।
जौ मन गुनिये तौ सब थोरी, अस्तुति कौन करौं मैं तोरी।

ग्यान पंखी कै मगु[२] जहाँ, औ मति कै पैठार।
तहवाँ लै पै पंक तनु, तें तरु भेटै पार[४] ॥ ५ ॥

आदिहिं आदि[१] अन्त ही अन्ता, एकइ अरय जो रूप अनन्ता।
एक सउ[१] दोसर कोउ नाहीं, आदि न भौ अन्त न आही।
निश्चय जिउ जाना परवाना, त्रिभुअन निकट एक कै जाना।
दोसर नहीं कतहूँ जो तुअ जोरा, दरपन दिस्टि[३] रूप मुख तोरा।
तोर खोज खोजत सो पावै, जो आपन सब खोज हेरावै।

---

[३] १ जो बहु भेसन लोक समाना रा० ।२. बिरला कौनहु जानि पिछांना रा० । ३. निरारा रा० । ४ अपुनां निज रा० । ५वि धि वोहि पुनि वह गुपुत देखावा रा० । ६ कोइ एक० ।

[४] १ जगत क अन रा० । २ अनूप रा० ।
३ भै एक० । ४ बान रा० ।

[५] १ तेइं लहा न रा० । २ पै चाहौं रा० । ३ गम रा० । ४ तहँवा लगि ते गमनब आगे को पै सँभार रा० ।

सब भेदी कर भेदि[3], औ सब रसिक सुजान।
सो सब सिस्टि पेछौरी, आपु एक परवान[4] ॥ ६ ॥

सुनसि[1] अब ताकी बाता, परगट भौ जो बिरह विधाता।
सीभु[2] सरीर सिस्टि जो आवा, और सिस्टि जो वोहि कै भावा।
वाकी जोति प्रगट सब ठाऊँ, दीपक सिस्टि जो महंमद नाऊँ।
वोहि लगि दैअ सिस्टि उपराजी, त्रिभुवन पेम दुन्दुभी बाजी।
नाव महंमद त्रिभुअन राऊ, वोहि लागि भौ सिस्टि क चाऊ।

बाकी अँगुरी करकै हम, अग्या, चाँद भयो दुइ खंड।
वाकी धूरि जो पाँव की[3], अचल भयो ब्रह्मण्ड ॥ ७ ॥

मूल महंमद सब जग साखा, बिधि नौ लाख मटुक सिर राखा।
वोहि पटतर दोसर कोउ नाहीं, वोह सरीर यह सब परछाहीं।
करता गुपुत सबै पछिआना[1], प्रगट महंमद काहुँ न जाना।
अलख लखै जेहि पार न कोई, रूप महंमद काछे सोई।
रूप क नाम महंमद धरा, अरथ न दूसर जाकरें[2] करा।

ऊँचे कहौं पुकारि कै, जगत सुनौ सब कोइ।
प्रगट नाउ महंमद, गुपुत ते जानेहु सोइ ॥ ८ ॥

---

[६] १ अहै रा० । २ सिस्टि रा० । ३ भेदिया रा० । ४ गिरवान रा० ।
[७] १ सुनहूँ रा० । २ सइहिं रा० । पॉयन लागी रा० ।
[८] १ पहिचानां रा० । २ एकै रा० ।

चारि यार की सिफति

अब सुनु चहूं मीत की बाता, सत्य न्याय सास्तर कैं दाता।
सत्यगुर वचन सत्य जो जाना, प्रथमहि अवाबकर परवाना।
दूजे उमर न्याय कर राजा, जें सुत पिता हना बिधि काजा।
तिजे उस्मान निस्चै अस्थाना, जे रे भेद बहु भेद क जाना।
चौथे अलीसिंघ बड़ गुनी, दान खरग जें साधी दुनी।

सत्य न्याय सास्तर कर, औ जो करिं संघार।
परगट करम ये साधा, गुपुत हिये करतार॥ ६॥

---

[६] १ मंत रा०। २ वेद रा०। ३ बहु रा०। ४ गिरि एक० (करिः फारसी लिपि)

पातिसाह् की सिफति

साहि सलम जगत भुग्र[1] भारी, जेइ भूँजा बर मेदनी सारी[2]।
जौ रे कोपि पौरी पाँ[3] चापै, सेस इन्द्र कर ग्रासन काँपै।
नौ खंड सात दीप सब ठाऊँ, भएउँ[4] भरम ग्रति क्रिति क नाऊँ[5]।
ग्रंत्रिख कै ग्रस राज सँवारा, सत्रु न जग मों रहा जुझारा।
दसौ दिशा मानै जग संका, खरग झार भा खरभर लंका।

प्रिथिमी पति जगौं गाह्क, दस ग्रौ चारि निदान।
पर भुग्र गंजन सापुरुस, गरू गरिस्ट सुजान ।। १० ।।

गरुये तप गरुये ग्रौतारा, काबिल हिन्दु भा येक बारा।
उत्तर हेमगिरि जो परवाना, दक्खिन सेतबंध लगि ग्रानाँ।
पंछिव पठौ रूम सेवकाई[1], पूरब जलनिधि तीर दोहाई।
नौ खंड प्रिथिमी भयेउ ग्रनंदू, धरम दुदिस्टिल सत हरिचंदू।
दान सरग खरग लै लावा, त्रिभुग्रन सिस्टि न पटतर पावा[2]।

नौखंड देहिं ग्रसीस, प्रिथिमी राज करहु जग माह।
जौ लगि ससिहर सूर धुग्र, कायेम जग पर छाँह ।।११।।

न्याय खरग[1] जे ग्रति उतंगा, भेडि हुंडार चरत येक संगा।
न्याय बखान न जा मुँह[2] कही, गाइ क पूँछि सिंघ कर गही।
गरुग्रा राज महातप भारी, फूली निकट नीर[3] फुलवारी।
राजनीति जो कीन्ह संसारा, बरी[4] ग्रबली तें बोल न पारा।
नीर खीर कर होइ बिचारा, जब चाहिय तब पाइग्र बारा।

हरख ग्रनन्द उछाह सुख, सब कोई रस मान।
दारिद दुख सन्ताप भै, पुहमी छाँड़ि परान ।।१२।।

---

[१०] १ भा रा०। २ तारी एक०। ३ बैरी पर एक०। ४ भै एक०।
५ गुन रा०।

[११] १ पच्छिउँ भयेउ रूम साम खाईं–रा०। २ लावा एक०।

[१२] १ किरति–(माताप्रसादजी द्वारा प्रस्तावित)। २ मोहि रा०।
३ निहकंटक (माताप्रसादजी द्वारा प्रस्तावित)। ४ बीर एक०।

केहि मुख कहौं दान की बाता, रायेन्ह पाट मदुक कर दाता।
जब रे दान कौ बार उघारे, करन आइ तब हाथ पसारे।
दान निसान सरग गै बाजै, हेतिम करन भोज बलि लाजै।
सत हरिचंद्र दानि बलि करा, धरम दुदिस्टिल जो[१] औतरा।
गुन[२] विद्या सरि भोज न पावा, साका विक्रम जाय न लावा।

साात दीप नौ खंड प्रिथिमी, चहुँ दिसि हरख अनन्द।
एक बिरह[३] दुख परिहरि, दूसर और न दन्द ॥१३॥

सेख बड़े जग पीर अपारा, ग्यान गरुअ जे रूप अपारा।
सौंरि पाँव परसै जो आवै, ग्यान लाभ हो पाप गँवावै।
जा कहँ मया जीउ तें करहीं, सहज बलाइ ताज सिर धरहीं।
जाके दिस्टि करहिं प्रतिपारहि, कया कलंक धोइ जे डारहि।
जे सिख गुरू दिस्टि[१] न पाला, सो आपन जम धोवै काला[२]।

गुर दरसन दुख धोवन, धन जे दिस्टि[३] सुभाउ।
जो[१] सिख गुरु दिस्टि पालै, सो चारौं जुग राउ ॥१४॥

सेख महंमद पीर अपारा,, सात समुंद नाव कंडहारा।
सौंरि पाँव जौ आवै कोई, प्रथमहिं मुख देखत सुख होई।
पुनि दुहुँ जग पूजै मन आसा, परसत चरन पाप गा[१] नासा।
ग्यान छोड़ि जे और न बाता, दस औ चारि मंत सिधि दाता।
बिस्मै हरख न जिव महिं लाहे, संतत रहत लीन लौ माहें[१]।

दाता जौ गुनगाहक, गौस महमंद पीर।
दुहुँ[२] कुल निरमल सापुरुस, गरुअ गरिस्ट गंभीर ॥ १५ ॥

सूर उदै उदिनल[१] संसारा, उदै अस्त लगि भा उजिआरा।
जाकहँ[२] नैन सूर उजियारे, परम पद ग्यान चेताये तारे।
जाके जग गादुर औतारा, ताके सूर उवत अँधियारा।
जौ साहस कलि उटवै कोई, साहस तें निस्चै सिधि होई।

---

[१३] १ कलि रा० । २ दान एक० । ३ बीर एक० (अपूर्ण) ।
[१४] १ सिस्टि एक० । २ धोइ निकाला रा० । ३ सो एक० ।
[१५] १ जो एक० । २ दुइ एक० ।

सेख महंमद पीर[१] अपारा, साहस बाजु सिद्धि देनिहारा।
जैसे पाहन के परसत, तामँ[४] हेम होइ जाहि।
तिमि मैं सेख जो परसत, बिनु साहस सिधि पाइ ॥१६॥

परम तंत लौलीन जो जानै, सो मन के घर पछिआनै।
मन के घर[१] बिखम अपारा, गरुआ हो सो लावै पारा।
जेहि मन के घर[१] लखि आवै, सहज ते आपु अपान गँवावै।
गुरू पीर जाहि[२] परसादा, ते चीन्हा मन बाद बेवादा।
परगट कला सब काहू देखा, पै बिरुला जन गुपुत सरेखा।
यह दूनौ बिधि निर्मया, सिस्टि राय जग धीर।
इन्ह दूनौ सिर ठाकुर[३], गौस महंमद पीर ॥१७॥

ग्यान समुँद अथाह गंभीरा, जेइ सेवा सो लागा तीरा।
काहू ते सिर सौ बुडकावा, कोऊ अंग धोइ कै आवा।
काहू जाइ हाथ मुख धोवा, काहू पानी पिआ तौ गोवा।
कोई जाइ देखि फिरि आवा, पुन्य सुफल[१] सब काहू भावा।
नातरि समुंद नीर बिहूना, पै बिरुला सिर पुरब क पूना।
जा कहँ जैसी निस्चै, ताकहँ[२] तैसी सिद्धि।
उदधि अपार पीर कलिजुग महिं, ग्यान अर्थ[३] कै निद्धि ॥१८॥

जो कोइ मन इच्छा कै आवै, देखत मुख परतिग्या पावै।
जा कहं ब्रह्मग्यान चितावै, औ लौलीन तन्त सिखावै।
सोवत[१] जो दिन आपु गँवावै, सो किन हाट मोट धरि आवै।
करम बात पै जानि न जाई, जेहि जस लौ तेहि तस अधिकाई।
जेहि सिर पूर्व करम कै रेखा, ते जग सेख महंमद देखा।
जो रे डीठा[२] बिधि सिरा, तिन्ह घर[३] बाजा तूर।
जो गादुर कै सिरा[४], तिन्ह अँधियारे सूर[५] ॥१९॥

---

[१६] १ उदइल रा०। २ जाके एक०। ३ सिद्ध रा०। ४ भीन रा०।
[१७] १ आखर रा० (देखिये १९.६ जहाँ घर = घट आया है) २ चाहहु (माताप्रसादजी द्वारा प्रस्तावित)। ३ ऊपर रा०।
[१८] १ जिअब रा०। २ तन ताके एक०। ३ धर्म रा०।
[१९] १ सेती एक०। २ डिठिआरे रा०। ३ घट रा०। ४ निरमा रा०। ५ पूर रा०।

येहि कलि जेतिक पंडित भये, मूँड मुड़ाय सिद्धि लइ गये।
अरु अनेग मूरख जो आये, सो सभ परमपद ग्यान चेताये।
ग्यान ध्यान छुटि और न काजा, भेस बिभेस दुनौ जग राजा।
जो कोइ देवस चारि संग रहा, ते छांडा दुहुँ जग संग गहा।
जा तन मया दिस्टि भरि हेरा, ते आपुहि दुहु जुग ते फेरा।

हिया अंजोरि न पटतर पावै, कोटि सूर परगास।
तीनि लोक निज पी बसा, गरुआ गरव गरास ॥२०॥

जैसा पीर कहा परवानै, तीनि भुअन भेद सो जानै।
गुरु के बचन परमपद पावै, सतगुरु हो सो ग्यान लखावै।
जो अग्या गुर कै नहि मानै, कहा करै गुर सिख न जानै।
हिय का अन्धा सोइ गँवारा, जस उल्लू दिनहीं अँधियारा।
चेतहु मूढ गुरु कै उपदेसा, नातरि मुये होत अन्देसा।

चेतहु मुगुध देस यह, लेहु गुरू औराधि।
आठौ सरीर सुध होइ, करहु समाधि समाधि ॥२१॥

बारह बरिस धुन्ध केदरी[1], जहाँ सूर ससि दिस्टि न परी।
बिकट बिखम भयावन ठाऊँ, कलिजुग धंधलर[2] जो नाऊ।
चहुँ दिस परबत बिखम अगंमा, तहाँ न कतहूँ मानुस गंमा[3]।
तहाँ जाइ कै जपा बिधाता, कै अहार बन जामुनि पाता।
मन मतंग मारि बस किया, ग्यान महारस अंब्रित पिया।

साहस उठै अपान जो, लीन्ह सिद्धि औराधि[4]।
बारह बरस रहे बन परबत, लाए ब्रह्म समाधि ॥२२॥

---

[२१] यह छन्द रा० में नहीं है।

[२२] १ तहाँ गै दुरी (माताप्रसादजी द्वारा प्रस्तावित)। २ धुँध दरी रा०। ३ संगमा एक०। ४ राधि एक०।

छन्द २२ के पश्चात् रा० प्रति में निम्न दो छन्द और हैं जो एक० प्रति में नहीं पाये गये।

अब सुनु खिजिर खान सिरदानी। रन अमिट बुधिवंत गियानी।
गुन विद्या साहस सिधि पूरा। पंडित पढ़ा चढ़े रन सूरा।
दाहिनि भुजा साहि कै भारी। जेहि दिसि खड़ा सोइ दिसि गाढ़ी।
जा कहँ मया बचन मुख बोलै। जिय ध्रुव अचल न कबहूँ डोलै।

अरे अरे बचन तोर कहँ बासा, अरु कहँ हुते तोर परगासा ।
अरु कहँ ते उतपति भै तोरी, जहाँ नाहिं सँचरै बुधि मोरी ।
अचरज एक मोरे मन[1] अहई, कोइ न अरथ ताहि कर कहई ।
बचन कै उतपति मुँह सेऊ, मानुस बोल अंमर हो केऊ ।
रहै न बचन कै पति जहाँ, कैसे बचन अमर हो तहाँ ।

देखा मनहिं बिचारि कै, बचनै बचन हिय माहँ ।
बचन ऐस बिधना कै, जो बरतत सब माहँ ॥२३॥

बचन जौ न निरमवत बिधाता, केत[1] सुनत कोई रस बाता ।
प्रथमै आदि सिस्टि जे सारा, हरि मुख बचन लीन्ह औतारा ।
एकै बचन जे आदि ऊँकारा, भल मन्दा ब्यापै संसारा ।
उतपति बचन सिस्टि जे सारा, बचन बेवहरै सब संसारा ।
विधनै जगत बचन बड़ कीन्हा, बचन हुँते पसु मानुस चीन्हा ।

काहु सरूप न देखा, काहु न जाना ठाइँ ।
बचन सुने हुति परगट, त्रिभुअन नाथ गोसाइँ ॥२४॥

बचन अमोलिक नग जे आवा, बचनहुँ ते गुर ग्यान लखावा ।
चारि बेद बिधनै निरमैऊ, बचन जगत मो परगट भयऊ ।
बचन सरग भुइँ ते आवा, औ बिधनै जग बचन पठावा ।

महा दानि जिमि समुंद्र हिलोरा । असत न मुख सौं निकसै थोरा ।
रन सरूप औ सूरा, खट रस विद्या जान ।
दानि खरग सत साहस, दस औ चारि निधान ॥
कटक माहँ एकै खँडराहा । बादसाहि सइं आपु सराहा ।
खरग दरब अरु रुहिर पियासा । हिलत सांग जस मूँस उदासा ।
सुनतहि खिजिर खान प्रन दानौं । अरि उरि जनु बिजुली वज ठानौं ।
चढ़े अनी सब सूर सराहीं । बाईं भुजा रूप सब जाहीं ।
महाबीर जग ऊपर नौनां । बारह बानि सुबासिक सोनां ।
दान खरग कलि नहिं मिल, गुन गाहक संसार ।
सुनत सत्रु जिअ डरपै, जेत कर गहे करबार ॥

[२३] १ मोहिं एक० ।
[२४] १ कहत एक० ।

जो किछु बचन क सरवरि पावत, बचन के ठाँव सोइ भू आवत।
प्रथमहिं मानुस भै अँतरिया, बहुरि अमर जुग चारि न मरिया।
बचन अमोल पदारथ, बरन न सके उरेख।
बचन ऐस बिधना कै, जाकर रूप न रेख ॥२५॥

प्रथमहि आदि पेम प्रविस्टी, अरु पाछे जो सकल सरिस्टी।
उतपति सिस्टि पेम ते आई, सिस्टि रूप यह पेम सवाई।
जगत जन्मि जीवन फल ताही, पेम पीर जिय उपजी जाही।
जेहि जिय पेम न आइ समाना, सहज भेद तें किछू न जाना।
जेहि जगत[1] बिरह दुख दैऊ, त्रिभुअन केर राउ सो भैऊ।
जनि केउ बिरह दुख जिअ मानै, दुहु जुग औेर न सुक्ख।
धन जीवन जग ताकर, जाहि बिरह दुख दुक्ख ॥२६॥

बचन अमोलिक नग संसारा, जेहि जिय पेम धन्य औतारा।
पेम लागि संसार उपावा, पेम गहा विधि परगट आवा।
बिरुला कोइ जागे[1] सिर भागू, सो पावै यह पेम सोहागू।
पेम अंजोरी सिस्टि इंजोरा, दोसर[2] पाव न पेम क जोरा।
सबद ऊँच चारौ खंड बाजा, पेम पन्थ जिउ[3] दैइ सो राजा।
प्रेम हाट है चहुँ दिस पसरी, गै बनिजौ जे लोइ।
लाहा अरु फल गाहि कै, जनि डहकावै कोइ ॥२७॥

सिस्टि मूल बिरहा जग आवा, पै बिन पूर्व पुन्य को पावा।
पेम पदारथ जगत अमोला, निस्चै जिव जानौ यह बोला।
देखा सुना जहाँ लगु जाई, पेम बिवरजित थिर न रहाई।
पेम दीप जाके हिय[1] बरा, ते सब आदि अंत उजिअरा।
बिरह जीव जाके घट होई, सदा अंमर पुनि मरे न कोई।
कौनौ पाट पढ़ैं नहिं पावै, बिरह बुद्धि जे सिद्धि।
जाकहँ देइ दयाल दया कै, सो पावै यह निद्धि ॥२८॥

जेहि जिय परै पेम की रेखा, जहँ देखी तहँ देखी देखा।

---

[२६] १ जगदैअ रा० ।

[२७] १ जाकें रा० । २ दोर एक० (स छूटा है) । ३ सिर रा० ।

[२८] १ घट रा० ।

उपजि परै जेहि हिये गियाना, जहँ देखी तहँ आपु अपाना।
पुनि जो ग्यान बिरिख फर देई, सरवस तै दोसर नहिं लेई[१]।
कतहुँ सिस्टि जो रहै न दंदू, जहं देखी तहं आदि अनंदू।
तुह दीपक जे सिस्टि क ग्रेहा, तुह जीउ का जानसि देहा[२]।

दुख सुख सब संसार कर, जेत भावै तेत होउ।
सो सब परसै आइ तोहिं, तोहिं[३] बिनु और न कोउ॥२९॥

तैं जलधर जो निधि का भरा, काहे मरसि कुंभ घट भरा।
तोर बदन त्रिभुअन इंजोरा, सकल सिस्टि जो[१] दपन तोरा।
तोरि जोति सकल परगासा, त्रितुलोक पाताल अकासा।
सकल सिस्टि मों परगट तहीं, सरबस तैं दोसर जो नहीं।
जो कोइ खोव सोइ पै खोवा, सो का खोव जो न कछु खोवा।

कौन सो ठाँउ जहाँ तैं नाहीं, तीनि भुवन उजिआर।
निरखि देखु तै सरबस, पुरे सब ठाँ तोर बेवहार॥३०॥

अब सुनु कर्म बात जो आई, निरगुन रूप बैसु लौ लाई।
तन सों उरध लेहि गहि साँसा, अग्नि डोल जो डोल बतासा।
झरकै पौन अग्नि उदगरई, तौ रे कलंक कया कर जरई।
जौ लगि कस्ट गहे रह सोई, तौ लगि सरब गात धुनि होई।
औ तेही धुनि मो कर बासा, ताहि जोति भीतर कबिलासा।

कोटि माँह बिरला जन, भोगै वोह कबिलास।
सुंन मंदिल मो बास जस[१], जहाँ न कछू प्रगास॥३१॥

परिहरि सुद्धि बुद्धि जे ग्याना, कया बेवरजित लाये ध्याना।
जौ समाधि लौ लागै तहाँ, आपु अपान न पावै जहाँ।
ग्यान अपार जहाँ अग्याना, तहाँ आपु तें आपु अयाना।
राजसमाधि लाउ लै तहाँ, आपु अपानहि पाउ सुधि जाहाँ।
निरगुन जहाँ निरंजन सुंना, तहाँ आपु ते आपु बिहूना।

सहज अलो लै लाइ कैं, निगम गोफ रह सूति।
जहाँ न तैं औ कोइ नहिं, अरु एकौ करतूति॥३२॥

[२९ १ कोई एक०। २ ग्रेहा एक० (पुनरुक्ति)। ३ X एक०। (ऐसा
[शेष फुटनोट अगले पृष्ठ पर देखिये]

गढ़ अनूप बस नग्र चर्नाढ़ी[1], कलिजुग मों लंका सो गाढ़ी।
पूरब दिस जगरो[2] फिरि आई, उत्तर पछिम गंगा गढ़ खाई।
देखत बनै जाइ नहिं कहई, गढ़ भीतर गंगा जल रहई[3]।
ऊपर छाजा अनौन भाँती, हेठ बहै सुरसरि सरसाती।
साहि सहस जौ लागैं आई, जाहिं मारि सिर ठेहौं[4] खाई॥

नगर अनूप सोहावन, औ गढ़ बिखम अगंम।
बरबस हाथ न आवै, पै बिन पुरब करंम॥३३॥

गढ़ सोहावन गढ़पति[1] सुर ग्याना, नगर लोग सब सुखी सुजाना।
बसरहिं भगती बीनानी[2], आनन्दित परदुखी बिनानी।
दाता औ दयाल धरमिस्टा, सबै लीन रस प्रेम गरिस्टा।
भागिवंत भोगी सब लोगू, औ सब घर कुलवंत संजोगू।
मुँह अस्तुति जो कहा न जाई, जानहु सूर भुइं छावा आई।

खोरि खोरि जौ घर घर, नगर अनंदु हुलास।
कलिजुग मों जेंव प्रिथिमी, उतरि बसी कविलास॥३४॥

यह खोटी जो नागिन कारी, त्रिभुअन मोहिनि बिर्म्भ कुमारी।
जगत जन्मि जहाँ लगु आये, ते सब मोहि भोरै येइ खाये।
येइ कलि बारी बहुतै चाही, बरि बरि गये न काहू ब्याही।
येइ पापिनि संसार भोरावा, लोभ बिगूचे मूल[1] न पावा।
असि चंचल जानि मोहै कोई, लाभ मूल सौं जाइ न खोई।

प्रतीत होता है कि 'आदर्श प्रति' में इसके स्थान पर २ लिखा था जिससे यह छूट गया) ।

[३०] १ मुख रा० ।

[३१] १ × एक ।

[३३] १ झनाडी रा० । २ जरगी रा० । ३ बही रा० । ४ ठँगा रा० ।

[३४] १ सुरपति एक० । २ सब सुर हरि भगत औ ग्यानी रा० ।

सुअटा सेंवर बेगि तजु, बहुत बिगूचे पंखि।
येहि पापिनि कों भोरवै[२], जाके हिया न अंखि ।।३५।।

यहि मोहिनि जनि मोहै कोई, लाभ मूल सौ प्रापति होई।
चली जाइ जिमि तार की छाँहीं, ई बिटारि काहू की नाहीं।
दिन पंच पंच सब सूते राती, काहू न भौ जंम अहिवाती।
जेहि पालेसि निस्चै तेहि मारेसि, कौन सो जाहि उठाइ न डारेसि।
ऊँच नीच सबके घर जाई, पै अस्थिर कहुँ थिर न रहाई।

मोहिनि रूप छिनारि कै, खोटी बिर्ध कुमारि।
सब संसार भोरै येइ खावा, चंचल चपल बिटारि ।।३६।।

संबत नौ सै बावन जब भैऊ, सती पुरख कलि परिहरि गैऊ।
तौ हम चित उपजी अभिलाखा, कथा एक बांधउं रस भाखा।
सुरस बचन जहाँ लगि सुने, कबि जो समाने ते सभ गुने।
जो सभ कहौ सुरस रस भाखी, सुनहु कान दै पेम अभिलाखी।
मैं छाँड़ा गुन कर परसादू, तुह छाड़हु जो बाद बेवादू[१]।

अंम्रित कथा सुरस रस, सुनहु कहौं जो गाइ।
वोछ[२] परत जो अक्षर, कबि महँ[३] लेब छपाय ।।३७।।

पंडित सुन बिनती येक मोरी, विनऔं पाँव दुऔ कर जोरी।
जौ भल बचन सराहि न जाई, वोछ न दुलखै दोस लगाई।
जौ पढ़ि बचन भले किछु[१] भेदहु, दोस लगाइ न वोछ उछेदहु।
जहाँ न आखर पुरे सँवारहु, भलआ भये मन्द प्रतिपारहु।

---

[३५] १ लाभ रा०। २.सो रवैं रा०।
[३६] इस छन्द के बाद रा० तथा भा० में निम्न छन्द और है:—
सो बसंत संसार न आवा। जेइ फागुन पतझार न खावा।
ससि पूनिव नहिं उवसि अगासा। जो रे अमावस कहँ न बिनासा।
जनि भूलिहु नर बुद्धि गियानी। एहि कलि पौन कलस जस पानी।
जानि बूझि जनि होहु अयाने। अंत बहुरि का फिरि पछिताने।
कलि औतरि भा अमर न कोई। अंत हाथ पछितावा लोई।
जेहि कलि रहै न पाइय, तेहि सेउँ प्रीति न लाउ।
एहि जग दुइ गुन सेतें, जनि आपुहिं डहँ काउ।।

का तेहि जिये बोछ जो होई, कहहु काह लै कीजै सोई।
मूरख जौ रे उछेदिहि, ताकर नाहीं सोच।
धन जग ताकर औतरव, अरथ लाइ गह[3] पोच ॥३८॥

पण्डित मोहिं न दोस लगाईहि, मूरख से जो आपु जनाइहि।
जौ पंडित जन होय न बायें[1], का मूरख के दोस लगाये।
तव हम भये दोस कर[2] बासा, जब रे पितै छांड़ा कविलासा।
बूझि पड़ मोर आखर लोई, विन बूझै मति दुलबे कोई।
दस महं एक वोछ जौ होई, ताके सीस चढ़ै मति कोई।
बचन अनूप भले मुनि, मूरख रह सिर नाइ।
वोछ बचन जो पावै, अक्षर पकरै धाइ ॥३९॥

अंम्रित कथा कहौं जो गाई, रसिक कान दै सुनहु सोहाई।
रस की बात रसिक पै जानै, बिना रसिक नीरस कै मानै।
रस बिन घुन अंम्रित परिहरई, बिना रस ऊँट ऊख का करई।
जाके रस जेहि मों रस होई, तेहि रस मों रस पावै कोई।
जो जेहि रस कै जान न बाता, तेहि ते रस अनरस उतपाता।
रस अनेग संसार कर, सुनहु रसिक दै कान।
जो सब रस महँ राउ रस, ता कर करौं बखान ॥४०॥

---

[३७] द्रष्टव्यः भा० में यह छन्द नहीं है।
१ सवादू रा०। २ हरुव (?) रा०। ३ मुँह रा०।
इस छन्द के बाद भा० तथा रा० प्रति में निम्न छन्द पाया जाता है:—
कथा एक चित दइयं उपानी। सुनहु कान दै कहौं बखानी।
अमी रसिक रसाल जो होई। गुन औ दोख बिचारहिं सोई।
ओछु आखर पढ़ि बूझि न जाई। किन गुन पीछे दोस लुकाई।
उतपति दोस दइय हम लावा। औ निरदोस लाइ जनमावा।
आदि दोस लागा होइ जाही। अंत दोस लागै निजु ताही।
निहकलंक निरदोसी, एक अकेला सोइ।
दोसिहिं दोस जो लागै, तेहि का अचरिजु होइ ॥
[३८] १ जौ एक०। २ लगावै एक०।
[३९] १ बनाये एक० (वर्णविपर्यय)। २ भौ दोसर घर एक०।

आदि कथा द्वापर महँ भई, कलिजुग मों भाखा कै[१] गाई।
गढ़ कनैगिरि नगर सोहावा, जनु कबिलास उतरि कै आवा।
सुरजभान तहँ राज बखानी, नौ खंड सात दीप जग जानी।
राज साज अंन धन संबूहा, गनै न जाइँ तुरै गज जूहा।
आउ सूर पियर धूप आई, संतति सूर उदित न लभाई।

बिधि प्रसाद भरि पूरा, है गै जो मैमंत।
सुत चिंता पै रैनि दिन, राजा के चित नित ॥४१॥

---

[४१] १ जो एक०।

तपा एक आवा तेहि ठाऊँ, लोगन्ह जाइ जो परसा पाऊँ।
तेहि पाछे राजा चलि आवा, पाँव धूरि लै[1] सीस चढ़ावा।
येह बड़ि मया बिधातै[2] कीन्हा, तुम्ह सौं भेट हमहिं करि दीन्हा।
जस माँगा तव दैंअ तस दीन्हा, मोरि बिनती बिधनै सुनि लीन्हा।
साध एक मोरे जिउ अहई, तोसौं भले सोइ[3] निरबहई।

तपै समाधि लगाई, लोग बहुरि घर आव।
एकसर राजा बन महँ, सेव तपा कर पाँव ॥४२॥

रात दिवस सेवा जे लागा, दिवस न सूतै रैनि सब[1] जागा।
भूख पियास नींद सुख छोड़ा[2], तपा आगे निसदिन रह ठाढ़ा।
बारह बरिस सेव तौ कीन्हा, तपा समाधि छुटे सुधि चीन्हा।
कौन आहि तैं मानुस बारा, कौनें काज तुह एक पाँव खरा।
मैं राजा यहि नगर मँझारी, बारह बरिस भा सेव तोहारी।

अग्नित अंन धन रानी, है गै सहन भंडार।
एक पूत न बिधि दीन्हा, जासौं उतरौं पार ॥४३॥

अस बिनती जौ राजै कीन्हा, तपा परसंन भै आसिख दीन्हा।
तपै कहा सुनु राजकुमारा, तोकहँ दीन्ह बिधनै एक बारा।
कै जेवनार पिंड एक कीन्हा, हरख सहित राजा कहँ दीन्हा।
जो रानी है[1] प्रान पियारी, ताहि देहु मन भाव तोहारी।
राजै लै जो सीस चढ़ावा, परसि पाँव तौ नगरहिं आवा।

पटबंधी जो रानी, ताहि कहेहु तुह खाहु।
कै अस्नान सुद्ध होइ, तौ इहवाँ सौं जाहु ॥४४॥

---

[४२] १ धोइकै रा० । २ बिधनै एक० । ३ मो एक० ।
[४३] १ निसि एक० । २ न बाढ़ा एक० ।
[४४] १ कै एक० ।

सुत संतति कलि दूसर भैऊ[1], सुख अधार जग जीय नसाऊ ।
सुत सें मात पिता जग लहई, सुत सें नाँव जगत[2] मो रहई ।
सुत बिन है ब्रिथा संसारा, सुत दीपक बिनु जग अँधियारा ।
सुत बिन मुये नाँव को लेई, सुत बिन को कत पिंडा देई ।
येह सब कहा सपूत क बाता, जनि कपूत बंस देइ बिधाता ।

जनु छठि अंगुरी हाथ मों, उपजै काहु सरीर ।
जौ राखिय तो अपजस, जौ काटिय तौ पीर ।।४५।।

बिरिध बैस जे आस निरासा, राज ग्रिह ते निर्मये आसा ।
संतति आस राय जब पाई, करै लागु सुत आस बधाई ।
मेख लग्न अस्विनि पैसारा, दसयें मास[1] ऊँच अवतारा ।
पचयें ससि सूरज छठएं, दसयें सुक्र वृहस्पति नवएं ।
दिस्टि सनीचर लखत लिलारा, दसयें राति भयो औतारा ।

मदन मूरति भागिवंत, रानी राय अधार ।
सुभ महूरत औतारा, राजा कुल उजियार ।।४६।।

भोर भए पंडित जन आये, रासि बारा[1] जो गरह गनाये ।
पंडित गुनि गुनि कहा विचारी, होइ नरेस छत्रपति भारी ।
गन गंध्रप मुनि बार जोहारैं, जग नरेस सब सेवा सारैं ।
लखनवंत भागिवंत[2] बिनानी, रन छत्री साका परवानी ।
दाता गरुअ गरिस्ट गंभीरा, सब दयाल परपीरी[3] पीरा ।

लखन चिन्ह कंठ माथे, रुद्र रेख दुहुँ पाउँ ।
सिंघ रासि कुल दीपक, धरा मनोहर नाँउ ।।४७।।

चौदह बरिस एगारह मासा, नवयें दिन पूनिव परगासा ।
जन्म सूर सतएं ससि तारा, मिलै सजन कोई पेम पियारा ।
बुद्धवार बीफै की राती, उपजै पेम[1] कुंवर के छाती ।

[४५] १ आऊ रा० । २ (जब जियत ?) गुप्तजी के संस्करण में ।
[४६] १ अंस एक० ।
[४७] १ बारा गन एक० । २ बुधिवंत रा० । ३ परिखिहि रा० ।

तेहि बियोग हो कुंवर बियोगी, बरिस एक भौं दिसा कै जोगी।
तेहि पाछे तौ जंम जंम राऊ,, अस जो लग्न गरह[2] का भाऊ।

सुभ्भ लग्न जन्मौती, पै किछु गरह बिसेख।
बरिस चतुरदस ऊपर, कछु उदास जिव देख ॥४८॥

छठी राति छठि बाजन बाजे, घर घर नगर बधावा साजे।
सब घर नगर उछाह कल्याना, खोरि खोरि आनंद निसाना।
राजा ग्रिह सुनि सबहीं आये, करैं छतीसौं पौनि बधाये।
म्रिगमद तिलक चतुरसम[1] अंगा, औ सोभै उर हार तरंगा।
मुख तंबोर सिर सेंदुर रोरा, गावैं तरुनी होइ अंदोरा।

सब घर नग्र बधावा, औ सब[2] खोरि अनंद।
सुरस कंठ सब[2] गावैं, धुरवा धुरपद छंद ॥४९॥

राजा ग्रिह सुनि हर्ख बधावा, सब घर तुरी पटोर पठावा।
औ जत नग्र अमनैक छाये, ते सब जन पहिराउरि पाये।
देस किसान जहाँ लगु आहे, ते सब एक बरिस न उगाहे।
औ जत नगर देस महँ दुखी, ते सब किये दान देइ सुखी।
औ अनेग जो भई बधाई, सो मोहि जीभ कही न जाई।

हाट पटोरन्ह छावा, म्रिगमद अगर कपूर।
नग्र खोरि सब महँकै, तरुनी सिर[1] सेंदूर ॥५०॥

बरहे दिन बरही भै भारी, नगर लोग सब नेवता भारी।
दुखी लोग बैसाइ जेंवावा, अमनैकन्ह घर घोर पठावा।
भाटन्ह घोरा दै बहुराये, भाटिनि सबै पटोर पेन्हाये।
औ जाचक जहाँ लगु आवा, जो जस तेहि तस द बहुरावा।
नगर छतीसौ पौनि सवाई, सबकैं राजै दीन्ह बधाई।

सोना रूपा अन्न धन, है गै रतन पँवार।
राजै राजकुँवर कै बधाइ, राखा किछु न भंडार ॥५१॥

पाँच धाइ औ पाँच खेलाई, राजै ढूँढ़ सुजान मँगाई।
औटि दूध नित करै अहारा, जस बसंत रितु तरु[1] कै डारा।

---

[४८] १ बिरह रा० । २ केर रा० ।
[४९] १ चित्र जे एक० । २ जो एक० ।
[५०] १ माँग रा० ।

दिन दिन पलुहै[२] राजकुमारा, बासर[३] पँचअंब्रित जेवनारा।
रानी राउ देखि रहसाहीं, अति हुलास न देह समाहीं।
खन खन राजा अंकम लावै, नेवछावरि नित दर्ब लुटावै।

ब्रिध बैस देखि संतत, खन खन रहसै राउ।
सब दिन कोड कोलाहल, औ निसि[४] हर्ख बधाउ ॥५२॥

निसि बासर सुख कै अस भोगू, राज कुंअर भै आव संजोगू।
पँचये बरिस धरा भुंइ पाँऊँ, पंडित कै बैसारेउ राऊ।
दरब कोटि दुइ आगे राखा, तापर बिनती राजै भाखा।
मोहि तोसौं नहिं लागै खोरी, दिन दिन करब सेवा मैं तोरी।
जैस मोर तैसन सुत तोरा, बिद्या देत न लाये भोरा।

आपुहि दोस न लाएव, बिनवै चर्न गहि राउ।
प्रतिपालेहु बालापन, आपन मोर हिआउ ॥५३॥

पुनि पंडित कुंअरहिं मन लावा, एक बचन बहु अर्थ पढ़ावा।
जो अस बोल कुंअर औरावा, चित्र उरेहि अर्थ बुझावा।
थोरे दिन भा कुंअर सयाना, बेद भेद बहु भांति[१] बखाना।
अमर जौ अमरु सतभावा, पिंगल कोक कंठ औरावा
व्याकरन और जोतिख गीता, गीत गोबिंद[२] अर्थ को जीता[३]।

और जो ग्रंथ ग्यान जोग के, पढ़ा अनेग कुमार।
निपुन भौ गुन बिद्या, बादि न कोऊ पार ॥५४॥

तौ लगि कुंअर गुन[१] बिद्या साधी, जौ लगि गांठी बरहीं बांधी।
तब जो कुंअर सरौं औराई, साधना नांव सिरिट जेत आई।
खांड फरी औ कोत[२] कटारा, माल सरौ जो साधु[३] कुमारा।
धनुष बान लावौं केहि जोरा, बार बांधि निति मोती फोरा।
देखि कुंअर कै सारँग साजा, सरग धनुख धरती छपि लाजा।

रनँ सूरा बिद्या गुन पूरा, दस औ चारि निधान।
भागिवंत बुधिवंत जो, मदन मुरति सुर ग्यान ॥५५॥

---

[५२] १ सिर एक०। २ बाढै रा०। ३ पसरा एक०।
४ सब दिन एक० (पुनरुक्ति)।
[५४] १ भाउ रा०। २ कवित्त रा०। ३ कीता एक०।

बरहे बरिस कहौं जौ गाई, सहज चाव चित पैसा आई।
अब मैं ब्रिध बैस न संभारौं, राज तिलक सुत हीं कहँ सारौं।
पुनि राजै जन परिजन राये, औ अमतैकन नगर जो छाये।
सबसे राइ कीन्ह मतराई, आयु मोर पियर धूप आई।
पंचहु मते आय जो आजू, कुअरहिं देउँ राज कौ साजू।

पुरुखहिं ब्रिध बैस कै संतति, जोबन बीते कंत।
कहहु बास एह दूनौ, उजरी रितू बसंत ॥५६॥

अब संपति मोरे केहि काजा, कहहु तौ कुंअरहि करौं मैं राजा।
मैं परिहरउँ प्रिथिमी कर दंदू, सुत जो करै राज अनंदू।
कहहु तौ मदुक कुंअर सिर धरऊँ, मैं हरि नाम जपौं जेहि तरऊँ।
जन परिजन राउ औ राने, कुंअर नाम सुनि कै रहसाने।
राज बचन सब काहू भावा, लागे[1] होइ आनंद बधावा।

सापदीप नौखंड पिरिथमी, चहुँ दिसि होइ वधाउ।
राजा[2] राजकुंअर कहँ चाहै, देउँ राज कहँ राउ ॥५७॥

अस्वनि लगन बिहसपति वारा, औ ससि सीतल कर[1] उजियारा।
सुकुल पछ मधु मास सोहावा, राजै राजकुंअर हँकरावा।
आवत कुंअर ठाढ़ भा राऊ, धाइ कुंअर दुइ पकरा पाऊँ।
पुनि राजै तौ[2] अंकम लावा, आपनि ठाँव राज[3] बैसावा।
प्रथमहिं आपु राय जोहरावा, तौ पुनि[4] सकल सिस्टि सिर नावा।

सिर सौं मदुक उतारि कै, धरा कुंअर के सीस।
नगर लोग आनंद कर, सब जग देइ असीस ॥५८॥

राजा राउ जहाँ लगु आये, राज अरया कुंअरहिं सिर नाये।
सात दीप नौ खंड जग जाना, उदै अस्त भै कुंअर कै आना।
सबद ऊँच महि मंडल बाजा, राजपाट कुंअर जग राजा।
त्रिभुअन दिस्टि[1] जौ आयेस माना, सबन्ह कुंअर ठाकुर कै जाना।
सिरजनिहार सिस्टि जे सिरी, सब पर आन कुंअर की फिरी।

---

[५५] १ + एक० । २ कुंत (माताप्रसाद जी द्वारा प्रस्तावित) । ३ सुबर रा० ।
४ दान एक० ।
[५७] १ नगर लोग एक० । २ साजा रा० ।
[५८] १ सूर करै एक० । २ गहि रा० । ३ पाट रा० । ४ जो एक० ।

उदै अस्त महि मंडल, सुर नर मुनि गन देउ।
सब अग्या प्रतिपारैं, करैं कुंअर कै सेव ॥५९॥

जन्मौती सुख दिन जे अहे, ते सब कुंअरहिं सुख निरबहे।
चौदह बरिस इगारह मासा, नवयें दिन पूनिव परगासा।
पुनि जो गरह दसा दिन[1] भारी, दीन्ह आनि कुंअरहिं अँकवारी।
सिंघ लगन सूरज उजिआरा, नौ सत कला क भौ ससि तारा।
दैव जो ग्रंथि जैस[2] गुन धरी, बुधवार बीफै सिर परी।
जन्मौती खति लाभ दुख, जो रे परा लिलार।
तेहि त्रिभुअन जौ लागै, लिखा को मेटै पार ॥६०॥

———

[५९] १ सिस्टि रा० ।
[६०] १ जो एक० । २ इहै जो गुनी साठि एक० ।

अब उतपति सुन पेम[1] की बाता, जैसे कुंअर पीरम[2] मदमाता।
तेहि दिन आये नट परदेसी, नार्चांहि गौरा[3] दक्खिन देसी।
कुंअरहिं सदा नाच मन भावै, निसि बासर तौ त्रित्त करावै।
देखत नाच कुंअर मन भाये, तुरंत बेगि कँछवाय मंगाये।
सुरजभान जो बैसेउ आई, औ जो अहे सब राज अथाई।

देखत नाच अर्ध भै रजनी, अरसे सुर्ज दुआर।
उठी सभा नाच कांछ सब, पौढ़न गये राजकुमार ॥६१॥

पालक सेज मैं बरनौं कहा, कहौं सोइ जो कहिबे अहा।
सैन संजोग कुंअर जौ पाई, अरसानेउ सुख निंद्रा आई।
आपुस महँ बिछुरे जो अहे, दोउ पलक धै नींदन्ह गहे।
भै पालक रति संजम जोगी, जनु बिछुरे दुइ मिले बियोगी।
नींद पीरम सुख बिधनै सिरी, पै जिन्ह चखु न पेम किरकिरी।

मैं का कहौं बिधातहिं, नींदहिं धरा पीरम सुख नाउँ।
का कहि ताहि बखानौं, जाकर नैन मांझ भा ठाउँ ॥६२॥

जगत सुखी अपने सुख माता, दुखी आपने दुख उतपाता।
जाके नैन नींद सों[1] लार्गाहि, दुख सुख दुनौं छोड़ि जो भार्गाहि।
गुन औगुन निंद्रा महँ दोऊ, जागै सोइ जे जानत कोऊ।
नींदहिं जगत जनि निंदहु भाई, बहुतन्ह सिधि निंद्रा महँ पाई।
जो पै कोइ सोइ जग जानै, सो पै नींद परम, सुख मानै।

जेहि सोवत औ जागत, एक भांति बेवहार।
सो पै नींद न सराही, जो जियते धै मार ॥६३॥

जो जियते धै मारि अंडारा, तेहि निंद्रा जनि सोउ गँवारा।
छोटि मीचु जग निंद्रा आई, मीचु जगत बड़ि नींद उपाई।

---

[६१] १ रस रा०। २ पेम रा०। ३ कोड रा०।
[६३] १ सुख एक०।

जस सपने कै सुख औ राजू, जागे आव न कौने काजू।
औ सूती जे आहि सवाई, साँचि सबै झूठी ह्वै जाई।
जागत सोवत जस है येही, येहि जग दुनौ झूठ गन देही।

एक अग्नि निंद्रा जग, जो रे पियै न जाइ।
तेहि निंद्रा जनि सोवहु, मूरख जेहि सबै नसाइ ॥६४॥

हरि हरि कहाँ गयेउँ कहँ आयेउँ, का कछु कहै लिये का कहेऊँ।
कुंअर बात मैं कहिबे लई, बीच नींद मोहिं हरि लै गई।
अब सुनु पलटि कहौं जो बाता, जब कुमार सुख निंद्रा माता।
बिधि संजोग भौ अछरिन केरा, सोवत कुंअर सेज पर हेरा[1]।
देखा गंध्रप मुरति अमोला, देखि सुरहिंनिन कर मन डोला।

कहा कि यह मानुस हम अछरीं, आव न हमरे काज।
एहि सरि कन्या हेरहु, उदै अस्त महि राज ॥६५॥

उदै अस्त जहँ लगु जग रेखा, कौन सो ठाँव जो हम नहिं देखा।
हम हहिं सब संसार बिनानी, ढूंढहिं येहि जग जोग परानी।
कोइ सराह सोरठ गुजराता, कोइ कह सिंघलदीप कै बाता।
त्रिभुअन चित आईं दौराई, कुँअर जोग जग[1] नारि न पाई।
पुनि उठि जनी एक जौ कहा, एहि रे जोग कन्या एक अहा।

विक्रम राय सकबंधी, नगर महारस थान।
तेहि के घर मधुमालती, रबि ससि रूप छपान ॥६६॥

सुनत नाँउ बहुते चित भाऊ, कोइ कह कुंअर रूप अधिकाऊ।
पुनि सब मिलि कै कहा बिचारी, पटतर देखिय कुंअर कुमारी।
कोइ कह कुंअरि इहाँ लै आई, कोइ कह कुंअर उहाँ लै जाई।
जनी एक पुनि[1] कहा बुझाई, जातै आवत रैनि सिराई।
पुनि मोहिनि चखु निंद्रा लाई, लीन्हा कुंअरहिं सैन उचाई।

जहँ सोवै सुख सेज्या सोहागिनि, तीनि भुअन उजिआरि।
लै पालक तहँ डाँसा सम कै, देखा रूप उन्हारि ॥६७॥

---

[६५] १ घेरा रा०।
[६६] १ जो एक०।
[६७] १ जो एक०।

देखा सो नहिं जाइ बखाना, दिन सूरज निसि चांद छपाना।
अचक रहा किछु[1] कहा न जाई, देखि रूप सब रहीं लजाई।
येहि देखहिं तौ अधिक लोनाई, वोहि निरखैं तो रूप सवाई।
अपनी अपनी कला सपूनी, कोइ न देखी पाव बिहूनी।
अपने रूप कुंअर निरमला, बर कामिनि मुख सोरह कला।

जौं जौ निरखि निहारैं, तौं तौं अधिकै रूप।
तीनि भुअन मों बिधनैं, येइ दुइ[2] सिरा अनूप ॥६८॥

देखा रूप अधिक कै दोऊ, एक एक ते अधिक न कोऊ।
जौ बिधि इन्ह दुहुं होइ मेरावा, बाजै तीनौं लोक बधावा।
जोगहिं जोग मिलै सुख होई, औ सुख इन्हें जौ देखै कोई।
तीनि भुअन जग जीवन साईं, इन्ह दुहु जोग मिलाव गोसाईं।
त्रिभुअन सिस्टि ढूंढ़ि मैं[1] रही, इन्ह दुहु सम तीसर कोइ नहीं।

यह रे सूर वह ससिहर, यह ससिहर वह सूर।
इन्ह दुहुं पेम प्रीति जौ उपजै, त्रिभुअन बाजै तूर ॥६९॥

कहेन्हि कि यह पेम पियारा, बिधनैं जगत सीभु[1] औतारा।
हम यहि नगर चरां गति आई, चलहु जाइँ कौतुक अँबराई।
जौ लगि येइ सोवै येहि ठाऊं, तौ लगि फिर देखैं लखराऊं।
वोइ गौनी लखराउँ सवाई, जागा राजकुँवर अँगिराई।
देखा दोसर सैन सम डासी, राजकुँअरि एक तहाँ निवासी।

पाँच एकादसि[2] कला सपूनीं, जोबन उससे[3] बांह।
सूर न सरबरि पावै, चाँद न खूंदै छांह ॥७०॥

चहुँ दिसि मन्दिल पटोर ओढ़ावा, हेम खंभ सभ रतन[1] जड़ावा।
मन्दिल सरग ससिबदनी नारी, तारे नैन धरा जनु तारी।
कचपचिया भौ चेरी टोला, पालक जनौ अकास खटोला।
पालक एक जौं आइ सँवारी, सोवत सेज सहज बिकरारी।

---

[६८] १ जो एक०। २ दुख एक०।
[६९] १ हम रा०।
[७०] १ सइहिं रा०। २ नौसत रा०। ३ उसीसे रा०।

सेज सौंरि को बरनैं पारा, कहत सुनत जो बात रसारा।
नौ सत बाला साजे, सोवत है सुख सेज।
चेत न रहा कुँअर तन, देखि हरा बुधि तेज ॥७१॥

सोवत सेज सहज बिकरारा, देखि सजग भा राजकुमारा।
चक्रित चित भै चहुँ दिस हेरा, बिधि येहि मन्दिल नगर[1] केहि केरा।
औ यह कौन सोव बिकरारा, धन बिधना जे कलि औतारा।
देखत हिये समानी स्वासा[2], कुँअर जीय कै कीन्ह प्रनामा।
सुख सोवत जो देखी बाला, नखसिख उठी कुँअर तन जाला।
कँवल भाँति दिन बिगसत, निरखि निरखि मुख सूर।
देखत पेम प्रीति पूरब कै, हीवरें[3] लीन्ह अक्रूर ॥७२॥

---

[७१] १ नगन रा० ।
[७२] १ ×एक० । २ स्यामां रा० । ३ ही उर रा० ।

तापर कच बिखधर बिख सारे, लौटें सेज सहज बिकरारे।
सगबगाहिं परतिख मनिग्रारे, गरल धरे बिखधर हत्यारे।
निसि अँजोर बदन[१] देखराये, दिन[२] अँध्यार कच मोकलाये।
कच न होंहि बिरहे दुख सारा, भयौ जाइ मधु सीस सिंगारा।
भूली दसौं दिसा निजु ताही, चिकुर चिन्हारि भई जग माहीं।

छिटका चिकुर[३] सोहागिनि, जगत भयेउ अन्धकाल।
जनु बिरही बधं[४] कारन, मनमथ रोपा जाल ॥७६॥

जग सुबास पूरित भै जाहीं, कछु जानसि तौ कारन काहीं।
कै जनु म्रिगमद नाभि उघारी, कै मधुमालति चिकुर खिंडारी।
यह जो जगत मलयानिल बाऊ[१], अति सुगन्ध जानहि केहि भाऊ।
दिन एक कामिनि चिकुर खिंडाए, ठाढ़ भए तब निकट जो आये।
तेहि दिन सौं जो भवै उदासा, पै अजहूँ ना गयौ सुबासा।

चिकुर पास[२] मधुमालती, जब सौं बहेउ बतास।
तेहि दिन सौं निसिबासर, सन्तति भवैं उदास ॥७७॥

निकलंकी ससि दुइज लिलारा, नौ खंड तीनि भुअन उँजियारा।
बदन पसीज बुंद चहुँ पासा, कचपचिए जेंव चांद गरासा।
म्रिगमद तिलक ताहि पर धरा, जानहुँ चाँद राहु बस परा।
गयौ मयंक सरग जेहि लाजा, सो लिलाट कामिनि पहँ छाजा।
सहस[१] कला देखी उजिआरा, जग ऊपर जगमगहिं लिलारा।

तर मअंक ऊपर निसि पाटी, बनी अहै कसि रीति।
जानहु ससि औ निसि तें, भै सूरति बिपरीति ॥७८॥

काम कमान रहसि कर[१] लीन्हा, बर सौं तोरि टूक दुइ कीन्हा।
पुनि धरती सौं मेलि लँडारी, तेइ बनाइ मधु भौंह सँवारी।
भौंह सँवारि[२] सोह कस नारी, मदन धनुख तौ धरा उतारी।

---

[७६] १ दिन एक० । २ निसि एक० । ३ चीर एक० । ४ बिधि एक० (बधः फारसी लिपि)।

[७७] १ राऊ एक० । २ कसा एक० ।

[७८] १ सहज एक० ।

जौ चखु चढ़ी भौंह बर नारी, इन्द्र धनुख दे पनच अंडारी।
तेइ धनुख मदन त्रिभुअन जीता, बहुरि[3] उतारि नारि कौ दीता।

जीति[4] तिलोक नेवास भौ, जगत न रहा जुझार।
देखत जाहि हिये सर निफरै, ताहि को जीतै पार ॥७९॥

सूते सेज स्याम जो राते, जागत होते हनि कै जाते।
चपल बिसाल तीख जो बाँके, खंजन पलक पंख तें ढाँके।
जनु पारधी एकंत जीव डरई, पौढ़ा धनुख सीस तर रहई।
दूनौ नैन जीव कर ब्याधा, देखत उठै मरन कै साधा।
सन्मुख मीन[1] केलि जनु करहीं, कै जनु दुइ खंजन उड़ि लरहीं।

अचरज एक जो बरनौं, बरनति बरन न जाइ।
सारंग जनु सारंग तर, निरभय पौढ़ा आइ ॥८०॥

बरुनी बान[1] बिसहँ बुझाई, मटक परत उर जाहि समाई।
बरुनी बान सन्मुख भै जाही, रोवँ रोवँ तन झाँझर ताही।
दिस्टि पंथ गै हिये समानी, रुधिर करेज औटि भौ पानी।
जब बरुनी सौं बरुनि मेरावै, जानहु छुरी सौं छुरी लरावै।
बरुनी बान जीति को पारा, एक मूठि सौ खाँड पबारा।

बरुनी बान के मारे, मैं न सकेउँ जग पेखि।
केहि न अितु भाई जग, बरुनी सोहागिनि देखि ॥८१॥

नाक सरूप न बरनै पारेउँ, तीनि भुअन हेरि मैं हारेउँ।
कीर ठोर औ खरग कि धारा, तिलक फूल मैं बरनि न पारा।
उदयागिरि जौ कहौं तौ नाहीं, ससि रे सूर दुइ बाद कराहीं।
निकट न कोऊ संचरै पारा, निसि दिन जियै सो[1] बास अधारा।
केहि लै जोरौं पटतर नासा, ससि रे सूर दुइ करैं बतासा।

---

[७९] १ कै एक०। २ नेवारि एक०। ३ बरुनी एक० (नागरी लिपिज दोष)। ४ जौ तुइ एक०।

[८०] भै एक०।

[८१] १ बनावरि: (माताप्रसादजी द्वारा प्रस्तावित)।

नाक सरूप सोहागिनि, केहि लै लावौं भाउ।
जाके ससि जौ सूर निसि बासर[२], ओसरी सारैं बाउ ॥८२॥

अति सरूप रस भरे अमोला, जो सोभित मुख मध्य[१] कपोला।
मैं मतिहीन बरनि न आई, मुख कपोल बरनौं केहि लाई।
नहिं जानौं दहुँ के तप सारा, सो बेरसहिं यह निधि संसारा[२]।
अस कपोल बिधि सिरा सोहाये, जो न जाइ किछु उपमा लाये।
मानुस दहुँ बपुरा केहि माहीं, देवता देखि कपोल तवाहीं।
सुर नर मुनि गन[३] गंध्रप, काहू न रहेउ गियान।
देखि कपोल सोहागिनि, टरै महेस धियान ॥८३॥

अधर अमीं रस[१] बास सोहाये, पेम प्रीति हुत रकत तिसाये।
अति सुगन्ध कोमल रस भरे, जानहु बिंबु मयंकम धरे।
पटतर लाइ न जाइ बखानी, जानहु अमी गारि बिधि सानी।
अधर अमी रस भरे अपीऊ, कुँअर जान निसरै मम जीऊ।
कब सो घरी बिधनहि निर्माइहि, जब यह जीव अधर पर आइहि।
अनल बरन सोहागिनि, जगत सुधानिध जान।
अचरज अंब्रित अग्नि सम, देखत जरै परान ॥८४॥

दसन[१] जोति बरनि नहिं जाई, चौंधी दिस्टि देखि चमकाई।
नेक[२] बिसनाइ(?) नींद मो हँसी, जानहुँ सरग सौं दामिनि खसी।
बिहरत[३] अधर दसन चमकाने, त्रिभुअन मुनिगन चौंधि भुलाने।
मँगर सुक्र गुर औ सनि[४] चारी, चौका दसन भय राजकुमारी।
नहिं जानौं दहु केहि दुरि जाई, रहे जाइ ससि माँह लुकाई।
जौ कोइ कहै बुधि बिसरा, तेहि का सुनहु सुभाउ।
बिरह गुपुत जग माहीं, काहु न देखा काउ ॥८५॥

---

[८२] १ × एक० । २ × एक० ।

[८३] १ कंठ एक० । २ का भारा एक० । ३ × एक० ।

[८४] १ छीर एक० ।

[८५] १ तिलक एक० । २ नीक एक० । ३ बिहसत एक० । ४ अस्वनि एक० ।

दुइ तिल परा मुख ऊपर आई, बरनि न जाइ जे उपमा लाई।
जाइ कुँअर चखु रूप लोभाने, हिलगे बहुरि जाइ नहिं आने।
तिल न होइँ रैनि की छाया, जाके सोभ रूप मुख पाया।
अति निरमल मुख मुकुर[1] सरेखा, चखु छाया तामों तिल देखा।
स्याम कुँअरि लोयेन पूतरी, मुख निर्मल पर तिल भै परी।

अति सरूप मुख निर्मल, मुकुता सम परवान।
तामों चखु की छाया, दीसै तिल अनुमान ॥८६॥

सुधा समान जीभ मुख बाला[1], औ बोलति अति बचन रसाला।
सुनत बचन अंम्रित रस बानी, म्रितक मुख भरि आवै पानी।
सुनत जीभ मुख बचन अमोला, सौ सब भए जगत मिठबोला।
कौन तपा जग जन्मिहि आइहि, जो रसना पर रसना लाइहि।
अति रसाल रसना मुख रसी, दुइ अरि बीच आइ रस बसी।

अति रसाल रसना मुख कामिनि, अमी सुरसं[2] परवान।
बदन चांद महं अंम्रित, अमी सुरा कै जान ॥८७॥

सुंदर सीप दुइ स्रवन सोहाये, सरग नखत जनु बारि जराये।
तरिवन हीर रतन नग जरे, अदित सुक्र जनु खुटिला परे।
दुइ दिस दुइ चक्कैं अनिआरे, ससि संग आइ उये जनु तारे।
जग काकैं अस भाग बिधाता, स्रवनन लागि कहब जो बाता।
बाला बदन चांद रखवारा, मानौ राहु कीतु दुइ फारा।

कानन्हि चक्र नरायन, दीपै दुहुं[1] दिसि जोति।
नातरि राहु गरासत, जौ न चक्र भै होति ॥८८॥

गिव अनूप केहि बरनौं लाई, कै बिसकरमै चाक भँवाई।
कर्म लीख दहुँ काहि लिलारा, कै प्रयाग गैं[1] करवत सारा।
केहि के अस गीव बिधि निर्माई, धन जीवन जे बेलसब गिव लाई।
धन जग[2] जीवन धन औतारा, जेहि कलि बिधनै अस गीव सारा।
देखत तीनि कंठ की रेखा, सजग सरीर होइ अस[3] भेखा।

---

[८६] १ सूर एक०।
[८७] १ काला एक०। २ सुर्ज एक०।
[८८] १ दह एक०।

तीनि रेख अति[1] सोभित, गीव सोहागिनि दीस।
कौन सो पति जाहि लगि निरमै, अैस गीव[2] जगदीस ॥८९॥

भुजा सीभु बिसकरमैं गढ़ी, हेरि रहेउँ ना पटतर[1] चढ़ी।
सबल सरूप अतिहिं बरिआरे, देखि बीर अबलाँ बलिहारे।
औ अनूप दोइ बनी कलाई, काम कमान तैं कूटि चढ़ाई।
औ तेहिं ऊपर सुंदर हथोरीं, फटिकसिला जनु ईंगुर घोरीं।
बिरही जन जहवाँ लगि मारे, तिन्ह के रकत दिसैं रतनारे।
सोभित सबल सरूप सोहाये, त्रिभुअन जीतनहार।
दहु केहि देहिं अलिंगन, धन सो जग औतार ॥९०॥

अति सरूप दुइ सिहुन अमोले, जेहि देखत त्रिभुअन मन डोले।
कठिन हिरदै महँ बिधि निर्मये, ताते कठिन सिहुन दुइ भये।
जौ हिरदै पर हिरदै सुसरे[1], कुच आदर कहँ उठि भैं खरे।
दुऔ अनूप सिरीफल नये, भेंट आनि तरुनापा दये।
जबहिं प्रानपति हियरे छाये, कुच सकोच उठि बाहर आये।
कठिन कोरारे कलिसिरे, गरब न काहुँ नवाहिं।
दुऔ सीव के संभ्रैत, आपुस महँ न मिलाहिं ॥९१॥

अनिआरे जो तिखै अन्याई, दिस्टि साथ उर पैसहिं जाई।
सोभित देव[1] स्याम सिर बाने, महाबीर त्रिभुअन जग जाने।
दोऊ सींव पर चाहहिं लरा, हार आइ तब अंतरु परा।
दुऔ बीर जग[2] जूह जुझारा, सोहै ऐस औ उर हारा।
अैने पैने उन्ह केर सुभाऊ, संतत सौंह[3] न पाछे काऊ।
बिपरीत भाउ तिन्हहि कै, सुनहु आचरिज बिसेस।
जहँ उपजैं नहि साले, साले तिन्हैं जो देख ॥९२॥

रोमावलि नागिनि बिस भरी, बेंबैर हुतैं जनु गिरि[1] अनुसरी।
नाभि कुंड महँ परी जो आई, घूमि रही पै निसरि न जाई।

---

[८९] १ गियँ भा०। २ × एक०। ३ कस। ४ तिय एक० (वर्णविपर्यय)।
५ कौन एक०।

[९०] १ तापर मुनि एक०।

[९१] १ सँचरै रा०।

[९२] १ दिए रा०। २ कुच रा०। ३ और एक०।

पातर पेट अनूप सोहाई, जनु बिधि बाजु अंत निर्माई।
लंक छीन[२] देखि चित हरई, भार नितम्ब टूट जनु परई।
छुइ न जाइ निहथ पसारी, मानहु छुअत टूट हत्यारी।

टूटि परै करि कामिनी, गरुअ नितम्ब के भार।
जौ न होत दिढ़ बंधन, त्रिबली तासु अधार ॥९३॥

करि माहें त्रिबली कसिअई, बिधनै गढ़त मूठि जनु गही।
गुर जन लाज चित्त महँ माना, तौ नहि मदन भँडार बखाना।
देखि नितम्ब चिहुँट चित लागा, परत दिस्टि मनमथ तन[१] जागा।
जुगुल जाँघ देखि चित थहराई, मन भरमा कछु कहा न जाई।
राते कौंल जो सेत[२] सोहाये, तरवा कौंल नहिं पटतर लाये।

बिपरीत कनक[३] केदली, औ गज सुंड सुभाउ।
उपमा देत लजानेउँ, सुनहु कहौं सतभाउ ॥९४॥

बिन कटाछ बिनु भाव सिंगारा, सूते सेज को बरनै पारा।
जो बिधि सिरजा जुवा अनूपीं, सहज ते बाजु सिंगार अनूपीं।
सगरी सिस्टि केर अहिबाता, लज्याबिहित मदन भौ गाता।
सोवत देख सैन बिकरारा, उठा कुँअर तन बिरह बिकारा[१]।
सहज चित्त उपजा बैरागू, बिरह आइ भौ जिव कर लागू।

बदन धनुख दुति उदित, देखि न रहा मन[२] चेतु।
धन सो जन्म जग ताकर, जासौं उपजै हेतु ॥९५॥

सोवत बरनि जीव पछतानेउँ, कस न जगाइ[१] सिंगार बखानेउँ।
अब जगाइ रस बात कहाऊँ, और रस[२] बचन सुनत रस भाऊ।
दुऔ भुआ बर सिव[३] पर आनी, अंग मरोरि अतिहिं जभुआनी।
सजग भए बिबि लोयेन कैसे, उठैं अघात पारधी जैसे।
सहज भाव जौ भौंह सँकोरा, मदन[४] धनुख तौ दीन्ह टंकोरा।

मदन धनुख दोइ भौंहैं, चढ़ैं जो गाढ़े ठान।
तीनिउँ लोक संकानेउ, देखत भौहन्ह बान ॥९६॥

---

[९३] १ करि रा० । २ झीन रा० ।
[९४] १ × एक० । २ सेज एक० । ३ बन एक० ।
[९५] १ बिकराश एक० । २ मुनि एक० ।
[९६] १ जाइ एक० । २ × एक० । ३ सिर ऊपर रा० । ४ बदन एक० ।

मधुमालती जागी खण्ड

जागि उठी पुनि राजदुलारी, चक्रित चहुँ दिसि हेरि निहारी।
सजग भयो मृग चहुँ दिस हेरा, चीन्ह[1] के सिंह सेंदूर अहेरा।
पुनि जौ कुंअरि देखु अंगिराई, दोसरि सैन है निकट डँसाई।
ता पर राजकुंअर एक भारी, देखि भरमित भै जौ बर नारी।
देखेसि वोहि पुर्ख की करा, भरम होत जिउ ढाढस धरा।

सकुचि हिये बर कामिनि, पुनि उठि बैसु संभारि।
त्रिय धीरज धर चित महँ, बोली राजकुमारि ॥९७॥

पुनि बर कामिनि अधर अमोले, अंब्रित बचन कहन कहँ खोले।
पूछेसि मधुरे बचन रसाला, को आहहि तैं देवकुमारा।
कहु आपन मोहिं नाम गोसाईं, कौन सकति आये येहि ठाईं।
जहाँ नेवास करै सो बारी, पवनौ करै न पाव[1] सँचारी।
सपत सीभु दै पूछौं तोही, कहहु बात आपन सब[1] मोहीं।

कै तुह इन्द्र सभा के देवता, कै पताल के नाग।
कै तुह म्रितुलोक के मानुस, कहौ भर्म जिउ भाग ॥९८॥

कै तैं राकस भूत कै छाया, कै तोहारि यह मानुस काया।
कै गुरु बचन सिद्धि तैं पाई, कै नैननि लोग अंजन देखाई[1]।
कै तैं चढ़ेसि मन पौन खटोले, आयेसि हमरे मंदिल अमोले[2]।
के तैं मंत्र सकति किछु पाई, कै रे मूरि गुर ग्यान लखाई।
अगम पौरि चारौं दिस लार्गाहि, आसपास सब पहरू जार्गाहि।

भौंरी सात मंदिल के, जाँर्गाह बीर अपार।
तहाँ कैसे तुह आयेहु, जहँ न समीर सँचार ॥९९॥

---

[९७] १ जिन्ह एक० (चीन्ह फारसी लिपि)

[९८] १ निज एक० ।

[९९] १ कै मूरि गुन ग्यान लखाई एक० (पुनरुक्ति, चौथी पंक्ति में)।
 २ अबोले एक० ।

तोहि पूछौं दै सपत बिधाता, कहु निज मोहिं सौं सत जो बाता।
कै कोउ तोहिं बरबस लै आवा, तेहि भरमसि जिव बकति न आवा।
देखति हौं सब मानुस करा, प्रगट लिलार भाग मनि बरा।
कस रे मौन भै रहसि अमोला, देखि भर्म मोर मनसा डोला।
देखि देखि जिय भर्मै आई, अचरिज देखे मन थहराई।

ढाढस कै उठि बैसेउ, जियहिं जो मन संकात।
तोहि सपत दै पूछौं, कहु आपन मत बात ॥१००॥

सुना कुँअर अंब्रित रस बाता, जाके सुनत अमर हो गाता।
चक्रित चित मन माँह भुलाना, देखि रूप तेहि[1] रहै न ग्याना।
लागे हिये कांड अनियारे, भौंह कटाछ सान दै सारे।
जैसे खाँड नीर महँ परई, सहज अपान आपु परिहरई।
सौंह सरूप को सकै निहारी, दुऔ नैन कै बार बिचारी।

देखि रूप चखु भर्मे, सौंह न सकै सँभारि।
रकत आँसु बह नैनन्हि, पलक न जाइ उघारि ॥१०१॥

सुनु बर नारि कहौं मैं तोहीं, सहज हेतु जौ पूछे मोहीं।
नगर कनैगिरि उत्तिम थाना, सुरजभान पिता जग जाना।
औ मोहिं कुँअर मनोहर नाऊँ, राघौबंश कनैगिरि ठाँऊं।
खिनक नींद जो नैनन्हि लागी, अबहीं देखु उठा मैं जागी।
नहिं जानौं मोहि को लै आवा, जो मोहिं तोहिं भा दिस्टि मेरावा।

तोरे रूप गड़े दोइ लोयेन, नहिं देखौं निसरंत।
जौं जौं गज[1] परै पंक महँ, तौं तौं अधिक गडंत ॥१०२॥

अबहिं नींद गए[1] उठि जागेउँ, देखि रूप जग जीवन खाँगेउँ।
पूर्ब पुन्य किछु आहै मोरा, जेहि मुख आनि देखावा तोरा।
के करवत वोहि जन्म देवायेउँ, तेहि रे पुन्य अब दरसन पायेउँ।
औ मन बांछित तीर्थ प्रयागा, कलपा सीस पूर्ब के भागा।
पायेउँ आजु तीर्थ जो तोहीं, धन्य धन्य पूर्ब पुन्य जो मोहीं।

---

[१०१] १ थिर एक०।
[१०२] १ जग एक० (वर्ण विपर्यय)।

पेम फांद[२] हिय लागेउ, लोयेन रहेउ लोभाइ।
तनु मनु जिव जोबन चहै, कँसहु छांड़ि न जाइ ॥१०३॥

पूर्ब पुन्य फल आजु हमारा, ससि पूँनिव मुख देख तोहारा।
पेम फांद[१] हिय लागा मोरे, बिरह जाल जिय बाझा तोरे।
कर्म भाग जेंहि होइ लिलारा, तुअ दरिसन सो पावै बारा।
तोहिं पूछौं रस हेतु कुमारी, कौन राज केहि[२] राजदुलारी।
कहहु नाम आपन मोहिं बाला, पिता कौन केहि देस[३] भुआला।

मैं अपने नैनन्ह की बलि बलि, जो देखा तुअ रूप।
औ स्रवन्नन्ह कै जो सुनेउँ, अंब्रित बचन अनूप ॥१०४॥

पुनि रस बचन सोहागिनि बोला, अमिय बचन रदनछंद खोला।
चमके दसन कहत रस बाता, चौंधे तीनि भुअन सब गाता।
सुनतहिं बचन कुंअर मुरछाना, हरा चेत चित चेत गँवाना[१]।
देखत अधर ग्यान हरि लेई, बचन सुनत सो फिर जिव देई।
दोसर भाव बरनि नहिं आवै, मुअहिं चाहि तौ बकति जिआवै।

अधर भाव का बरनौं, मोहि मुख बरनि न जाइ।
सकै तौ जियतहिं मारै, मुयै तौ सकै जिआइ ॥१०५॥

पुनि जौ समुझै कुंअर अग्याना, खिन चेतै खिन जीव अपाना।
खिन खिन जीव बिसँभर जाई, खिन समुझै घट आइ समाई।
घरी चारि घट पलटा[१] जीऊ, जीउ समुझि घट भै संजीऊ[२]।
पुनि जौ चेत चितै ठहराना, अंब्रित बचन परा तौ काना।
परत स्रवन अंब्रित रस बाता, सुनत सौख[३] भौ आठौ गाता।

बकतैं लागु सोहागिनि, अंब्रित बचन रसाल।
आठौं गात स्रवन कै, सुनै जो राजकुमार ॥१०६॥

बहुरि कुंअरि रस कथा उभासी, जनु कुमुदिनी सिर ससी प्रगासी।

---

[१०३] १ गा एक०। २ कांड रा०।

[१०४] १ कांड रा०। २ घर एक०। ३ दीप भा०।

[१०५] १ गयउ गियाना रा०।

[१०६] १ पहिनेउ रा०। २ पैसा जीऊ। ३ सुख रा०।

कहेसि महारस नगर अनूपा, बिक्रमराउ पिता जग भूपा।
तेहि घर धिअ मैं राजकुमारी, मधुमालति दह दिस उजिआरी।
महीं पिता घर सन्तति बारी, राजा घर मैं राजदुलारी।
और बात जेत कामिनि कही, सो न कुंअर चित एकौ रही।

समुझि समुझि ते बातैं, चित सौं हरेउ गियान।
जैसे लोन पानी महँ, सैकै[1] खोव जे अपान ॥१०७॥

पुनि जौ चित मो सौं रैं ग्याना, उठि बैठा पै खोइ अपाना।
पेम बान[1] दोइ लायेन भरेऊ, भै अचेत चर्नन्ह तर परेऊ।
तब बर कामिनि अंब्रित नीरू, छिरकि कुंअर मुख परस[2] समीरू।
बहुरि कुंअरि चित माया जानी, गहि आँचर पोंछा चखु पानी।
दया भई मन मोह जनावा, गहि चर्नन्ह सौं सीस उठावा[3]।

बहुरि कुंअर उठि बैठा, चितहिं सँभारा चेतु।
अंब्रित बचन सोहागिनि, पूछै लागि सहेतु ॥१०८॥

रस रस पूछै राज दुलारी, भौ सचेत कहु बात सँभारी।
निरभै भै तजि कहसि न बाता, कौन भाव काँपै तुअ गाता।
मोहि कहु आपन जिव की पीरा, काँपै कौने भाव सरीरा।
औ खन खन जिय बिसँभर जाई, कहहु सत्त तोहिं पिता दोहाई।
निभरम होहु न भरमहु काहू, कहहु कौन गुन खोइ खोइ जाहू।

सहज हेतु सौं पूछौं, के तोर हरेउ गियान।
अमिअ छिरकि बैसारेउँ, समुझसि कस न अपान ॥१०९॥

कहै कुंअर सुन पेम पिआरी, मोंहि तोंहि पूर्ब प्रींति बिधि सारी।
मैं तोहि आजु न दुक्ख[1] दुखारी, तोहरे दुख मोंहि आदि चिन्हारी।
यहि जग जीवन मोंहि तुह लाहा, मैं जिअ दै तोर दुक्ख बेसाहा।
जा दिन सिरा आँस बिधि मोरा, तेहि दिन मोंहि दरसा दुख तोरा।
बर कामिनि जौ प्रीत क नीरू, मोंहि माटी तौ सानु सरीरू।

---

[१०७] १ सहजहिं एक०।

[१०८] १ ग्यान एक०। २ X एक०। ३ चढ़ावा एक०।

पूर्ब दिनन्हि सौं जानौं, तोहरी प्रीति क नीरु।
मोंहि माटी बिधि सानि कैं, तौ एह सरा सरीरु ॥११०॥

मैं सब तजि गरहा[1] दुख तोरा, मोर जिउ तोर तोर जिउ मोरा।
प्रान आदि घट होत न आवा, बिधि मोंहि तोहि भौ दरस मेरावा।
जौ रे कलपि कहौं किछु तोहीं, तोर दुख अधिक देइ बिध मोहीं।
मैं येह दुख की बलि बलि हारी, सहज सुक्ख येहि दुख पर वारी।
कौन जीभ बकतौं तुअ बाता, दुख के रूप सुखनिधि के दाता।

एक निमिखि कोई नहिं पूजै, चारौं जुग क सवाद।
कौन कौन सुख बेलसेउ, एहि दुख के परसाद ॥१११॥

दुख मानुस कै आदि गरासा, ब्रह्म कौंल महँ दुख कर बासा।
जेहि दिन दुख येह सिस्टि समाना, ता दिन ते जिउ जिउ कै जाना।
अब लै बोह[2] मोंहि दुख की काँवरि, दुइ जुग देउँ सुक्ख नेवछावरि।
मोंहि न आजु दरसा दुख तोरा, तोर दुख आदि संघाती मोरा।
मैं आपन तजि तोर दुख लयऊँ, मरि कै अब अंब्रित रस पियेऊँ।

नोर दुक्ख मधुमालति, सुखदाएक जो संसार।
जेहि जिअ माँह तोर दुख उपजै, धन्य सो जग औतार ॥११२॥

सुना जेहि दिनां[1] सिस्टि उपाई, प्रीति परेवा दीन्ह उड़ाई।
तीनौ लोक ढूंढ़ि मैं आवा, आपु जोग कहुँ ठाँव न पावा।
तब फिरि हम जिउ पैसा आई, रहा लोभाइ न गैउँ उड़ाई।
तीनि भुअन तब पूछै बाता, कहु तै कस मानुस घट राता।
कहेसि दुक्ख मानुस कर बासू, जहाँ दुक्ख तहँ मोर नेवासू।

जेहि ठां होइ दुख जग भीतर, प्रीति होइ[2] पुनि ताहि।
प्रीति बात का जानै बपुरा, जेहि सरीर दुख नाहिं ॥११३॥

मैं तैं सदा दुऔ संग बासी, औ संतति एक देह नेवासी।

---

[११०] १ तोहि एक०।

[१११] १ सँकरेउँ रा०।

[११२] बहौं रा०।

[११३] १ लगि एक०। २ तिन्हौं एक०।

औ हम तुह तौ एक सरीरू, दुऔ माटी सानी एक नीरू।
एक बारि दुइ बही[१] पनारी, एक दीप घर दुइ उजिआरी।
एक जीव दुइ घट संचारेउ, एक जन्म दुइ ठां औतारेउ।
एकै हम दुइ कै औतारे, एक मंदिल दुइ किया दुआरे।

एक जोति रूप सब, एक प्रान एक देह।
आपु अपान देइ[२] कोइ चाहै, एकर कौन सन्देह[३] ॥११४॥

तै जो समुंद लहरि मैं तोरी, तै रबि मैं जग[१] किरनि अँजोरी।
मोहिं आपुन जै[२] जानु निनारा, मैं सरीर तैं प्रान पिआरा।
मोहिं तोहि को पारै बेगराई, एक जोति दुइ भाव देखाई।
समुझि गियान चखु देखौं हेरी, हम तुह दहु परिचै कब[३] केरी।
अबहुँ न मोहिं तैं चीन्हसि बारी, सौंरि देखु चित आदि चिन्हारी।

अरुझा फांद पेम कर, अहा जो दुऔ घट केरि।
हुति जो आपु महँ परिचै, सभै नर धर जिउँ फेरि ॥११५॥

अबहीं बिनु जिव जीवन सारेउँ, आजु न देखि तोहि जीवन हारेउं।
देखत ही पहिचाना तोहीं, एही रूप छँदरेउ जे मोहीं।
इहै रूप तौ अहै छपाना, इहै रूप सब सिस्टि समाना।
इहै रूप सकती औ सीऊ, इहै रूप त्रिभुअन कै जीऊ।
इहै रूप परगट सब भेसा, इहै रूप जग राँक नरेसा।

इहै रूप त्रिभुअन कै बेलसै, महि पताल आकास।
इहै सोभा परगट तोहिं माथे, देखै ग्यान[१] हबास ॥११६॥

इहै रूप परगट सब रूपा, इहै रूप जो भाव अनूपा।
इहै रूप सब नैनन्हि जोती, इहै रूप सब सायर मोती।
इहै रूप सब फूलन्ह बासा, इहै रूप सब भोग बेलासा।
इहै रूप ससिहर औ सूरा, इहै रूप जग पूरि अपूरा।
इहै रूप अंत आदि निदाना, कै बिरुला जन काहु न जाना।

---

[११४] १ भई एक० । २ × एक० । ३ सनेह एक० ।

[११५] १ × एक० । २ जनि रा० । ३ केहि एक० । ४ × एक० ।

[११६] १ खान एक० ।

इहै रूप जल थल औ महिग्रर, भाउ अनेग देखाउ।
आपु अपान जो देखै, सो कछु देखै पाउ ॥११७॥

सुनत सुनत रस भाव क बाता, कामिनि जीव सहज है राता।
सुनतै पेम बात जिव भाई, पूरब प्रीति समुझ ज्यो आई।
जस सुबास मैं मिलै समीरू, दुइ मिलि कै[2] भौ एक सरीरू।
हेतु आइ दुहुँ बीच समाना, भौ दुनहूँ कर एक पराना।
सहजे दुवौ जीव मिलि गये, रहै न अन्तर एक जो भये।

पुनि जौ पेम प्रीति पूरब कै, बिबि जिय आइ[3] समान।
उठी ऊभि उर सांस जो, समुझि आदि पहिचान ॥११८॥

बिहँसि नारि कह रसहिं मेराई, तुँहहु उन्ह रस बातन्ह बौराई।
चक्रित रही कछु कहैं न आवा, सुनि रस बचन रसिक[1] रस पावा।
निस्चै मोहिं तोहिं अंतर नाहीं, एक पिंड परि दुइ परिछाहीं।
मोर जिव तुम्र घट भीतर ठाऊँ, औ मोसौ तुम्र परगट नाऊँ।
रूप मोर घट दर्पन तोरा, मैं जो सूर तं जगत इंजोरा।

जैसी मोती रतनगिरि माहीं, तै मोहिं मो तैं सार।
रतन जोति जो संग रहै, को बेगरावै पार ॥११९॥

अब सुनु कुंअर बात तैं मोरी, पेम लाइ जिव लीन्ह अंजोरी।
प्रींति तोहार मोरे जिव छाई, म्रिगमद पेम न जाइ[1] छपाई।
एक जीव घट आहि पिआरा, सो तुहँ तौ हरि लीन्ह निनारा।
किये मोहिं रस बातन्ह बौरी, हरे जीव सिर घालि ठगौरी।
जस जिव तुह प्रीतम मदमाता, मोर जीव तोहिं चौगुन राता।

मति जानहु सतभाव प्रभु, पुर्खहिं अधिक सुभाउ।
चौगुन कै चित बाँधा, बाला कर सतभाउ ॥१२०॥

सुनत सुनत रस भाव कै बाता, जागा मदन बिआपा गाता।
मदन कुसुम गियान बिगासा, जाकै येह जग भोग बेलासा।

---

[११८] १ मदमाता रा० । २ × एक० । ३ पेम एक० ।

[११९] १ रसी एक० ।

[१२०] १ रे एक० ।

कामचेस्टा ब्यापेउ गाता, रतिपति डरा सुने रसबाता।
राते बरन[१] निलज भा नैना, दुइ दिस रची काम की सैना।
संकर जीउ जाहि तें हारा, तासौं को जग जीतै पारा।

नौ जोबन नौ मनमथ, औ नौ रूप[२] अगंम।
औ संग पेम परानी, कह केउं रहै धरंम॥१२१॥

बीर राग मनमथ बिगासा, धुकधुकी जीव मुंचत घट[१] सांसा।
काम बान बेधा न संभारेसि, वर कामिनि उर हार पसारेसि।
तब तजि आपन सेज सिंगारी, बैसी जाइ सेज बर नारी।
बर कामिनि तब[२] हाथ अंडाई, उठि कै सेज कुँअर कै आई।
कहेहि कुँअर एक कर्म न कीजै, माता पितहि अकलंक[३] न दीजै।

तिल एक सुख के कारण, जनि आपुहीं नसाउ।
तिरिअहि थोरे अपकरम, जग अपकीरति पाउ॥१२२॥

तिरिआ करै लेइ जौ पापू, ब्रह्मा पहँ रे नसावै आपू।
पाप क घर जो तिरिया जाती, राखै कुल जौ होइ संघाती।
नातरि त्रिया राखि को पारा, कुल पै अकरम बर्जनिहारा।
निमिखि लागि आपुहि कै नासा, औ परु नरक माहँ जग बासा।
ए सब करम[१] जे कीन्ह करावा, अकरम कै को धरम नसावा।

दसौं दिसा कुल निर्मल, धरम मुक्ख उजिआर।
पैठि पाप की वोबरी, सबै होत मुँह कार॥१२३॥

सुनसि कुंअर तैं बात हमारी, धरम पंथ जो दैअ सँवारी।
जाके जीव धरम गा जागी, सौ कस[१] परै पाप की आगी।
कुल औ धरम दुऔ रखवारी, मात पितहि दै जाय न गारी।
निमिखि लागि पापी का होई, करि कै पाप धरम का खोई।
पाप पंथ चढ़ि जो सत राखा, सुरस[२] अमीरस ते पै चाखा।

---

[१२१] १ नैन एक०। २ रितु एक०।
[१२२] १ मे एक०। २ जे एक०। अपकीरति भा०।
[१२३] १ जरम रा०।

जग जीवन जग परिहरैं, जेहि सत ऊपर चाउ।
सरबस तजि सत राखैं, कुंअर सुनहु सतभाउ ॥१२४॥

जो बिधि तोहि इहाँ लै आवा, औ मोहि तोहि भा दिस्टि मेरावा।
सो बिधि मोहितोहि जम[1]खेइहि, परिहरि पाप धरम निधि देइहि।
अकरम कै को धरम नसावै, गये धरम ज्यों जिव पछतावै।
धरम जाय मुख लावै खारी[2], लोग कुटुम्ब कहँ आवै गारी।
तोह हम आजु जो बाचा कीजै, इन्द्र[3] ब्रह्म हरि अंतर दीजै।

प्रीति सपत दिढ़ बाचा, मोहि देहु तुह लेहु।
जन्म जन्म निरबाहौ, तौ येह जन्म सनेहु ॥१२५॥

राजकुंअरि सुन बात हमारी, सपत बाच मोहि तोहि किन हारी।
तोहि बिना जग जीवन नाहीं, तुह सरीर हम तोहरी छाँही।
तुह परान हम कया तोहारी, तुह ससि मैं सो किरनि उजिआरी।
प्रान[1] कया कहँ ज्यों[2] प्रतिपारै, ससि[3] संतति उजिआरा सारै।
मैं आपन तेहि दिन[4] परिहरा, जा दिन तोर पेम जिव परा।
तै जो समुंद मैं लहरि तोहारी, मैं जो बिरख तैं मूल।

तोहि मोहि सपत बाच दहुँ कैसी, मैं सुबास तैं फूल ॥१२६॥

कौंल कली जो बदन बिगासा, सुरस बचन रस रस परगासा।
पाप जो माता पिता दुखाये, पाप जो बनखंड के दौ लाए।
औ जग पाप करम हैं जेते, नाम लेइ मोहि जायँ न तेते।
ते सब पाप पटतर पावै, जौ तुअ प्रीति न सरि[1] पहुँचावै।
बाचा कीन्ह बिधि अंतर जानी, इंद्र[2] ब्रह्म हरि अंतर आनी।

प्रीति तो ऐसी कीजिए, आदि अंत जेहि नेह।
जन्म जन्म निरबाहै, तौ यह जन्म सदेह ॥१२७॥

सपत बाचा आपुस मो किएऊ, प्रान जो प्रान सेंति मिलि गैऊ।
पुनि आपुस महँ रंग की बाता, कहैं जो लागे जेहि रँग राता।

---

[१२४] १ सब एक०। २ सरग भा०।
[१२५] १ जे एक०। २ कारी। ३ रुद्र।
[१२६] १ काम एक०। २ जमु एक०। ३ सतो एक०। ४ सबै एक०।
[१२७] १ सिर एक०। २ रुद्र रा०।

पेम रंग जो पुरब के राते, सहज पीरम रस दूनौ माते।
रतन हिरौंदी जरी बिनानी, कुंअर दीन्ह कुंअरिहिं सहिदानी।
और कुंअरि कर मुंदरी आही, सो अपने कर पल्लौ बाही।
क्रीड़ा कोड[1] बिनोद लोभाने, बिबि जिय पेम समान।
कबहिं रहसि जिउ हुलसहिं, कबहीं हरहिं गियान ॥१२८॥

पेम भाव दुऔ जो भरेऊ, परम अनंद चित्त में धरेऊ।
कबहिं अलिंगन जे हंसि देई, कबहिं कटाछ जीव जो लेई।
कबहूँ भौंह बान हनि मारै, कबहूँ अमी बचन अनुसारै।
कबहीं सीस चरन लै लावै, कबहीं आपु अपान गँवावै।
कबहीं नैन जीव हरि लेहीं, कबहीं अधर सुधानिधि[1] देहीं।

नैन सोहागिनि बिस बसै, अधरन्ह अंम्रित बासु।
नैन कटाछ जो मारै, बिहँसि जियावै तासु ॥१२९॥

कबहीं चिहुर लहरि बिस सारै, कबहीं नैन मंत्र पढ़ि मारै।
कबहिं लीन पेम रस माँहा, कबहीं आपुस मों गलबाँहा।
कबहिं मान सेंउ[1] प्रीति बढ़ावै, कबहिं सहज रस भाव देखावै।
कबहीं नैन मिलि रस उपजावै, कबहीं पेम अनन्द बढ़ावै।
कबहीं पेम समुंद हिलोरा, कबहीं आपु मैं प्रीति निहोरा।

कबहिं पेम मदमाती, गरबहिं दिस्टि न लाव।
कबहिं पेम भाव रस माने, पीतम दासि कहाव ॥१३०॥

कबहीं पेम घमारि अंडावै, कबहिं सुधारस सींचि जिआवै।
कबहीं पेम अनंद हुलासा, कबहीं दुनौ बियोग तरासा।
कबहीं नैन रूप फुलवारी, कबही जिउ जोबन बलिहारी।
कबहीं पेम महारस लेहीं, कबहीं जिउ नेवछावरि देहीं।
कबहीं लाज समुझि जे भावा, कबहीं रहस हुलास बधावा।

---

[१२८] १ कन्द एक०।

[१२९] १ स्वाद रस एक०।

[१३०] १ मन मिलि एक०।

जौ जिव बारि प्रीत सें, कैसेहु राखि[२] न जाइ।
जौं सतभाव सौं मिलै, प्रीति साथ जिउ जाइ ॥१३१॥

कहत सुनत[१] रस बात सोहाये, लोयन तबहिं नींद भरि आये।
लुबुधे पेम सबै निसि जागे, भोर होत चखु चारौ लागे।
पुनि सुरहिनि जो आई तहाँ, गई राखि कुंअर कहँ जहाँ।
अचरज आइ जो देखै कहा, दीपत पेम जो मोथे अहा।
सुरति भाव देखत उन्ह जाना, दरमरि सेज कुसुम कुंभिलाना।

कुंअर सेज पर कामिनि, कामिनि[२] सेज[३] कुमार।
सेज बदलि जे सोये, दुनौं सुरत बिकरारि ॥१३२॥

औ मुंदरी दूनौ कर केरी, आपुस महं जो पहिरा फेरी।
बलया सैन परीं[१] जो फूटी, कंचुकि कसनि उरहिं जो टूटी।
औ जो अंग चीर गा भागी, नख रेखा ऊपर[२] कुच लागी।
उरहीं हार हरावलि टूटी, उधसी माँग बेनि सिर छूटी।
देखा सैन[३] मलगजी आई, औ लिलार गा तिलक नसाई।

कुंअर अधर पर परगट, परी जो काजर लीक।
औ नैनन्हि पर सोभित, पान सोहागिनि पीक ॥१३३॥

अछरिन्ह देखि कहा मन जानी, इन्ह दुहुँ आपुस मो रति मानी।
कहा बिछोह इन्हैं कत दीजै, बिरह बियोग पाप का लीजै।
मरन कस्ट हो छिन एक केरा, बिरह मरन जे तिल तिल घेरा।
सब मिलि जे कीन्ह बिचारा, नहिं बूझी अस धरम हमारा।
इहां सो घरी एक की प्रीती, इन्ह दुहु आपुस महँ भै बीती।

उहाँ माता पिता जन परजन, लोग कुटुंब सब कोइ।
येहि बिना हिय फाटि कै, मरिहैं सो हत्या हम होइ ॥१३४॥

---

[१३१] १ बारि एक०।
[१३२] १ कबहिं सुरस एक०। २ कामी एक०। ३ नैन एक०।
[१३३] १ पहिरा एक०। २ जे उर एक०। ३ नैन एक०।

पुनि सब मिलि कै एकमत भईं, सेज सहित कुंअरहिं लै गईं।
जेहि ठां सों लै गईं उचाई, सेज आनि पुनि[1] तहाँ डँसाई।
वोइ आपुस मो कौतुक कै जाहीं, इहाँ भयेउ दुख दुहुँ जिअ मांहीं।
कुंअरि उनींदि सोइ अरसानी, जानहु रसिक गए रति मानी।
देखा सखिन्ह रौन कै राई, परगट सबै चीन्ह जो पाई।

देखि सबै जिउ डरपी, भौ अजगुत येह काह।
जौ राजा सुनि पावैं, धरि भाटी हम[2] बाह ॥१३५॥

राजकुंअरि गै सखी जगाई, कहेसि कि के तुह नासा आई।
देखु अवस्था आपनि जागी, उठसि नाहिं सिर लाये आगी।
काहे अति मद[1] किये बिकारा, काहे बांधे गांठि अंगारा।
काहे जानि बूझि बिख खाये, कौन लाभ कहँ मूल गँवाये।
काहे आपुहि अपजस लाये, आपु गयेसि औ कुलहिं लजाये।

तिल येक सुख के कारन, कुंअरि नसाये आपु।
औ कुलगारि दियायेसि, सिरहिं चढ़ाये पापु ॥१३६॥

बहुरि संजग[1] भौ राजकुमारी, काहे सखी देहु मोहि गारी।
ऐस करम सो करै अयाना, जेहि न होइ कुल धर्म कै काना।
मोहिं अपजस जनि[2] बरबस लावहु, कै बिचार मोहिं दिब्य करावहु[3]।
पाप करम कै निरनै लेहू, जैस फुरै तस किरिआ देहू[4]।
तैं सखि अरधसरीरी मोरी, तोहिं सेती मोरि फाबै न चोरी।

मोहिं तोहिं किछू न अंतर, बैसहु कहौं उघारि।
सौतुख सपन न जानौं, दहुँ को गा मोहिं मारि ॥१३७॥

कुंअर एक हम सपने देखा, सपन रूप सौतुख कर लेखा।
मदन मूरति बिधि निरमयेऊ, जम न होय पै जीव लै गयेऊ।

---

[१३५] १ जो एक० । २ मो एक० ।
[१३६] १ बड़ एक० ।
[१३७] १ संजोग एक० । २ए × क० । ३ छुवावहु । ४ लेहू एक० ।

जम की म्रितु खिनक दुख देई, बिरह मरन तिल तिल जिव लेई।
एह दुख सखि कैसे निस्तरिहौं, बिना जीउ किमि जीवन सरिहौं।
अब न जिओं वोहि बिनु एक घरी, अचक गाज कहँवा तें परी।

बिन जिव सखी सरीर यह, तिल तिल रहत संदेह।
जिव अति निठुर निछोही, सकै तौ रह बिनु देह ॥१३८॥

जग जीवन भावै सब काहू, मोहि सखि मुये बिरह तौ लाहू।
सब कैं मरन होय एक बारी, मोहि दुख जन्म भयौ देवहारी।
प्रीति लाइ मोहि गा परहेली, जिउ लै गौ सिर मोहनि मेली।
जन्म न सुना नाव[१] दुख केरा, अचक भयेउ जो दुख भटभेरा।
बिरह दग्ध औ कुल कर लाजा[२], परा आइ मोरे सिर काजा।

कठिन पीर अति बिरह कै, तिल तिल[३] रहा न जाइ।
जिउ उपचार करहु किछु, न तौ मरौं बिसु खाइ ॥१३९॥

पुनि उन्हि[१] कहा सखीं सुनु बारी, अब दिन दस दुख काटहु भारी।
दुख फर केर सुख फर आवा[२], बिनु दुख सुख काहू नहिं पावा।
जौ प्रीतम सों लाहा लहियै, तौ प्रीतम लागि दुख सहियै।
दुख की रैनि जौ[३] जागि बिहाई, तौ इंजोर भिनुसारे पाई।
बिन काँटै जग फूल न आवा, बाजु नाग केइँ अंम्रित पावा।

मंझन यहि कलि दुक्ख बिन, सुख मति चाहै कोइ।
पहिले तरु पतझार हो, तौ नवपल्लौ होइ ॥१४०॥

जसि तैं वोहि बिरहे बिकरारी, वोहि जो होइहि चिंत तोहारी।
बिरह घाय जाइ एक न मारा, बिरह खरग दुहूँ दिसिहूँ धारा।
जो बिधि दीन्ह तोहि यह पीरा, औखध करै राख मन धीरा।
जो रे काल्ह दै धरा गोसाईं, सो न आजु पाइय बरिआई।
पहिले लाँघै[१] काँटै कै बारी, तौ अनूप बेलसै फुलवारी।

इहाँ कुंअरि कहँ निसदिन, बिरह दगध उतपात।
उहाँ कुंअर के जागें, मंझन कहु कैसी है बात ॥१४१॥

---

[१३९] १ नाहु रा०। २ राजा एक०। ३ मोहि सखि भा०।
[१४०] १ उठि एक०। २ दुक्ख पहिले पाछे सुख आवा भा०। ३ × एक०।
[१४१] १ नाकु रा०।

उहाँ कुंअर जों देखै जागी, जागत बिरह आगि तनु लागी।
ना वोह मंदिल ना सुखराती ना वोह राजकुंअरि[1] मदमाती।
मुरछि परी जो दह दिस जोवै, छन छन ऊभि साँस लै रोवै।
औ चित चेत न सकै संभारी, मन गुनि गुनि जो[1] पेम पिआरी।
सौंरि सौंरि मधुमालति बाता, बिरह अनल ब्यापेउ सब गाता।

खन अचेत खन चेतै, खनहीं जाइ बिसँभारि।
सीस पुहमि हनि रोवै, समुझि रूप बर[2] नारि ॥१४२॥

सहजा नावँ कुंअर कै धाई, सुनतहि पूत पूत करि आई।
कहेसि रोग[2] जानउँ कहु बाता, मैं तोहारि जस कौंला माता।
बदन फूल जस गा कुंभिलाई, कौन दोस तोहिं उपजा आई।
पूत कौन उपजी तोहि पीरा, जेहि कारन ढारसि चखु नीरा।
आपनि पीर पूत कहु मोहीं, मैं रे[3] देउँ सो औखध तोहीं।

नैन उघारि देखु मुख, कहेसि ऊभि लै साँस।
मोहिं जिउ धाइ पीर[4] सों, उपजी जाहि न औखध आस॥१४३॥

सो बियाधि उपजा जिव माहीं, जाहि धाइ किछु औखध नाहीं।
तहाँ जाइ जिउ बस भा मोरा, जहाँ न ग्यान केर पा खोरा।
मन अरुझाना तेहि ठाँ धाई, मन की द्रिस्टि जहँ जात सँकाई।
सो देखेउँ[1] जो जाइ न कहा, तहाँ गयेउँ जहँ चेत न रहा।
जिउ अछोरि[1] मोर लीन्हा धाई, छूँछी कया देखु संग आई।

प्रान जौ प्रीतम संग गौ, कया भयेउ बिनु जीउ।
कै सौंतुख कै सपन न जानौ, के जीउ हरि लीउ ॥१४४॥

कै सौतुख कै सपना अही, कहै लेउँ पै जाइ न कही।

---

[१४२] १ सुधि रा० । २ गुन रा० ।
[१४३] १ धाईं रा० । २ बार रा० । ३ कै रा० । ४ पुत्र एक० ।
[१४४] १ अँबोरि भा० ।

तेहि कँसे कै सपन कहाई, सौतुख सभै भाव जेहि पाई।
सौतुख देखेउँ सेज सँवारी, औ सौतुख मुँदरी कर बारी।
औ अधरन्ह महँ काजर लीका, औ सौतुख आखिन्ह मो पीका।
औ उर हार चीन्ह जौ देखौ, सौतुख सबै जो भाव बिसेखौं।

बिरह आगि सुनि धाई, मो तन लागी आइ।
की मधुमालति मिलि बुझै, की मोंहि मुएँ बुझाइ ॥१४५॥

सुन धाई दुख बात हमारी, तोसौं मैं सब कहौं उधारी।
प्रान गयेउ परिहरि मम देहा, कया बाजु जो मरन सँदेहा[1]।
दुख की बात कहै नहिं पारौं, जिउ घट होइ तौ कहत सँभारौं।
मधुमालति जिउ लीन्ह अछोरी, धाई कया बाजु जिव मोरी।
प्रान बिना भइ कया हमारी, जिव लै गई सो प्रान पिआरी।

भावंता से धाइ सुनु, मति जग बिछुरै कोइ।
सुजन जन खति जानसि, बरु जिव खति सब[2] होइ ॥१४६॥

कत मैं देखी नैन सो बाला, जेहि बस परा बिरह कै जाला।
हरख अनंद रहस गा धाई, जेहि जिअ पेम समाना आई।
जिउ पतंग घट अहै जो मोरा, जरा जाइ सो पेम अंजोरा।
पेम बनिज जो जगत सुठानी, लाभ न रहा मूल भा हानी।
जग उपखान जो कहिअत आहा, धन खोये बौराइ जोलाहा।

धाई हर्ख अनंद[1] गौ, औ रहस अभिमान।
मधुमालति कँ बिरह दुख, मोंहि लै[2] रहा निदान ॥१४७॥

पेम आगि[1] जो जिउ उदगरई, प्रीतम राखि और सब जरई।
पेम दुक्ख सब दुख सौं भारी, तिल तिल मरन सहस देवहारी।
प्रान जात बरु छांड सरीरा, बिधि कत सिरै पेम की पीरा।
राज गर्ब धन जीवन गैऊ, जब सौं जीव बिसँभर[2] भैऊ।
चढ़ा पेम पंथ दुर्गम भारी, कै जिउ जाइ कै मिलै सो बारी।

---

[१४५] १ सभै एक०।

[१४६] १ सनेह एक०। २ × एक।

[१४७] १ अनेग एक०। २ जिउ रा०।

धाई पेम समुंद महँ, देखि दौरि धंस लेउँ।
कै मानिक लै उबरौं[3], कै वोह पंथ जिउ देउँ ॥१४८॥

बिरह कठिन कोइ जान न पीरा, कै बिधि जान कै जान सरीरा।
राज सुक्ख बिखै परिहरेऊँ, बिरह दुक्ख जे अंब्रित भरेऊँ।
अब ओही मारग जिउ लावौं, पेम प्रीति लै सिर पहुँचावौं।
कै वोहि पंथ मोर जिउ जाइहि, कै बिधि प्रीतम आनि मिलाइहि।
धाइ केतिक दुख सहबे[1] मोरा, बात बड़ी जग जीवन थोरा।

धाई सो बात पिरम की, मोहिं मुख कहै न जाइ।
जौ मैं सहस जीभ सौं बकतौं, चहुं जुग कहि न सिराइ ॥१४९॥

उगा सूर जग भा अँजोरा, उठा कुंवर बिरहे झिझकोरा।
चेत हरा[1] जिउ गा बौराई, कया नगर भै बिरह दोहाई।
बिरह निसान चहूं जुग बाजा, जिउ परजा बिरहा तन राजा।
चढ़ा पेम पंथ अंग न मोरेउँ, झंगा फारि केस सिर तोरेउँ।
बिरह दुक्ख[2] दुर्गम न संभारेसि, उठतै आपु आपन दै मारेसि।

लोग कुटुंब सब धाये, राजा ग्रिह भा रोर।
माय सुना कौंलादेई, व्याकुल फारु पटोर ॥१५०॥

नगर देस माँ परिगा रोरू, राजमंदिल कछु उठा अंदोरू।
बैद सयान गुनी जन आये, मात पिता जन परिजन धाए।
कहै राउ मैं धन गुन त्यागा, जीउ मोर एहिके जिउ लागा।
अर्थ दर्ब जत लागै लावहु, कुंअर क जिउ कैसेहु पलटावहु[1]।
कै उपकार[2] सुतहि पलटावहु, मोर जिउ लाग तौ लाइ जिआवहु।

बैदन्ह आइ नाटिका पकरी, बूझि बिचारा पीर।
चाँद सूर्ज दुइ निर्मल, दोख[3] न कुंअर सरीर ॥१५१॥

फिरि फिरि बैद नाटिका गहई, बेदन बिरह बैद का कहई।
बहु देखा करि कै जो उपाई, कुंअर सरीर न बेदन पाई।

---

[१४८] १ प्रीति एक० । २ बिरहावस भा० । ३ निकरौं रा० ।

[१४९] १ सुनिहसि ।

[१५०] १ रहा एक० । २ चढ़ा पेम एक० (पुनरुक्ति)।

[१५१] १ बहुरावहु रा० । २ प्रकार एक० । ३ औगुन भा० ।

उठि कै बैद एक अस कहा, बिरह भाव कुछ[1] जानित अहा।
कहा कुंअर लोयेन सर मारा, बेदन सो नहिं काज हमारा।
जौ किछु बेदन होइ तौ पाई, कहेसि चलौ तौ राउ जनाई।
उठि निरास भै बहुरे, पंडित गुनी सयान।
कुअरहिं पीर पिरम की, औखध कोउ न जान ॥१५२॥

---

[१५२] १ तौ एक०।

महथा खंड

राज क महथ एक अहा[1] सयाना, गुन निधान[2] चहुँ खंड बखाना।
वोइ सरबरि कोइ पार न पावै, गुननिधान जगु नाम कहावै।
गुन सो नाउ चहूँ खंड बाजा, कलि सहदेव कही तौ छाजा।
महा सुबुद्धि चतुरदस माहीं, जानैं जीव क समस्या जाही[3]।
औ मनि मन्त्र बहुत तौ जानै, एक मूरि गुन सहस बखानै।

सुनेसि कुंअर कै औनुस, आय बिचारेसि पीर।
कहेसि नाटिका गहि कै, दोख न कुंअर सरीर ॥१५३॥

कै देखेसि बहु भाँति बिचारा, कफ पित बात न अहै बिकारा[1]।
कहेसि ज्ञान जौ बेदना होई, नारी मांह रहै नहिं गोई।
आठौं आँग देखि किछु नाहीं, खन खन नैन झाँपि क्यौं जाहीं।
चाँद सुर्ज निरदोख अकासा, उठै ऊर्ध केहि कारन साँसा।
औ लोयेन नहिं पलक पराहीं, बिरह भाव यह सब जग माहीं[2]।

ढरै नीर दोइ लोयेन, चित नहिं चेत संभार।
बिरह खरग कर घायल, किछु नाहीं उपचार ॥१५४॥

पुनि सन्मुख भै पूछै बाता, कुंअर तोर जिउ कासौं राता।
कहु तोर जीउ केइँ हरि लियेऊ, पेम अमी तैं कहवाँ पियेऊ।
जौ मो सौं सत बकसति बाता, मेरवौं ताहि जाहि हहिं राता।
सरग देव कन्या जौ होई, मंत्र सकति कै[1] मेरवौं सोई।
कुंअर जीउ जै[2] होइ निरासा, त्रिभुअन धँस लै पुरवौं आसा।

कहसि बात निज मो सौं, केहि जिउ लागा तोर।
मैं बिद्या गुन सकति सौं, मेरवौं चाँद चकोर ॥१५५॥

जौ येह तीनि लोक महँ होई, मैं तोहि आनि मेरावौं सोई।

---

[१५३] १ है एक०। २ विद्या। ३ गहे एक०।
[१५४] १ सँचारा। २ बिरह बाँझु एहि औगुन नाहीं रा०।
[१५५] १ तें रा०। २ जनि रा०।

चढ़ि अकास ससि[१] अंब्रित गारौं, सरग अपछरा मंत्र उतारौं।
मंत्र सकति सौं गा बहुरावौं, कहहु तौ मुआ जिआइ देखावौं।
सुर नर नाग लोक कर भेऊ, कहौं सबै जो पूछत केऊ।
सेस इन्द्र कर[२] सकति बोलावौं, कहहु तौ मेरु सुमेरु डोलावौं।

कहु मौ सौं जनि गोवसि, कौन पीर तोरे जीअ।
कै रे सहज किछु उपजा, कै काहूँ किछु कीअ ॥१५६॥

महँथै बात कही रस भरी, कुंअर जीउ आये गहबरी।
अपने दुख[१] दुखिया जे पायेसि, सपनं[२] कथा जो बकति[३] सुनायेसि।
कहै कुंवर जग जीव पदारथ, तिरिआ लागि का खोवसि अकारथ।
तिरिआ जगत भई नहि काहू, तिरिआ पेम केहु भई न लाहू।
तिरिआ पेम जो जीवन लाये, सेंवर सुआ तैस फल पाये।

तिरिआ आपन कै कै, जग मति जानै कोइ।
जौ जौ अंब्रित सींचियै, निमकी मधुरी होइ[४] ॥१५७॥

भल जौ होत त्रिया बेवहारू, तुरकी भाखा कही न मारू।
काहु न सका त्रिया जग साधी, तिरिया औखध रूप बिआधी।
तिरिया जाति महा राकसिनी, जानि पतिआहि उपर देखि बनी।
जौ बिरचै तौ बिरहे जारै, जौ नहि रचै तौ खन महँ मारै।
ऊपर निर्मल पूनिव देही, भीतर स्याम अमावसि जेही।

तिरिया काँटा केतुकी, भौंर वोहट हुति बार।
कपट रूप देखु कै भूलहि[१], होइहै अंत बिकार ॥१५८॥

दिस्टि परत मन चित थरहरई, कया हानि तेहि पुर्ख कि करई।
जबहीं सुरति होइ निजु जानां, कया मूल तन भखै परानां।
जनि पतिआहि त्रिया जग भली, भौंर पुरुख वह केतुकि कली।
आपन सुख जहँवा[१] लगि पावै, अधिक त्रिआ पुर्खहि मन लावै।

---

[१५६] १ जे एक०। २ गुन रा०।

[१५७] १ × एक०। २ सुहिन भा०। ३ कहि एक०।
४ जनम जौ अंत्रित सींचहिं नींव कि मधुरस होइ।

[१५८] १ प्रगट सरूप देख जनि भूलहि।

बरबस पेम करै बरिआईं, पै सब अपनी चांड कि ताईं।

चहुँ जुग त्रिया न आपनि, समुझि देखु मन ग्यान।
तिरिआ पेम लगि जनि ब्रिथा, नाससि कुंवर अपान ॥१५९॥

जिय दै[1] जनि दुख लेहु अपारा, जनि दुख देखसि राजकुमारा।
तिरिआ पेम ब्रिथा संसारा, तिरिआ ताकै मंद बेवहारा।
परिहरि कुंअर त्रिआ औसेरी, त्रिआ जगत भई केहि केरी।
बायें अंग त्रिआ औतारू, संतति बायें जानु कुमारू।
चौथें ग्रंथ पुनि बावाँ कहई, मूर्ख[3] होइ सो दाहिन चहई।

तिरिअहि सबै अलच्छन, एक सुलच्छन सार।
महापुर्ख कौ जग महँ, तिरिअहि तें औतार ॥१६०॥

अनख बचन सुनि रहा न गैऊ, कुंअर जीउ बिस्मै किछु भैंऊ।
ए महथा तैं कलि सहदेऊ, कहतेव और कहत जौ केऊ।
पेम पीर जेहि जीउ समाना, कहत भले सो बात अयाना।
तोहि[1] कहँ अस केसे कहि आऊ, जानै तीनि भुअन कर भाऊ।
मैं अपान सब बैसा खोई, सिख बुधि सुनौ जौ रे जिउ होई।

पेम पंथ सुनु महँथा, मैं बैठा जिउ खोइ।
सुनौं सिक्ख तौ तौरी, जौं घट मो जिउ होइ ॥१६१॥

बैठ महँथ सुन बात हमारी, पंडित भै का करहु गँवारी।
जीउ भैंउ गै परबस मोरा, दहु कहु कहा सुनौं कस तोरा।
जिउ अरु कया केर चित राजा, जहाँ गैउ साथ सब काजा।
चित गयंद गौ फेरि को आना, ग्यानहु केर न अंकुस माना।
चित राजा कहँ रहै लोभाई, नैन सैन रसना सँग जाई।

तैं सब गुन सापूरन, देखु बिबेक बिचारि।
खाट तुरंग कि चित मिथ्या, कर सौं गौ करुआरि ॥१६२॥

---

[१५९] १ जौ वह एक०।
[१६०] १ तै एक०। २ औ। ३ पुर्खं एक०।
[१६१] १ एहि एक०।
[१६२] यह मा० रा० प्रति में नहीं है।

तोहि जिअ पेम न उपजा आई, का जानसि दुख बात पराई।
तै सुजान अति चतुर सुजाना, जानि बूझि का होहु अयाना।
बिरह आगि महँ कनक सोहागा, तोहिं तन आँच धूंअ नहिं लागा।
कया भस्म भै झोल उड़ानी, कौन सुनै तोरि सीख कहानी।
गये नाग का धरुनी[1] ठठावसि, जानि बूझि कत मोहिं बौरावसि।

उठहु महँथ पा लागौं, मैं तौ चेर तोहार।
जानि बूझि तैं बरबस, गांठी बांधि अंगार[2] ॥१६३॥

कठिन बिरह दुख जान न कोई, बिरह बिथा दहुँ कैसनि होई।
जो आवै सो कहै सोहाती, अधिकौ उठै बिरह तन छाती।
जेहिं जिय आइ समानेउ[1] कोई, प्रान साथ पै निसरै सोई।
मूरख लोग न जानैं ऐसी, जहाँ बिरह तहँ सिख बुधि कैसी।
बुधि कि बिरह की सरबरि पावै, बिरह पौन मिसु[2] दिआ बुझावै।

कुंअर सरीर सो ओनुस[3], जेहि जग मंत्र[4] न मूरि।
मूरख सब बरिआई, सुरज कि ढाँपै धूरि[5] ॥१६४॥(अ)

जौ महतै अस कीन्ह बिचारा, बेदन सो जो न काज हमारा।
बहुत बचन औ बहुत उपाई, कै देखेसि पुनि आपनि गुनाई।
जो निस्चै जिउ भैउ निरासा, चलेउ महंथ निज परिहरि आसा।
जाइ राइ सों कहेसि पुकारी, बेगि गिरिह गै पूत गौहारी।
सुनत राय ब्याकुल होइ धावा, अचक भयेउ मुँह बकत न आवा।

राय रारि दुख बाहे, मंदिर भयेउ अंदोर।
सगर नगर बिसमादा, राजगिरिह सुनि रोर ॥१६४॥ (आ)

राय पाग सिर भुँइ दै मारी, राजमंदिल रोवैं बर नारी।
कौंला आइ परी लै पाऊँ, कहै पूत का भयेउ बिपाऊ।
मोहिं पूत नहिं करहु निरासा, दूनौ जग मोहिं तोरी आसा।
पीर कहहु माता बलिहारी, केहि औगुन तुम भैहु भिखारी।
कौनि आगि जे त्रिभुअन जरई, कौनि सकति मोरि अस जिउ रहई।

---

[१६३] १ खंसन भा० । २ जाल कि मोंट बतास भा० ।
[१६४] १ समाना है एक० । २ बुधि । ३ औगुन । ४ बिय जगत एक०।
५ मूरख सब बिरहा में सुरज कि ढाँकहिं धूरि—भा० ।

मात पिता के देखत, दया उपज कुंअर के जीअ।
नैन उघारि कहेसि दुख, मधुमालति जिअ लीअ ॥१६५॥

पुनि कह कुंअर पिता सौं रोई, मैं आपन जिउ बैसा खोई।
दिन दस राय रजायेस पावौं, आपन जीउ ढूंढ़ि लै आवौं।
दहुँ जग नगर महारस कहाँ, मोर जीउ हरि लीन्हा तहाँ।
आयेस होइ जाइ जिउ हेरौं, जिउ मिलि कया पाप[1] जे फेरौं।
मकु सो करम जागि मोहिं[2] जाई, सपने पेम प्रीति जो लाई।
आयस होइ जाय जिउ हेरौं, मोर जिव जिअन सिरान।
करम होइ मकु दाहिन, मोहि मिलि जाइ परान ॥१६६॥

माता पिता सुनत गहबरे, दोउन कुंअर के पावन्ह परे।
कहेन्हि पूत जानेसि परवाना, हम दूनहुँ कर घट तुहहीं प्राना।
बरु हम पूत अंडारहु मारी, बिध बैस जनि जाहु अंडारी।
राज पाट सब मिलिहै माटी, हम तुह बाजु मरब हिय फाटी।
आयु सूर पिअर जम घेरा, सरवन मोर तुह रे दुख[1] केरा[2]।
बिरिध बैस जो दारुन, पूत न छांडहु भीर।
जस संमुद कै बोहित, तुह बिनु लाव को तीर ॥१६७॥

———

नोटः—एक० प्रति में १६४ आ छन्द के स्थान पर छन्द संख्या १८८ की पाँच पंक्तियाँ और १६६ का अन्तिम दो पंक्तियाँ हैं। अतः इस छन्द को अन्य प्रतियों के साद्य पर पूरा किया गया है।

[१६६] १ क ग्यान एक०। २ मकु एक०।

[१६७] १ जौ एक०। २ फेरा एक०।

जिअ भरोस जै[1] करहु हमारा, आयु दीपक मोर भिनुसारा।
माता पिता न करहु निरासा, बिछुरे बहुरि न मिलनां आसा।
जौ मैं कलि यह[2] परिहरि जाऊं, तोहिं सौं जिअत रहै जग नाऊं।
सुत बियोग दसरथ कै नाईं, मैं पुनि पूत मरब तोरि ताईं।
हम पहिले दूनहुं जिउ मारहु, तौ तुम्ह पूत बिदेस सिधारहु।

मोहिं जिअत नहिं मारहु, मोरे और न कोइ।
हिआ फाटि ररि मरिहौं, सो हत्या तुह होइ[3] ॥१६८॥

मातै पितै रोइ जत कहा, कुंअर के कान न एकौ रहा।
पेम पंथ जेइं सुधि बुधि खोई, दोनौं जग कछु समुझ न कोई।
कठिन बिरह दुख जा न सँभारी, माँगा खप्पर डंड अधारी।
चक्र हाथ मुख भसम चढ़ावा, स्त्रवन फटिक मुंद्रा पहिरावा।
उडिआनी कर किंग्री सांटी, गुन किंग्री बैरागी ठाठी[1]।

कंथा मेखलि चिरकुटा, जटा परा जो केस।
बज्र कछोटा बांधि कै, बैसा गोरख भेस ॥१६९॥

दुख उदास बैंराग मेरावा, इन्ह तीनहु तिरसूल गढ़ावा।
औ रुद्राख केरि जपमारी, औ सिंगी जो अलप अधारी।
बैसाखी गोरख धंधारी[1], ध्यान धरै मन पौन संभारी[2]।
पेम पाँवरी राखेसि पाऊँ, म्रिगछाला बैराग सुभाऊ।
दरसन लागि दरस ते फेरा, जाँचै[3] दुख मधुमालति केरा।

ग्यान ध्यान औ आसन, सुनत पंथ लौ लाइ।
दरसन लागि भेस ते फेरा, मकु गोरख मिलि जाइ ॥१७०॥

सिद्ध रूप दीसै बैरागी, मधुमालति के दरसन लागी।

---

[१६८] १ जनि। २ काली एक०। ३ सँवरिं सँवरि गुन रोइ।

[१६९] १ साँटी एक०। (पुनरुक्ति दोष)।

[१७०] १ धंधोरी। २ सँकोरी भा०। ३ जपै एक०।

मारग जोग सिद्धि निधि खोई, बहुरि मिले मधुमालति सोई।
गुर दरिसन सैं[1] लै उपराजी, सहज अनाहत[2] किंगरी बाजै।
मधु रूप सौं[3] अस चित भजा, आवा गौन पौन घट तजा।
बिरह आगि सैं तन मन जारा, पौन[4] पानि तैं नैन[5] पखारा।

कै गुरु रूप नैन गड़िआने, स्रवन समाने बैंन[6]।
मधु दरसन सौं लाइ लौ, बैस साधि जे मौन ॥१७१॥

मात पिता सुनि आये पासा, देखि कुंअर उर काढ़ेनि साँसा।
औ मुख देख छार लपटानी, धोवा बदन कँवल के पानी।
कहहिं पूत तैं आस हमारी, राज छोड़ि कस होहु भिखारी।
और अहै जो अरथ भंडारा, अब लगि मैं तोहिं लागि[1] संभारा।
जो तुह काज न आवै आजू[2], सो मोरे पुनि कवने काजू।

अरथ दरब जन परिजन, संग लेहु बहुताइ।
जौ मधुमालती मिलै, मांगि बिआहेहु जाइ ॥१७२॥

भोर भए दर परिगह साजा, कोस बीस संग आये राजा।
हाथी घोरा सहन भंडारा, कटक अनेग गनै को पारा।
औ जत अरिजन परिजन आये[1], कुंअर साथ सब राय चलाए।
पूँछत चले महारस देसा, जहँवा विक्रम राय नरेसा।
चलत आये सायर के तौरा, अगम अथाह अति गंभीरा।

हाथी धोर दर परिगह, औ जो सहन भंडार।
चढ़ा कुँअर लै बोहित, लिखा को मेटै पार ॥१७३॥

---

[१७१] १ लै एक०। २ अनंद एक०। ३ सुनि एक०। ४ नैन एक०। ५ पिंड। ६ सुनहु मान जे सैन एक०।

[१७२] १ × एक०। २ काजू एक०।

[१७३] १ राए एक०।

बोहित खंड

बोहित बोझि समुंद चलावा, बिधि का लिखा जानि नहिं पावा।
मास चारि गौ पानी पानी, पुनि सो अदिन घरी निअरानी।
समुंद लहरि दरसहिं[1] अंधियारी, दिसा भुलान बोहित कंडहारी।
मगु अगंम न जाइ बिचारी, बोहित परा लहरि उठ भारी।
परतहिं भयेउ टूक सै साता, चहुं दिस बोहित उठा अघाता।

बूडा सबै मीत जन परिजन, औ जो सहन भंडार।
बूड़ा राजपाट जेत आहा, बूड़ा तुरै तुखार ॥१७४॥

कुंअर आस जिव कै परिहरी, पुनि कै ध्यान दै सुमिरा हरी।
तीनि भुअन तैं रछ्यक साईं, केहि जांचौं तोहि छोड़ि गोसाईं।
जग जीवन दायेक बिनु तोहीं, को[1] बूड़त घै काढ़ै मोहीं।
जिन्ह गाढ़े सुमिरा करतारा, भौ ताकहँ फुलवारि अंगारा।
एहि आँतर बिधि दया जनाई, कुंअर टेक बूड़त महँ पाई।

बिधि परसाद कुंअर के आगे, काठ एक उतरान।
बूड़त राजकुंअर गहि पकरा[2], जात रहत[3] घट प्रान ॥१७५॥

भौ कुंअरहिं जे काठ अधारा, समुंद लहरि पुनि उठी अपारा।
पुनि जौ कुंअर लहरि मों परा, जिउ ते जीउ आस परिहरा।
बहुरि न जान कुंअर का भयऊ, कहँ ते कहाँ लहरि लै गयऊ।
लहरि कुंअर लै तीर अंडारा, जहाँ न चाँद सूर उजिआरा।
लहरि भँडार समुंद जो आई, कुअरहिं तीर अचेत लंडाई[1]।

पुनि जौ चेत चित चेतै, परा अहै बिसँभार।
आगू पाछु न कोई, बिनु दुख कुँअर दयार ॥१७६॥

राज सोज बूड़ा जत अहा, मधुमालती पै दुख संग रहा।
चहुं दिस फिरि देखै कोइ नाहीं, रही एक पै संग परिछाहीं।

---

[१७४] १ निसि एक०।

[१७५] १ कर। २ एक-एक०। ३ राखत एक०।

[१७६] १ अँडाई।

जेहि बन कबहुँ न मानुस आवा, तेहि बन लै जो कुंअर अँडावा।
पुनि उठि कुंअर चला बन माहीं, जहाँ पंखि पर मारत[1] नाहीं।
अगम पंथ दुख साथ न कोई, खन धावै खन बैसै रोई।

सीस रुधिर पाँव आवै, पाँव रुधिर सिर जाइ।
बेर सहस जौ बैसे, तौ एक धाप सिराइ।।१७७।।

चला जाइ बन माँह अकेला, अगम पंथ अति[1] कठिन दुहेला।
सिंघ सेंदुर चिघारैं हाथी, एकसर कुंअर न दूसर साथी।
चलत न खिन मानै बिस्राऊँ, चित चिंता जो[2] प्रीतम नाऊँ।
पुनि केदली बन केर पसारा, परी सांझ औ भा अंधियारा।
जौ असूझ जहँ रेंगि न जाई[3], बैसि कुँअर तहँ रैनि बिहाई[4]।

आसन लाइ कै बैसा, पकरि एक तंत ध्यान।
जुग सम[5] रैनि बियोग कै, जागे भाव सो जान।।१७८।।

---

[१७७] १ मारथ एक०।

[१७८] १ जो एक०। २ जपत जीभ जा भा०। ३ अति भा अँध्यारा एक०। (परवर्ती अर्द्धाली द्रष्टव्य)। ४ जो लीन्ह बैसारा एक०। ५ जगमग एक०।

भा भिनुसार चला उठि राऊ, पिरम पंथ सिर दै कै पाऊ।
बिरह सरीर आइ अधिकानां, कहा करौं नहिं जाय बखानां।
मधुमालति मधुमालति ररई, सौरि सौंरि सिर भुँइ लै धरई।
चेत औ ग्यान सबै हरि लीन्हा, भौ अचेत न काहू चीन्हा।
पिरम पंथ जिव देत न हारौं, जौ सौ जीउ होइ तौ वारौं।

चलत चलत बन भीतर, देखी चौखंडि राइ।
चित मो चेत भा तेहि देखे, समुझहिं मनैं गुनाइ ॥१७९॥

तिल एक मनै माँह गुन राऊ, पुनि भीतर अवधारा पाऊँ।
देखा सेज नौल रँगराती, तापर राजकुँअरि मदमाती।
छिरका सेज सुगंध सुबासू, लुबुधे भौर न छाँड़े पासू।
पुनि चलि राउ सेज तन गैऊ, उपजी संक भरम मन भैऊ।
ससिवदनी जोबन बिकरारी, निहकलंक बिधनै औतारी।

गुनवंती जो आगरी[1], मनमोहनि संसार।
धन्य सिस्टि जे सिरजा, धन धन सिरजनिहार[2] ॥१८०॥

सोवत सेज[1] मैं बरनौं कहा, कँवल भँवर जनु संपुट गहा।
अंब्रित बिस दुइ जानि न गये, बिबि लोयेन दहुँ काके भये।
बदन लिलाट सराहि न जानौं, खन पूनिव खन दूजि बखानौं।
सारंग जो सारंग प्रतिपाला, ससि की प्रीति म्रिगा रथ चाला।
तिल कपोल पर बनेउ अपारा, एक बूंद भौ सहस सिंगारा।

नौ सत साजे बाला, निभरम नींद सुख सोव।
दुइ चखु कुँवर चकोर जेंउ, चन्द्रबदनि मुख जोव ॥१८१॥

चिहुर नाग बिस लहरैं देई, देखत जिउ जोबन हरि लेई।
अपिय[1] अमीरस भरे कटोरा, उलटि धरे[2] मानों कनक कचोरा।

---

[१८०] १ नागरी। २ सुतनिहारि रा०।

[१८१] १ सैनिक रा०। नैन भा०।

रंग मेंहदी कर पल्लौ राती[3], रोंव रोंव जोबन मदमाती।
बेनी भाव बरनि नहिं जाई, सेस मुमेरु चढ़ा जनु आई।
अधर सुरंग देखि मन हरई, त्रिभुअन मुनिजन धीर्ज न धरई।
चतुर[4] सहज रसमाती[5], नख सिख बने सुरेख।
जन्म खुरक हिय ताके, एक निमिखि जो देख ॥१८२॥

देवस चांद मकु इहां रहाई, रैनि सरग[1] गये उदै[2] कराई।
कै यह सरग अपछरा बारी, इन्द्र[3] सराप धरती धै डारी।
कै यह सरग बनसपति नाऊँ, इहाँ आइ दिन करु बिस्राऊँ।
कै यह डाइनि है बन केरी, माया रूप धरेसि है फेरी।
सै जोजन कोइ आस न पासा, इहाँ कहाँ दहुँ मानुस बासा।
कै यह भेस धरे बनसपति, कै मोर जिउ भर्मान।
कै काहू मोहिं भोरवै, कै उटवा[4] मया मसान ॥१८३॥

निरभम[1] नींद सोवै बर नारी, भर जोबन जो पेम पिआरी।
देखि कुँवर चित रहा लोभाई, सेज निअर भै बैसा जाई।
कबहीं भरम जीव मों धरई, कबहीं पिरम रस निभरम करई।
पुनि करवट लीन्हा अंगिराई, सहज भाव चित पैसा आई[2]।
अंगिरानैं भुअडंड पसारे, ससि रे सूर दुइ भये उघारे।
सँजग भए बिबि लोयेन, भौंहे चढ़ीं कमान।
सरग इन्द्र नर प्रथिमी, फनपति हेठ सँकान ॥१८४॥

जागि उठी पुनि नैंन उघारे, भए कुरंग[1] जो चित अनियारे।
पुनि जौ डीठ कुँवर पर परी, भरमित भै जौ चित मों डरी।
पुनि रस बचन सहज तौ बोला, बर कामिनी जे रूप अमोला।
पूछेसि तैं को कहाँ ते आवा, भएउ ऐस का कर बौरावा।
मदन मूरती मानुस अहही, कहु नाव कस[2] बात न कहही।

---

[१८२] १ आपै एक०। २ उलथिर एक०। ३ तरुवा रंग महावर राती भा०। ४ चित्र भा०। ५ रंग भीने भा०।

[१८३] १ सुरंग एक०। २ सेवा एक०। ३ केहि एक०। ४ एतौ भा०।

[१८४] १ सुभर। २ आई जमुहाई भा०।

सत भाखु तैं मोंसौं, को हँसि भूत बैतार।
राजकुंवर मनुसे जस देखौं, कस छांडेसि घरबार ॥१८५॥

केहि बियोग छाँड़े घरबारा, सत भाखु सत जगत पिआरा।
जेहि जिउ सत संघाती होई, तेहि सरि और न पूजै कोई ॥
सती असत्त न भाखै काऊ, सत आहै संसार सुभाऊ।
तैं पुनि कहु मोसौ सत बाता, नाव कहौ जाके रँग राता।
समुंद नाव महँ सत कंडहारा, बिन सत केउ न उतरै पारा।

सत कहौं सत जानेहु, सत साथी नौ खंड।
मनुसे जौ सत भाखै[1], पिंड चढ़ै ब्रहमंड ॥१८६॥

कै तोहि आह प्रीतम मदमाता, कै कहूँ तोर जिउ हरि राता।
कै मूरख मन रहसि भुलाना, कै चित मों न ग्यान समाना।
कै तोर अर्थं दर्बं हरि लीन्हा, कै चिल्हवाँस सत्रु तोहि दीन्हा।
कै रंग मदमाता न संभारेसि, कै रे गरब सें कहै न पारसि[1]।
कै भरमसि देखे येहि ठांई, बकत सिद्धि[2] परसिद्धि गोसाईं।

निभरम होहु भर्म तजि, जनि जिअ मानहु संक।
सहज भाव ते पूछौं, ससिबदनी निकलंक ॥१८७॥

कै तैं आय सहज चित चढ़ेऊ, कै तैं पेम सास्तर पढ़ेऊ।
कै रे माय तोहिं दीन्ही स्रापा, कै काहू सिर टोना थापा।
कै रे गूद तोरे सिर फिरेऊ, कै रे सिस्टि बिधि[1] बाउर सिरेऊ।
कै रे ब्रह्म भेद[2] तैं जाना, कै काहू के रूप भुलाना।
कै तोर जीउ सहज हैं राता, कै तैं पेम सुरा कर माता।

कै तैं मूल गंवाए, कै तोहिं कुटुंब[3] बियोग।
कै बर कामिनि बिछुरी, तेहि उपजा जिउ सोग ॥१८८॥

पुनि उठि कुँवर बात अनुसारी, बर कामिनि सुनु पेम पिआरी।

---

[१८५] १ सुगंध एक० । २ सत एक० ।
[१८६] १ सँभरै भा० ।
[१८७] १ रंग मदमाता न सँभारेसि एक० । (पुनरुक्ति) । २ सत्त ।
[१८८] १ जग एक० । २ बेद एक० । ३ कठिन एक० ।

मैं आहौं परदेसि बटाऊ, मन बैराग पंथ सिर पाऊँ।
सत पूछत आहौं मैं तोहीं, निस्चै सत्त कहसि तैं मोहीं।
सै जोजन मानुस नहिं पाऊँ, मकु डाइनि आहै एहि ठाऊँ।
चहुँ खंड भँवत भँवत मैं आवा, मैं जाना तीर मैं पावा।

रूप धरे हसि डाइनि, देखौं लक्खन निनार।
नातरि ऐसे बन महँ, मानुस रहै कि पार ॥१८६॥

जेहि बन मों पंखी न उड़ाई, तहवाँ मानुस कहा कराई।
भरमित बन जनु खायें धावै, मनुसे कहाँ इहाँ दहुँ आवै।
अरु मानुस येहि रूप न होई, धरे रूप भयावन है कोई।
को आहहि कहु आपनि नाऊँ, कस कीन्हे[1] बन भीतर ठाऊँ।
अरु न कोइ सँग साथ सहेली, बन निकुंज किमि रहौ अकेली।

निरभम चित्त अकेली, बन मों रहौ निसंक।
हरि नैनी हरि बैनी, ससि[2] बदनी निकलंक[3] ॥१६०॥

केहि तैं आपन दुख सुख कहही, केहि जिउ लाइ रैनि निर्बहई।
दोसर कोइ न देखौ पासा, बैरागी ज्यौ अधिक उदासा।
प्रीति बास मोहि तोसै आवै, नहिं जानौं का भेद जनावै।
नैन चिन्हारी तोरि न पावहिं, बचन तोर ज्यौ भेद जनावहिं।
कहु केहि गन्ध्रप कै हसि[1] नारी, कौन राजघर[2] राजदुलारी।

प्रीति भेद मैं पावौं तों सौं, कहु मोसैं बर नारि।
काकरि परम[3] पिआरी, काकरि राजदुलारि ॥१६१॥

अब सुनु बात कहै बर नारी, मैं राजा घर राजदुलारी।
चित बिस्राउँ नगर मोर ठाऊँ, चित्रसेनि धिअ पेमा नाऊँ।
भाग फिरा जौ कुदिन जनाये, लोग कुटुंब सौं बिधि बेगराये।
अलप अभोली पिरम[1] न जानौं, पिता राज बालापन मानौं।
बासर खेलि खाइ बहलावा, बिनु[2] चिंता निसि सोइ बिहावा।

---

[१६०] १ कीते भा० । २ हरि रा० । ३ हरि लंक ।
[१९१] १ घर भा० । २ बर रा० । ३ पेम ।
[१६२] १ पीर एक० । २ चित एक० ।
३ क्रीडा कोड कुराहर भा० ।

बिरह बियोग संताप दुख, नहिं जानौं कस होइ।
खेलत हँसत आपु मो[3], निस दिन बेलसै सोइ ॥१९२॥

नगर सोहावन चित बिस्राऊँ, गोंइड़े नगर पिता लखराऊँ।
सीतल छांह घनी अँबराई, जति कबिलास जानु भुंइ छाई।
बाँधे पेड़ रहैं[1] सब भारी, अरु सब तरु तर पानि पनारी।
अरु अनेग जो पंखी आये, करैं केलि रस बचन सोहाये।
सदा बसंत रहै अंबराई, मरुत बास लै दहुँ दिस जाई।

अमिअ सदा[2] फल लागे, सदा फरै अँबराउ।
गन गंध्रप रिखि मुनि जन, आइ करैं बिस्राउँ ॥१९३॥

---

[१९३] १ सफर। २ समान।

अजहुँ न कंत भिरे गीव लाई, अजहूँ न रूठे मान मनाई।
अजहूँ रंग रोस तिन्ह थोरा, अजहुँ न उभरे कनक कचोरा।
अजहूँ जोबन कली न मौली, अजहूँ सहज दुलारे बोली[२]।

अजहुँ सरीर न छांड़[१], लरिकाईं कर भाउ।
अजहुँ अमोलि न जांनौं, पेम सुरा कर चाउ ॥१९७॥

अजहूँ पहिरि न जानौं चोली, अजहुँ पेम रस भाव अमोली।
अजहूँ अधर अमीरस ढाँके, अजहूँ भये न लोयेन बाँके।
अजहूँ नाह सूति गात न लागे, अजहूँ सुरति काम नहिं जागे।
अजहूँ प्रीतम नाहिन आवा, अजहूँ काम भाव न जगाबा[१]।
अजहूँ सुरति संक मन नाहीं, अजहूँ उसीस धरा ना बाँहीं।

अजहूँ अहौं अमोली, नहिं जानौं रसबात।
अजहुँ नैन तीखन बांके, का जानौ बिहसंत ॥१९८॥

तेहि दिन संग भईं सब बाला, म्रिगनैनी हँस गौनी चाला।
रहसि चली बालापन बाले, अधर[१] अमी रस भरे रसाले।
सब सुकुमारि लता ज्यौं डोलै, बचन सुरस कोकिल जिमि[२]बोलै।
देखत लंक भरम जिव करई, बिधि येह छुअत टूट नहिं[३]परई।
अमिअ कुंड नाभी बस बारी, बेनी सीस ताहि[४] रखवारी।

चतुर गुनी[५] सब नागरीं, सुंदर सुबुधि सुजान।
भौंह धनुख बरुनी सर, मारहिं ताकि परान ॥१९९॥

कहै सखी सब मोहिं बुझाई, पेमा तुरित चलौ अंबराई।
मातै कहा न लावहु बारा, उनके आयेसु करु प्रतिपारा।
कौनौ सखी करै हम छांहा, कौनौ उससि देइ गले बाँहा।
कौनौ सखी पान खिआवै, कौनौ सुरस बचन सुनावै।

---

[१९७] १ नर एक०। २ बौरी।

[१९८] १ अजहूँ सुरति सोहाग के चोला। पेम रहस से कंत न खोला भा०।

[१९९] १ आपे एक०। २ × एक०। ३ जनु। ४ नाग रा०। ५ कला रा०।

बहु बिधि कोड़ करैं ते नारी, रूप अपछरा जोबन बारी।
ते सब मिलि कै संग ही, रहसि चलीं अंबराउ।
मकु बुधि[1] तब न संभारा, जो अस भौ बिपाउ ॥२००॥

केलि करत मैं मधुबन आई, जहां आहिं सब सखी[1] सवाई[2]।
सुरस पंखी[3] भाखा बररई[4], चातिक बहुत पीउ पिउ करई।
कतहूँ भौंर पुहुप लपटाने, कतहूँ पंचम बैन सुठाने।
कतहूँ अबिगस[5] कली बिगासै, कतहूँ मोर कोकिला बासै।
कतहूँ फूल सुरंग सुबासा, जहँ देखिय तहँ पेम हुलासा।
जेहि सरीर ना सँचरा मन्मथ, तेहि मन छाँड[6] धिराइ।
मदन सहाइ देखि अंबराई, मुआ अनंग[7] जिआइ ॥२०१॥

देखि सखी सब रहीं हुलासी, केलि करैं खेलैं नौला सी।
कोइ गनि गनि[1] कोकिला उड़ावै, कोइ मंजूर नाच देखि धावै।
चित अनंद रहसीं सब खेलैं, बहुतै कुसुम तोरि गीव मेलैं।
बहुतन्ह फूल चढ़ावा माथें, बहुतन्ह हार केंदुवा[2] गाँथे।
कुसुम बास सुरंग जो पावैं, सो मोहिं पास धाइ लै आवैं।
रहसत रवैं[3] तें मधुबन, तोरैं कुसुम सुबास।
कौंल बदन म्रिगनैनीं, भौंर न छोड़ैं पास ॥२०२॥

एहि बिधि केलि करैं ते बारी[1], कौंल बदनि तें अति सुकुँवारी।
औ सब गात[2] सुबासित लाये, पुहुप बास तजि[3] मधुकर धाये।
काहू सीस जौ चढ़ि चढ़ि[4] बैसे, काहू उर जो चाहहिं पैसे।
अधर सुरंग अमी[5] जो अहे, कौंल वास ते मधुकर गहे।
अब लगि बहुत जतन जे राखे, ते मधुकर बरबस रस चाखे।

---

[२००] रा० तथा भा० में यह दोहा नहीं है।
१ बिधि एक०।

[२०१] १ मदन। २ सहाई। ३ सखी एक०। ४ मन हरै रा०।
५ बिगसी एक०। ६ छाँव एक०। ७ अंत एक०।

[२०२] १ कोइल एक० (पुनरुक्ति)। २ गीव गीव एक०। ३. भवैं।

ढाँके[६] अधर सबन्ह के, अकुतानी बर नारि।
आगे मधुकर घेरें, पाछे गहे पुछारि ॥२०३॥

बिगसै कौंल भाँति तें बारी, बैठे मधुकर कै बिकरारी।
ब्याकुल बात कहैं ना पावैं, साँस लेत मुँह पैसैं धावैं।
अकुतानी भौ भंग सिंगारू, कंचुकि फाटि टूटि गा[१] हारू।
परी अवस्था सब अकुतानी, नासा तिलक माँग बिथरानी[२]।
नौ सत जो धर सें कै आईं, नासि चलीं ते सब अंबराईं।

दुइ कर बदन छपायें, धाईं ते बर नारि।
चित्रसारि गै पैठी, पौरि दीन्ह सब ढारि ॥२०४॥

येहि अवस्था तें बर नारी, आईं धाइ मंदिल[१] चित्रसारी।
बहुतन्ह के कर[२] कंकन फूटे, बहुतन्ह हार गीव गहि टूटे।
बहुतै अधर पयोहर टोवहिं, बहुतै चिन्ह अधर देखि रोवहिं।
बहुतै हँसहिं बहुतै बिलखाहीं, बहुतै माता पितहिं संकाहीं।
बहुतै सीस केस मोकलाये, बहुतै काजर नैन नसाये।

सबै सिंगार भंग भा, कोइ हँस कोइ बिलखाइ।
भौंर भयें जिय[३] भरमीं, धर दिस चलै न जाइ ॥२०५॥

पुनि आपुस मों कहैं बिचारी, घर कहँ चलौ तजौ चित्रसारी।
बहुरि कहा कैसे धर जाई, जननी पूँछ तौ कहा कहाई।
किछु उर संका जननी कै धरहीं, बहुत संक मधुकर कर करहीं।
जनीं चारि एक अहीं[१] सयानी, ते कछु अलप संक मन मानी।
कहेन्हि चलहु होंहि हम आगे, तुह आवहु हम पाछे लागे।

पुनि उठि पौरि उघारा, निसरीं सबै सँकात।
बदन[२] न भरम उधारैं, साननि बोलैं बात ॥२०६॥

---

[२०३] १ नारी एक० । २ बास एक० । ३ ते एक० । ४ चढि भा० ।
५ अपिय भा० । ६ काटे ।

[२०४] १ गियँ भा० । २ उघसानी ।

[२०५] १ माँझ । २ उर एक० । ३ भै एक० ।

[२०६] १ आइ एक० । २ मदन एक० ।

बाहर चित्रसारि जो आईं, भरम न गौ जो जिउ भर्माईं ।
डर्राहि न आपुस मो बेगराहीं, एकहिं ठाँव भईं सब जाहीं ।
पुनि राकस एक आइ तुलाना, देखि सखिन्ह जिय तजा पराना ।
तेहि देखे मन संका आई, हम रूखन्ह तर रहीं छिपाईं ।
हौं जेहि ठांव छपानी अही, राकस आइ तहां हम गही ।

साठि सखी महँ एकसरि, मोहिं धरेसि[1] बेगराइ ।
नैन मटक के मारत, एहि बनखंड लै आइ ॥२०७॥

एक बरिस भा मोहिं एहि ठाऊं, सपने सुना न मानुस नांऊं ।
आजु निमिखि एक जीवन लेखेउं, मानुस रूप जौ रे तोहि देखेउं ।
बिन जिउ भई रही येहि ठाईं, जिउ बिनु कया जिअब कब ताईं ।
कुटुंब बियोग रैनि दिन दहई, पापी जिअ निकसै नहि चहई ।
सुख हरि लीन्हा दुख जिव बाढ़ा, अब सो[1] जीउ जाइ नहि काढ़ा ।

येह संताप दुख कौं लहि, मैं जग जिअत रहाब ।
जस सरजल[2] बिनु काँदौं, उरध फाटि मर जाव ॥२०८॥

मैं आपन सब[1] परिहरि जाई, बिना जीउ मोहिं जिऐं न आई ।
यह रे दुख दिन एक मरि जैहौं, कब लगि मैं ऐसे जिउ रहिहौं ।
सुन्न सरीर अधर पर[2] साँसा, छांड़ी कया जिवन कै आसा ।
कुंअर देखि तैं मोहिं विचारी, बिनु जिउ बात कहै बर नारी ।
रहस चाव सुख[3] सब परिहरा, जेहि दिन सौं मोहिं दानौ छरा ।

बिना आयु धर जीव है, तापर बिरह दहाइ ।
जो जिउ जाइ बियोग मों, सो केउँ आउ भनाइँ ॥२०९॥

बारह मास रकत मैं रोवा, मरना भला न यह रे बिछोवा ।
समुझि समुझि जे फाटै छाती, माँसु न कया बिरह[1] भौ काँती ।
हिअ फाटै बन देखि अकेली, दुख सखी[2] भौ बिरह सहेली ।
बिधि किछु पुरब मंद लिखि राखा, जन्म ब्रिछ बिख फर साखा[2] ।

---

[२०७] १ पकरिसि ।
[२०८] १ बरबस भा० । २ सरसल एक० ।
[२०९] १ जिय भा० । २ बरु । ३ जे एक० । ४ कहाइ ।

कै काहू दुख दीन्हा भोरे, सो रे उलटि परा मोरे कोरे।

गुपुत रकत निसि बासर, पिऐ सबाई आउ।
दिन एक रकत बिनासिहि, बाहर काढ़ै धाउ ॥२१०॥

कहौं बात आपनि मैं तोहीं, दुख बिन और न साथी मोहीं।
मात कोर मै पंखी न दुखायेउँ, कौन पाप बिधना सौं पायेउँ।
येह निकुंज बन दोसर न कोई, जो मोरे दुख क संघाती होई।
दुख संताप बिनु और न पावौं, जासौं तिल एक दिल बहलावौं।
प्रान तजै चाहै बर नारी, जीवन भएउ जगत मोहिं भारी।

पीर करेजे हिये दुख, बिरह दग्धि उतपात।
दैया केउँ करि जिऔं, यह दुख बिरह संताप ॥२११॥

मोर दुख सुख जहाँ[1] लगु अहा, लाज छोड़ि मैं तोसौं कहा।
तैं पुनि कहु आपन दुख मोहीं, जो रे इहाँ लै आवा तोहीं।
आदि दुखी मैं तोहिं न देखौं, राजकुंअर अस बदन निरेखौं[2]।
भाग उदित मनि माथे बरा, कैसे सिस्टि भौ मानुस करा।
इस्ट भाइ कोइ सेवक नाहीं, तोरे संग बाजु परिछांहीं।

समुंद लांघि कै आयेसि, यह अचरज है मोंहि।
राकस भूत भयावन, कैसे छोड़ेन्हि तोंहि ॥२१२॥

चांद सूरज जौ उवहिं अकासा, तिन कर इहाँ नाहिं परगासा।
तैं मानुस इहवाँ केउं आवा, पूछति हौं कहु आपनि भावा।
नगर कहहु औ पिता कर नाऊँ, भूमि कहहु आछहि जहाँ ठाऊँ[2]।
कुरी ऊँच की नीच तोहारी, राय रंक की अहौ भिखारी।
कया छीन जनु मरन सनेहा, माँसु रकत नहिं देखौं देहा।

आदि अंत लगि बातैं, सबै कहीं मैं तोंहि।
तैं पुनि बैसु निमिखि एक, आपन दुख कहु मोंहि ॥२१३॥

---

[२१०] १ हाड एक० । २ सुख एक० । २ सो फरमोहिं बिधाता दीन्हें भा० ।

[२१२] १ कहाँ एक० । २ बिसेखेउँ भा० ।

[२१३] १ अहिं एक० । २ जे आपनि नाऊँ एक० ।

पेमै बात सबै जो कही, कुंअर सुना जहवाँ लगि अही।
चित भरमा सुनि राकस नाऊँ, मन मैं कहेसि इहाँ सो जाऊँ।
जौ अबहीं वोह राकस आवै, निमिख मांहि मोहिं मारि लंडावै।
वोहि आगे कहँ जाउँ पराई, मुये चाह पछताव रहाई।
औ मोहि आगे है बड़ काजू, जेहि लगि निसरेउँ परिहरि राजू।

येह गियान मन गुनि कै, ठाढ़ भयेउ उठि राउ।
नैन नीर भरि पेमां, धाइ परी लै पांउ ॥२१४॥

बहुरि कुंअर बर नारि उचाई, देखि बदन चित उठा छोहाई।
मोह भयौ मन मया मरोरा, पीरम समुंद उठेउ[1] हिलोरा।
पेमा दुक्ख कुंअर हिअ जरा, जानहु जरति आगि घ्रित परा।
देखि कुंअरि मन गहबरि आवा, चित माया ते जाइ न जावा[2]।
बदन देखि चित उठा मरोहू, कुंअर करेज औंटि भा लोहू।

दुखिया सो दुख जानै, जेहि दुख होइ सरीर।
बिनु दुक्ख का जानै, दुखदाधे की पीर ॥२१५॥

———

[२१५] १ दीन्ह एक० । २ खावा एक० ।

रकत धार[1] जस पेमै रोवा, जेइ सुना सो हिए करोवा।
मन गहबरि हिय उठा अंदोरा, नैन समुंद जो दीन्ह टंकोरा।
दुख ब्यापा सुख बकति न आवै, निकसत बात कहन नहिं पावै।
लोयेन दुनौ पूरि जल भरे, सीप फूटि जनु मोती झरे।
दुख तरंग जो हिये ऊभरे, रोवँ रोवँ सो आँसू ढरे।

सूरज चाँद तारागन, बासुकि इन्द्र कुबेरु।
पेमां सब दुख रोये, धरती गगन सुमेरु ॥२१६॥

पेमा नैन रकत भर रोवा, सुअटै तासु रकत मुंह धोवा।
पिक कराल जरि भए दौं[1] कोरे, दुख दाधे तरुअर पतझारे।
कँवल गुलाल भये रतनारे, फूल सबन्ह तन काँपत झारे।
देखि अनार हिया बिहरानै, नींबू[2] तुरुंज डार पिअराने।
नारंग रकत घूंटि भइ राती, घाय खजूर फाटि गै छाती।

आँब भए दुख बाउर, महुआ भा बिनु पात।
ऊख भई दुख टूक टुक, पेमा दुख[3] उतपात ॥२१७॥

भौंर भुजंग दुनौ दौं जरे, और[1] करील पात परिहरे।
मेंहदी रकत रती घट भीनी, जूही दुखहिं भई तन छीनी।
टेसू आगि लाइ सिर रहा, कलिन बंद[2] दुख संपुट गहा।
फरी डार तरुअर दुख नए, कौंल कुमुद जल बूडन गये।
जामुनि भई डार दुख कारी, कटहर पहिरु काँट की सारी।

रकत रोइ बन घुंघुंची, रही जो राती होइ।
मुंह काला कै बन गई, जग जानै सब कोइ ॥२१८॥

दुख दाधे बड़हर पिअराने, अंबिली टेढ़ि भई जग जाने।

[२१६] १ आँसु रा०।
[२१७] १ ×एक०। २ बीनु एक०। (वर्ण विपर्यय)। ३ सुनि।
[२१८] १ दुक्ख। २ बदनी एक०।

रूखन्ह दुक्ख दाँत भँइ धरे, कलपब्रिछ पुहमी परिहरे।
हारिल दुखहिं हारि भुंइ आवा, गादुर दुख ते रूख टंगावा।
दुख के डार जो बौरि डेरानी, भौ निरतेज रूख लपटानी।
चील्ह[1] जो दुख के भै तें डरी, कबहिं पुरुख कबहीं इसत्री।

दुइ भाखा कै वोट लुकानी, जीभ फेरु भिंगराज।
तबहीं भौ दहि कोइला, पेमा एहि दुख काज ॥२१९॥

तुरै न पाख तजा खर खाये, जीन बांधि नर पीठ चढ़ाये।
हाथी बन तजि अंकुस सहे, सीस नाय धूरि भरि रहे।
भैंसिन्ह सींग सहा दुख भारी, नीक निरत जी कीच अधारी।
भेंडी सघन रोंव तन भारे, बरदन पीठि पलान पसारे।
कुंअर न तजा पेम कर चावा, बरिस देवस एक मास मेरावा।

पपिहा जुग एक साथ रह, पिउ पिउ ढूंढै काहि।
पिउ संगहि नहिं चीन्है, पेमा दुख उर जाहि ॥२२०॥

पुनि पेमै रस बचन उचारा, निससत कह सुन राजकुमारा।
राकस भरम जीव जै[1] करहू, निर्भय होहू न मन मों डरहू।
वोह राकस अबहीं कहुँ गैऊ, एकउ निमिखि गये नहिं भैऊ।
सगर[2] देवस वोह रहै चराई, रैनि आइ पहरा कैं जाई।
कहु आपन दुख मोहि नरेसा, जेहि दुख तैं निसरे एहि भेसा।

जौ लगि आपन बात सब, कुंअर कहसि नहिं मोहिं।
तौ लगि निस्चै जानहुं, निसरै देउँ न तोहिं ॥२२१॥

कहा कुंअर सुन पेम पिआरी, मैं मधुमालति बिरह भिखारी।
सो का कहूँ जो न कहि जाई, लिखत कहत जुग जुग सिराहीं।
काह कहौं जो कहै न आवहि, बिरह कथा नहिं कहे सिरावहि।
उतपति बिरह तें सबै कहाहीं, अंत बिरह चारौं जुग नाहीं।
आदि बिरह मो सौं सुन भावा, बिरह अंत जग काहुं न पावा।

---

[२१९] १ चिन्ह एक० ।
[२२०] यह छन्द भा० तथा रा० प्रति में नहीं है ।
[२२१] १ जनि । २ सरग एक० । (वर्ण विपर्यय)

सात समुंद जो होइ मसि, कागद सात अकास।
चहुं[1] जुग कहत न निघटै, पेमां बिरह उदास ॥२२२॥

सुनु पेमा जौ पूछे मोही, आपन दुख कहौं मैं तोहीं।
नगर कनैगिरि ठाँव सोहावा, जनु सुरपुर धै आनि बसावा।
पिता नाम जानै संसारा, सूरजभान देव उजिआरा।
कोस सहस दस राज पसारा, हाथी घोर बहु कटक अपारा।
संतति एक महीं औतरेऊं, सौ पै दुखे[1] बिरह बस परेऊं।

दुख मधुमालती चित बसै, का तेहि बिरह कहाउं।
मकु छुटि[2] मोहिं जिउ जगत, दुख ते नाहीं ठाउं ॥२२३॥

उतपति आंदि[1] सुनहु दुख बाता, जैसे दुखहिं मिला संधाता।
अकथ कथा जो कही न जाई, थोरि कहौं जो भाउ[2] बुझाई।
एक दिन नींद नैन सौं लागी, लेत उठा बिरहा दुख जागी।
सौतुख सपन एक मैं देखा, सपन रूप सौतुख का लेखा[3]।
सपन कहौं तौ सप[illegible] न होई, सौतुख कहा जाइ ना सोई।

सौतुख सपन [illegible] जानौं, दहु का देखा सोइ।
सपन कहौं तो सौंतुह, सौतुख कहौं न होइ ॥२२४॥

झारि[1] कुंअर पाछिल दुख बाता, जैसे मधुमालति रंगराता।
प्रथम भई ज्यों सैन चिन्हाई, अरु जैसे पालक बदलाई।
औ दूनहु बाचा जे कीन्हा, औ पुरवति मुंदरी कर दीन्हा।
औ जो तजा पिता घर राजू, औ निसरा कै जोगी क साजू।
औ बूड़ा जो सहज भंडारू, औ सो जहाँ लै लहरि अंडारू।

सब पाछिल दुख पेमहिं, कुंअरि सुनावा रोइ।
किछु न जानौं जौ आगू[2], का बिधि लिखा होइ ॥२२५॥

पेमा जिव सुनि रहा न गाता, बिन जिउ भा बकतत हौं बाता।

---

[२२२] १ जुग।

[२२३] १ देखु एक०। २ छोटी एक०।

[२२४] १ अब रे एक०। २ राउ एक०। ३ सो देखेउँ जो जाइ न बिसेखा।

[२२५] १ बिउरि रा०। २ आजू एक०।

बिरह पीरम किछु[1] जानि न पावा, अचके जनु ठगलाडू खावा।
लाभ मूल खति प्रापति जारा, एक रहा घट जीउ हमारा।
अचक बिरह चिनगी जो परी, लाभ मूल खति प्रापति जरी।
नैन अमी जो पिया[2] रसारा[3], नाम संतोख जिये किमि बारा।

अमी रूप प्रीतम निसि बासर, नैन पिये जो होय।
सुमिरि सुंमिरि दहु कैसे, किमि मन धरौं सो होय॥२२६॥

जबहिं नैन मधु[1] रूप समाना, मैं अपने जिउ निस्चै जाना।
मोहिं पेम रस रूप पिआइहि, अरु जो देस बिदेस फिराइहि।
बाला बिरह रकत जत पीऊ, सब लोयेन संग बाहर किएऊ।
दुहु लोयेन बरिसा देखु बारी, तजि भीतर जे आसरौं[2] भारी।
प्रथम सोहाग बीजु चमकानी, पुनि चमकै मकु देखि जो पानी[3]।

लोयेन बरिसा देखि कै, जिउ ते आस न जाइ।
नैन बीजु के चमके, पुनि चमके मकु न आइ॥२२७॥

बिसहर चिहुर जौं देखौं बारा, अजहुं लहरि है चढ़ी अपारा।
तिल पर दिस्टि जो मोरी परी, ते तिलतिल लीन्हा जिउ हरी।
अधर अमी एक बुंद की ताई, मौहिं सहस नयन रकत तिसाई।
का बरनौ जो खंजन जोरा, हरा चित्त देखत तन मोरा।
लोयेन दिस्टि जाइ जहँ परी, तेहि ठाँ सो नहिं आगे टरी।

दुइ लोयेन महं[1] बाला, गाडे कुच अनिआर।
बांझि रहे ना निसरैं, खुरकहि बारंबार॥२२८॥

हिये माह बस प्रान पियारी, कैसे सो कै जात बिसारी।
निसि सोवत जो बिधि बेगराये, तेहि कारन हम भेस फिराये।
रहस कोड में बिधि दुख दीन्हा, कौन करम पूरब हम कीन्हा।
जौं लगि ना जहु मिलै मुरारी, तौं लगि मरन होइ देवहारी।
छाँड़ा मात पिता घर राजा, वोहि बिन जीवन कौने काजा।

---

[२२६] १ X एक०। २ पिअर एक०। ३ असारा एक०।

[२२७] १ मुख एक०। २ औसर एक०। ३ बानी एक०।

[२२८] यह छन्द भा० तथा रा० में २२५ दोहे के पूर्व आया है।
१ सम एक०।

जीउ गयौ जम संचरा, तन जरि भयौ विभूति।
पेमा चित्त न उचटै, मधुमालति करतूति ॥२२९॥

बहु दिन चलत[1] भए यहि आसा, बिधि लै आउ आजु तुअ पासा।
अमिय[2] बचन ते हिया[3] सेरावौं, प्रीति बास मधुमालति पावौं।
जस कोइ परै समुन्द औगाहा, अचक पाव बूड़त महँ थाहा।
तुअ सब देखा बदन उघारी, दुख जल बूड़त भयेउ अधारी।
मोहिं तौ इहै जीवन लाहा, जीउ जात मधुमालति चाहा।

राज पाट जो परिहरी, धन जिउ जोबन खोइ।
चढ़ा पेम पंथ पेमा, दहुँ आगे का होइ ॥२३०॥

पेमा सुनु दुख बात सवाई, एक एक मैं तोहिं सुनाई।
मैं एकसर जे विखम उजारी, तापर परा अधिक दुख भारी।
कोइ न कहै महारस नाऊँ, पेमा अंध कौन दिसि जाऊँ।
एक रहा घट दुख वोहि केरा, कोइ न रहा साथ एहि बेरा।
तोहिं सौं प्रीति बास मोहिं आवै, जानहु बिधि जे सोभा पावै।

पेमां प्रीति बास[1] मधुमालती, तोसौं आवै मोहिं।
तौ मैं दुख बात जो आपनि, रोइ सुनावा तोहिं ॥२३१॥

कहा कुंअर दुख बात सवाई, पेमा जिव सुनि मोह जनाई।
कहे कुंअर दुख ते अकुलानेहु, बिरह दीरघ दुख लघु कै जानेहु।
धन जोबन तेहि 'केरा'भारी, जो जग भएउ बिरह भिखारी[1]।
सरग बुंद सब होंहि न मोती, सब घट बिरह देइ नहिं जोती।
कोटिन्ह महँ बिरुला जन कोई, जेहि सरीर बिरहा दुख होई।

रतन कि सायेर सायेर, गजमानिक गज कोइ।
चंदन कै बन बन उपजै, बिरह कि तन तन होइ ॥२३२॥

जेहि जिअ दैंय बिरह उपराजा, निस्चै तीनि भुअन सो राजा।

---

[२२९] यह छन्द भा० तथा रा० में नहीं है।
[२३०] १ जियत रा०। २ अमर एक०। ३ अमी एक०।
[२३१] १ × एक०।
[२३२] १ बलिहारी।

पेम[१] पंथ चढ़ा जिव खोई, कै जिउ जाइ कै प्रीतम होई।
बिरह दवां[२] चारौं दिस लागी, जो न जरै सो गरुअ अभागी।
बिरह दुक्ख दुख कहै न कोई, पाछे दुक्ख ताहि सुख होई।
जेहि जिउ दैव बिरह दरसावै, दुख सुख तेहि तैसे मन भावै।

मंझन अमर मूरि सो, बिरहा जनम जो पावै आस।
निस्चै अंमर होइ सो, जुग जुग काल न आवै पास ॥२३३॥

पेम अमी फर[१] साध जे करई, आपु अपान जो रे परिहरई।
जिउ पर तेज धरा जे पाऊँ, पेम अमी फर चाख न काऊ।
प्रथमहिं सीस हाथ कै लेई, पाछे वोहि मारग पगु देई।
सहज जीउ प्रीतम मदमाता, तेहि जिउ जन्म न लेइ बिधाता।
बिरह रूप जे नैन उघारे, तेहि आगे त्रिभुअन उंज्यारे।

बिरह समुंद अथाह अति, जग जानै सब कोइ।
मानिक सौ लै उबरै, जो मरजीआ होइ ॥२३४॥

बिरह अगिन जिव लागु न जाही, येहि जग जिवन अबिरथा ताही[१]।
जेहि जिउ प्रेम[२] तंत नहिं[३] लावा, जीवन फल ते जन्मि न पावा।
एहि कलि जन्मि लीन्ह ते लाहा, बिरह अग्नि मो जे जिउ दाहा।
यह दुख कहँ सुख[४] केहि सौं कहियै, जेहि दुख ते प्रीतम निधि लहियै।
बिरह अग्नि महँ जे जिउ जारा, नैन पानि ते पिंड पखारा।

पेम समुंद[५] अमोघ जल, जबही[६] उठै हुलास।
परहिं सनेही बापुरे, छोडि जिअन कै आस ॥२३५॥

बिरह भाव तौ जानै सोई, जो बैसा जिउ जोबन खोई।
बिरह जुँआ फर जे कछु पावा, जीव[१] पैत कौड़ी जिन्ह लावा।
बिरह उदधि[२] औगाह अपारा, कोटि माँह येक पैरनिहारा।
बिरह अग्नि अब्रिथा जाई, बिरह रूप जो सिस्टि उपाई।
बिरह राजनल बिरहै राता, बिरह राजा नल बिरह संघाता[३]।

---

[२३३] १ प्रथम एक० । २ दिआ एक० ।
[२३४] १ कर एक० ।
[२३५] १ आही एक० । २ प्रान एक० । ३ मन एक० । ४ सखी एक० ।
५ समोघ एक० । ६ गीरी एक० । ७ फिरहिं एक० ।

मंझन जो जग जन्मि के, बिरह न कीन्हा चाउ।
सूने धर का पाहुना, ज्यौं आवै त्यों जाउ ॥२३६॥

जौ लगि करे न सिर सौं पाऊँ, निजु यह खोरि न[1] खूंदै काऊँ।
नैन मूंदि जो देखु सरूपा, इन्ह नैनहु देखि जान सरूपा।
एक जीव एहि पंथ लगावै, एह जिउ सौ कैसे कै पावै।
होइ मौन भै बकतै बानी, सुनैं आव जो कथा कहानी।
सुनि चलि दिस्टि देखु सतभाऊ, रूप सो जाहि पतन नहिं काऊ।
भाव अनेग बिरह सैं, उपजहिं कुंअर सरीर।
त्रिभुअन कर जो दूलह, तेहि बिधि[2] दई यह पीर ॥२३७॥

सो जग जन्मि जीवन फल पावै, जो आपन जिउ वोहि संग लावै।
जाके पंथ खोइ खोइ जाहीं, सो आगे भै पंथ देखाहीं।
सहज होय उपराजै ग्याना, मारग एक कत जाहु भुलाना।
पाँचो तंत एक भै जैहहिं, सहज भाव एक एक देखैहहिं।
अरु जो दया जीव भै जाही, कया रूप भै प्रगट देखाहीं।
बिरह दुक्ख निधि सुख के, जनि कोऊ अकुताउ।
निरबाही जो बिधि सिरा, सो चारौं जुग राउ ॥२३८॥

दुख सों जग अकुताइ न कोई, दुख के आगे सुख पै होई।
दुइ दुख बीच सुक्ख संचारा, काली घटां सेत जल धारा।
फागुन ते जौ तरु पतझारे, तौ नौ पल्लौ सिर अनुसारे।
दुइ पाथर बिच आपु पिसावा, तौ मेंहदी रंग राता पावा।
मोती बहु दुख आपु छेदावैं, पदुमिनि उरहिं ठाँव तौ पावै।
दुइ दुख बीच सुक्ख है, निजु जानहु संसार।
जौ अति रैनि अंधारी, तौ इंजोर भिनुसार ॥२३९॥

करम होइ जो लिखा लिलारा, तौ दुख रैनि निअर भिनुसारा।
तैं जो कुंअर बहुत दुख पावा, अब बिधि[1] आनि संजोग मेरावा।

---

[२३७] १ जुँआ एक०। २ दग्घ एक०। ३ नैन बिरह अंजन जेइ सारा, बिरह रूप दरसन संसारा भा०।

[२३७] १ बिबि एक०।

दया करै जौ देव दयाला, अलप दिनां मों मिलै सो बाला।
परा अहौं दुख समुद अपारा, बचन देउँ जौ होइ कंडहारा।
सुनहु चाह मोसौं वोहि केरी, जाके दुख लीन्हा तोहि घेरी।
चढ़ि समुंद धंसि लीन्हा, कीन्हा बिरह बिभेस।
सुदिन आइ निअराना, सुनहु कहौं अदेस ॥२४०॥

सुनहु कहौं मैं ताकरि बाता, जाके रंग तोर जिउ राता।
नगर महारस राजकुमारी, पेम गहौं जेंहि भैउ भिखारी।
मैं औ उन्ह बाले संग खेली, मधुमालति मोरि बारि सहेली।
मैं मधुमालति रही एक संगा, मानां सबहि बालपन रंगा।
अब की कुंअर न जानौं बाता, जब से बन मोहिं[1] दीन्ह बिधता।
संतति एक संग हम दुनौ, कीन्हा बाल धमारि।
अब बिछुरे भा बरिस दिन, बन दीन्हा बिधि डारि ॥२४१॥

---

[२४०] १ जो एक०।

[२४१] १ × एक०।

कुंअर का दुख खंड

सुना कुंअर रस बात सोहाई, हिम्रा गहबरि मुर्छा गति म्राई ।
पलटि पेम सिर तें जो लागे, कनक म्रागि जनु परा सोहागैं ।
पेम करार पलटि नौ भैऊ, जरत म्रागि जनु घ्रित परि गैऊ ।
जीउ गयेउ[1] मधुमालति पासा, परा भूमि खसि धर बिनु साँसा[2] ।
गये घरी दुइ चेत म्रपाना, सुनत नैन उघरे रबि ग्याना ।
विरह भाव[3] तन कांपत, परै पाँव सहराइ ।
नैन नीर दुइ बहि चला, बचन जो लागु कहाइ ॥२४२॥
कहै कुंम्रर सुन पेमां बाता, जब सौं जिउ मधुमालती राता ।
सुना न देखा यहि कलि कोई, जेहि परिचै वोहि देस क होई ।
सपने जब सौं गई देखाई, तब सौं कतहूँ चाह न पाई ।
म्रब तौं नीद नयन सौं हरी, जिउ घट रहत न देखौं घरी ।
पेमां सपन सोइ पै पावै, जाके नैन नीद सुख म्रावै ।
दुइ चखु नींद न म्रावै, सपने जब सौं गई देखाइ ।
म्रब सो करु उपकार तैं दैम्र लगि,[1] मो घटजीव रहाइ ॥२४३॥
कहु रस बचन जो पूछौं तोहीं, जेहि रस मरत जिम्राये मोही ।
म्रब कहु कहाँ सो पेम पिम्रारी, म्ररु म्रोहि[1] तोसों कैस चिन्हारी ।
पेमा म्राजु सुदिन मोर म्रावा, जेहि पावा मधुमालति चावा ।
देखि सीख जेहि मिलै सो बाला, जेहि गुन संतति जप हम माला ।
बिधि सो देवस होइ कब मोरा, जौ देखब ससि बदन इँजोरा ।
लक्खन के सकती परी, मोहि विरह भरि पूरि ।
पेमा तैं हनिवंत भै, मेरउ सजीवन मूरि ॥२४४॥
बात कहै जौ चेत गँवावै, बरबस समुझि जीव घट म्रावै ।
खिन चेतै खिन जा बिसंभारा, पेम गहा नहिं म्राप संभारा ।

---

[२४२] १ लागा एक० । २ मुरछि जो धरनि म्रकासा एक० । ३ घाव एक० ।

[२४३] १ न जाइ एक० ।

[२४४] १ जो एक० ।

पेमा पाँव सीस धरि रोवै, नैन सलिल जो अबुज धोवै।
तीनि भुअन जग जीवन दाता, काहे न मेरवहु जो जेहि राता।
कलि[1] औतारि कुअर की नाई, पेम बिछोह जै देहु गोसाईं।
और दुक्ख ससार कर, जेत भावै तेत होउ।
दूनौ राते आपु मो, बिधि जनि देइ बिछौउ ॥२४५॥
पुनि बर नारि रूप गुन भरी, अम्रित कथा कहै अनुसरी।
कहै कुअर तै चेतु गियाना, अम्रित कथा कहौ सुन काना।
बिक्रमराय महारस थाना, कोस सहस दस ताकी आना।
तेहि घर धी त्रिभुअन मनिआरी, रबि ससि रूप पावै उज्यारी।
मोरे जीउ बुद्धि सो नाही, खूदै कुंअर रूप परछाही।
रूप सोहागिनि उदधि जेव, अत न सूझै जाहि।
जीभ बाजु कर बापुरी, केउ करि सतरै ताहि ॥२४६॥
और सुनौ रस बात सोहाई, मोहिं मधुमालति बहिनि सगाई।
जहिआ माता कोर मैं बारी, मोहिं वोहि तहिऐं केर चिन्हारी।
एक देवस ताकी महतारी, ठाढि[1] लीन्ह कोरा कै बारी।
औरौ सग सखी दस खरी, माता डीठि जो उन्ह पर परी।
जनी बीस एक देखा ठाढी, देखि जननि जिअ सका बाढी।
तामो एक रूप गुन आगरि, परगट भाग लिलार।
तकरे घर एक कन्या, अछरी कै औतार ॥२४७॥
ढाढस कै मातै जोहरावा, उन्ह जो[1] निहुरि सीस कर नावा।
बहुरि जननि बिनती औधारी, आवहु उतरि हेठ बर नारी।
अति सकोच जे कहै न पारौ, उतरहु हेठ जो सेवा सारौ।
औ देखा मम[2] जननि सुभाऊ, उतरन कहँ औधारेनि पाऊँ।
उतरि हेठ दीन्हा अँकवारी, बहिनी बचा आपु मे सारी।
देह चतुरसम खौरि कै, चीर फेरि[3] पहिराइ।
मगलचार नगर भा, घर घर सबद[4] सोहाइ ॥२४८॥
पुनि उन्ह उन्ह ते पूछी बाता, बहिनी सत कहु सपत बिधाता।
राज लखन सब देखौं तोरा, अचरिज[1] देखि भर्म मन मोरा।

---

[२४५] १ पुनि एक०।
[२४७] १ ढाकि एक०।
[२४८] १ बहुरि एक०। २ मन एक०। ३ बहुरि। ४ मदन एक०।

नाव कहहु औ ठाँव बखानी, औ कहु कौन राज घर रानी।
देवी गन गध्रप कै अपछरा, कै रे सिस्टि मानुस की करा।
औ यह गुनि पुनि कहौ बुझाई, जेहि गुन आवहु जाहु उडाई।
अब जो आइ मोहिं सौ, पेम चिन्हारी कीत।
जन्म जन्म निरबाहौ, कामिनि पेम पिरीत ॥२४६॥

पुनि बर कामिनि बात रसारी, सुरस बचन रस रस अनुसारी।
कहेसि महारस नगर हमारा, राजा बिक्रम राइ[1] भुआरा।
गध्रप राजन्ह मह बड राऊ, करम तेज अति बल बौसाऊ।
मैं तेहि घरनि रूपमजरी, मागु[2] सोहाग रूप गुन भरी।
सतति इहै जो देखसि कोरे, आइउ फर एक कन्या मोरे।
अब जौ उतपति[3] तुह सौ, पेम चिन्हारी मोहिं।
आइ दुइजि कै सतत, मैं मिलि जावै तोहिं ॥२५०॥

अब लगि बाचा वोर पुरावै, सदा दुइज के हम घर आवै।
एक बरिस महँ बारह बारी[1], हमरै घर आवै बर नारी।
मैं मधुमालति राजकुमारी, सतत आउ सघ महतारी।
कुअर जाहु जौ चितबिसराऊ, हम घर जाहि लेहु तुह नाऊ।
भाई बहिनि पिता महतारी, करिहै भगति अनेग तुम्हारी[2]।
कुसल मोर जो पैहैं, औ सुनिहै दुख तोर।
दिहै मेरै मधुमालती, बचन सुनु निज मोर ॥२५१॥

औ जेति सखी सहेली भोरी, सबै चित सुनि लागिहिं तोरी[1]।
औ जत लोग कुटुंब परिवारा, करिहै सबै तोर उपकारा।
औ तोसौ जो पहिली प्रीती, प्रथमहिं वाचा होइ जो बीती।
कान कान कोइ जान न पाइहि, पेम गहा सहजे मिलि जाइहि।
जस तोहिं दुख जीउ है पीरा, वोहि पुनि होइहि दुक्ख सरीरा।
तोहिं वोहि पेम चिन्हारी[2], इहै मोर उपदेस।
मिलिहै पेम परानी, जाहु हमारे देस ॥२५२॥

पेम कथा अम्रित रस भरी, जब रे कुंअर के कानन्ह परी।
जीव रहेउ[1] सुनि प्रीतम बाता, पीत बरन सुनतै भा गाता।

---

[२४६] १ अतरिछ एक०।
[२५०] १ आइ एक०। २ भाग। ३ उपजी।
[२५१] १ हम बाहर पारी (वर्ण विपर्यय)। २ हमारी एक०।
[२५२] १ मोरी एक०। २ चिरानी भा०।

दुख मधुमालतो रहै निरासा, सुनते कँवल भाति परगासा।
समुझि समुझि जिव महँ रहसाई, रहस गहा जिव घट न समाई।
बिरहे दुख दुखिआ जो अहा, प्रीतम नाव सुनत गहगहा।
कौल कुमुद जिमि बिगसै, रबि ससि के परगास।
तिमि सुनि अम्रित कथा कुअर जिउ[2] पूरा पेम हुलास ॥२५३॥

जिउ हरखा मन रहस अनदू, कौल कुमुद जिमि दिनअर चदू।
कहै कुंअर सुनु राजकुमारी, तोसौ बहिनि बचा मैं सारी।
सुबचन कहि तै मोहिं प्रतिपारा, अब मोहि किये तोर उपकारा।
मैं निरास भा बिनु जिउ आवा, अमी सीचि तै मोहिं जिआवा।
तोहि कैसे मै परिहरि जाऊँ, जिव लइ का तोहि छोडि पराऊँ।
लोग कुटुब तोहार सुनि, करिहै आदर मोर।
होइहि मम कुल लज्या, कहत सदेसा तोर ॥२५४॥

कुअर बचन सुनत गहबरी, नैन कौल आए जल भरी[1]।
रोवै सीस पुहमि लै लावै, जिव दुख लाभ न लाहा पावै।
निससत कहै ऊभि लै सासा, छाडहु कुअर मोरि तुम्ह आसा।
जौ सुख दियो सो[2] आगे लेहू, मोहि लागि जीव जै देहू।
मोहिं लागि जै नासु अपाना, जो सिख होइ सो गै करु काना।
मोहिं जियत जी अपने, मुकुति न सूझै काउ।
तै जनि मिथ्या[3] मोहिं लगि, कुअर अपान नसाउ ॥२५५॥

मोरे चित कुअर जै लागहु, आँपन पहर जाइ सुख जागहु।
मैं तो अहिउ मुई एहि ठाई, तै जनि कुअर मरहि मोरि ताई।
तेहिं राकस बस परी[1] सो बारा, बिनु हरि मुकुति देइ को पारा।
जौ मैं सहस कोस चलि जाऊँ, औ धरती महँ पैसि समाऊ।
पलक[2] करत मोहिं ऊपर आवै, मोरि तोरि जग सै नाउ[3] उठावै।
एक अपने दुख दुखिया, अहै सदा जिअ मोर।
दूजे दुख पर दुख परा, सुनत सदेसा तोर ॥२५६॥

---

[२५३] १ कहा एक० । २ × एक० ।
[२५५] १ गहबरी एक० । २ जौ मोरे दुख जो एक० ।
३ अबिरथा रा० ।
[२५६] १ बारी एक० । २ मलक एक० ।
३ सैन एक० ।

रहसि कुअर रस बचन अमोले, सुनहु जे वर कामिनि सेउँ[1]बोले।
जौ जै पत्र देल बिधि मोही, राकस मारि जाउं लै तोही।
जोउ भरम जै मानहु बारी, गायत्रिआ जौ करब गोहारी।
मै रघुबसी राकस खैसारी, पेमा कुल लाजौ महतारी।
तोहि परिहरि जौ जाउँ पराई, कुल लज्या मम धोइ न जाई।
तोहि छाडि जौ भाजौ, पेमा यहि राकस की सक।
जग जीवन अपकीरति, कुल पै[2] चढै कलक ॥२५७॥
राकस डर का मोहि डेरावहु, अग्नि भर्म का छार उडावहु।
राकस करै पार का मोरा, सहज कीट मरै देखि अँजोरा।
खरग पनि सौ आग उठावौ, राकस धूरि बतास उडावौ।
राकस प्रान देखि कस हरऊँ, एक निमिख माहि सघरऊँ।
आइ बने छत्री जौ भाजौ, कुल कलक हो[1] जननी लाजौ।
सत छाडै सुनु पेमा, यहि कलि अमर न कोइ।
तोहि छाडि जौ भाजौ, कुल लज्या मम होइ ॥२५८॥
तै जौ लिये मधुमालती नाऊँ, तोहि परिहरि कैसे पुनि[2] जाउँ।
मधुमालती कर पेम सभारी, का कछु करौ देखु बर नारी।
बर कामिनि प्रीतम बौसाऊ, करौ सो किछु जो किया न काऊ।
एक दॉव धै मेरवौ माटी, टूक टूक कै डारौं काटी।
माटी रुहिर देखु धै मेरावौ, मास गीध जवुकहि खिआवौ।
जौ बिधि राकस सेती, मोहि जिउ देइ बधाउ।
न तौ मधुमालति नॉव लगि, यह जिउ रहै कि जाउ ॥२५९॥
जो रे कुंअर बड बोलि सुनावा, पेमा सुनि जिउ धीरज पावा।
रस बातन्ह गौ दुऔ भुलाई, राकस बेर निअर भइ आई।
पेमै कहा सुनु राजकुमारा, सजग होहु भइ राकस बारा।
सुनतै चक्रित भा जिअ माही, अत्र नाहिं रिपु जीतब[1] काही।
पेमै कहा जनि भरमसि राऊ, अंत्र देउँ मैं करु बौसाऊ।

---

[२५७] १ मीठ एक० । २ कुलहिं जो एक० ।
[२५८] १ चढ ।
[२५९] १ बन एक० ।

सुनत अत्र नाम कुअरि सौ, कुअर भा हर्खवत।
पूछेसि अत्र कहाँ तै पाये, सो मोहिं कहु निज मत ॥२६०॥
अत्र की बात कहौ मै तोही, जौ तै निज पूछेसि मोही।
जेत मानुस येइ राकस खाये, ताके अत्र परे मइँ पाये।
अत्र कुअरि सब आगे आने, लेहु कुअर जो कछु मन माने॥
एहि अतर जौ भै भुइँ भारी, कुअर लीन्ह जो अत्र सभारी।
निभरम जीव भरम का भूता, तापर गोरख भेस अधूता।
काल रूप भै देखा, विरह भभूत कुमार।
राकस बापुरा केहि महँ, सकै तो त्रिभुअन मार ॥२६१॥
बहुरि कुअर चहुँ दिस जो देखा, देखा दखिन दिस राकस रेखा।
सरग धरति बिच आव उडाना, आइ मदिल ऊपर ठहराना[1]।
रूप भयावन बिपतरित भाऊ, सरग माथ धरती दुइ पाऊ।
सावन घटा वोनै जनु आवा, तस राकस मूरति देखरावा।
पाँच माथ दस भुज वरिआरे, दसौ नैन चमकै जनु तारे।
दसन पाँति जनु कोहँडा, जोरि धरा बैसाइ।
करिआ[2] वरन भयावन, देखत जीव डेराइ ॥२६२॥
देखि कुंअर कहँ आगै[1] खरा, कोह अगिन सिर पाँव ते जरा।
कहेसि कौन है का तोर नाऊँ, काल गहा आयेहु हम ठाऊँ।
मीच आइ जानहु सिर चढी, तेहि अभाग आयेहु हम मढी।
कै तै जीउ अपने पर रूसा, कै रे काल आइ घर मूसा।
कै रे अत आउ तोरि आऊ, जम के मुख सौं आयेस पाऊ।
तै मानुस भख मोरा, लै आवा करतार।
तोरि आउ[2] निअरानी, पूजा मोर अहार ॥२६३॥
पेमा मदिल डडवत परी, दुहुँ कर जोरि मनावै हरी।
सीस पुहुमि धै बिनवै बाला, कुंअरहि तै जै देहि दयाला।
त्रिभुअन केर दुक्ख सुख दाता, केहि जाँचौ तोहि छोडि बिधाता।

---

[२६०] १ भारव रा०।
[२६१] १ थहराना एक० (<ठहराना फारसी लिपि)।
२ किरसिनु भा० एक०।
[२६३] १ आँगन एक०। २ मोचु रा०।

आस तैं मोरी लीन्ह अँजोरी, कुंअरहि सरन बिधाता तोरी।
साहस किरति अहै मोरि ताईं, सिधि अब तोरे दिये[१] गोसाईं।
मोख मुकुति कै दाता, तुँही निरासन्ह आस।
सबै सिस्टि तोहिं जाँचै, महि पाताल अकास ॥२६४॥
सुनत कुंअर राकस की बाता, रिसन्ह जरा सिर पाँव ते गाता।
कहेसि छाँडु राकस बकताई, सकट[१] भयेउ काल तोर आई।
तोहिं मारि पेमहिं लै जाऊँ, तौ रघुबसी नाउ कहाऊँ।
उठौ सजग भै अब मनुसाई, काया गरब न जाहु भुलाई।
दसौ भुजा परचारि उपारौं, पाँचौ माथ काटि भुइँ पारौं[२]।
अगिन चिनगी रघुवसी मैं, तैं जैस रुई क पहार।
निमिखि माँह परिजारौं, दाहिन चहौ करतार ॥२६५॥
सुना कुअर छत्री बिस बैना, रिसन्ह भए राते दोउ नैना।
बचन स्रवन सुनतहिं रिसियाना, गरजा जिमि अमर घहराना।
झपटा कहेसि जिअत धै मारौ, टूक टूक कै दह दिस डारौ।
झपटत कुअर मूठि गौ छूटी, एक माथ बिबि[१] भुज गौ टूटी।
निहुरि माथ भुज लीन्ह उचाई, कुँक मारि औ गयौ पराई।
निमिखि मात्र मो आवा, भुज औ माथ लगाइ[२]।
बहुरि कुअर ते जूझि कर, भौ (?) उठी फहराई ॥२६६॥
राकस केर सुना ससाना[१], कुअर सजग भै धनुख सँधाना[२]।
बहुरि कुअर जौ निरखि निहारा, पाँचौ माथ दसौ भुज सारा।
धनुख वान देखि निअर न आवै, दूर[३] भये माया दरसावै।
माया रूप ते राकस बाढा, कहेसि जिअत निगलै जो ठाढा।
मुह पसारि भयावन भै धाऊ, कुअर फोक सर धैनि छुटा।
जौ लगि आइ सो पहुँचै, बान हिये गौ लागि।
लागत मुग्ध[४] रूप धरि, कूक मारि गा भागि ॥२६७॥
एहि बिधि दिन गा रैनि तुलानी, कुअरहिं जै नहिं राकस हानी।
भूख निसाचर जे अकुताना, कहेसि मोहि तोहिं जुध बिहाना।

[२६४] १ बिधि तो कहँ जै देइ एक०।
[२६५] १ संगट एक० (< संकट फारसी लिपि)। २ डारौं।
[२६६] १ बीस एक०। २ कलाइ एक०।
[२६७] १ संसारा भा०। २ सँभार भा०। ३ दुइ एक०। ४ गुपुत।

रैनि निसाचर गैउ चराई, पेमा बहुरि कुअर पहिं आई।
कहेसि कुंअर मै कहत बिसारा, अब सुनु जा जेहि राकस मारा।
मै तुह से सब कहै न पाये, जानौ राकस काल उपाये[1]।
तीनि लोक जौ लागै, मारि सकै ना कोइ।
सहस टूक कै काटि पुनि, रे सजीव ना होइ ॥२६८॥

पेमा कह कुअरहिं समुझाई, सुनहु कुअर अरि काल उपाई।
दखिन दिसा जो देखिय बारी, तामो एक अम्रित फर भारी[1]।
सघन फूल जो सीतल छाँहा, राकस जीव बसे तेहि माँहा।
जौ लगि ब्रिछ पतन ना होई, कैसहु मारि जाइ ना सोई।
राकस काल अम्रित के उपारे, नातरि केहू मरै न मारे।
अम्रित फर ब्रिछ हम तुह, चलहु उपारहिं काटि।
सहजहिं मरहि सो राकस, घाव चढ़ै हिय फाटि ॥२६९॥

सुनत नाव अम्रित फर केरा, उठि जे कुअर दखिन दिस हेरा।
निस्चै भयौ सुनत जिव माही, राकस मरै बरिअ जौ चाही।
कहा कुंअर पेमा सँग आवहु, अम्रित फल लै मोहिं देखावहु।
चला कुअर पेमा सग लागी, राकस आव सीस बर आगी।
पेमा लै कुअरहिं गै तहा, अम्रित फल लागा है जहा।
देखि कुअर हिअ हरखा, रहस समाना जीउ।
निस्चै भयौ जो अब बिधि, जैत पत्र मोहि[1] दीउ ॥२७०॥

कुँअर अम्रित फल निरखि निहारा, देखि सुफल फल जो मनिआरा[1]।
देखि कुअर जिउ दया जनाई, फरा ब्रिछ जरि काटि न जाई।
पुनि कुंअरहि पूछै बर नारी, अरि मारी बिलब का करी।
जौ रिपु अपने बसि कै पाई, कहौ कुंअर कैसे बिलँबाई।
मोरि बोल निस्चै कै जानहु, अग्नि लेसु[2] लघु कै जै मानहु।
बेगि होहु जै बिलवहु, जौ अति रुहिर पिआस।
सो जौ बसि करि पाई, लेन कि दीजिअ साँस ॥२७१॥

---

[२६८] १ जा जेहि मारा एक० (पुनरुक्ति)।
[२६९] १ फुलवारी एक०।
[२७०] १ बिधि एक० (पुनरुक्ति)।
[२७१] १ कनियारा भा०। २ पीसु एक०।

पेमै जौ कुअरहिं समुझावा, सुनत चेत कुअर के चित आवा।
पुनि जो ब्रिछ निअर गा राऊ, भुअ मरोरि सौरा बौसाऊ।
दुइ कर गहि हरि नाम सभारा, अमी ब्रिछ जर मूर उपारा।
पुनि जो डार पात फर रहा, ते सब कुअर अगिन मो डहा।
पेड[1] क काठ रहा जो भारी, सो रे दीन्ह आगि मो टारी[2]।

अम्रित ब्रिछ उपारि कै, जारि कीन्ह भै छार।
रहसत आव चौखडी, कामिनि और कुमार ॥२७२॥

रजनी गत रबि किरनि पसारा, राकस हाँक बार भै मारा।
करिआ रूप भयावन कीन्हे, दुनौ हाथ दुइ चाक जे लीन्हे।
सुनते कुअर धनुख हूँथवासा, और खरग जे रुहिर पिआसा।
फरसा कोत लीन्ह कर लाई, औ बिभूति मुख अग चढाई।
डड चक्र तिरसूल जो लैऊ, सरन बिघाता वोडन[1] (?) कैऊ।

काल रूप भै निसरा, हिये हरि नाम सँभारि।
राकस देखि रिसाना, मारेसि चक्र पबारि ॥२७३॥

राकस चाक रिसाइ पबारा, कुँअर वोड भै आपु उबारा।
दोसर चाक लीन्ह सभारी, कुअर दीन्ह वोडन सिर टारी।
चाक आइ वोडन तस लागा, अग्नि भुभूका सर्ग गै लागा।
बहुरि कुँअर का पलटा दाऊँ, झपटि कीन्ह खाडे कर घाऊ।
पाँच माथ जाकी बड करा, खरग घाव सोई खँसि परा।

मरम घाव जब लागा, लीन्हा माथ उचाइ।
दक्खिन दिस बारी रही, तहवाँ गैउ उडाइ ॥२७४॥

बहुरि कुँअर[1] बारी दिस धावा, परतावै अम्रित फल आवा।
मरम घाव लागे बितताना, देखत राकस भरम भुलाना।
जहँ से अम्रित ब्रिछ उपारा, राकस आनि माथ तहँ मारा।
जौ राकस अम्रित ना पावा, भा निरास मन काल जनावा।
आएउ ग्रिहि आगि गौ लागी, कया प्रान परिहरि गौ भागी।

---

[२७२] १ पीड। २ जारी रा०। तारी भा०।

[२७३] १ ओडर रा०। अगले छन्द की प्रथम पंक्ति का 'वोड' शब्द तथा द्वितीय पंक्ति का 'वोडन' द्रष्टव्य।

जिमि तरुअरि जरि काटिये, धर खस परै निदान।
तिमि राकस भुइ खसि परा, कया परिहरा प्रान ॥२७५॥

जौ राकस निजु तजा पराना, पेमा जीव देखि रहसाना।
दौरि[1] कुअर पर आँचर वारा, अति संतोख[2] कै हीवर सारा।
कहेसि कहा नेवछावरि सारौ, सहस जीउ घट होइ तौ वारौं।
धन सो पिता जो तोही जाये, धन सो माँइ जो दूध पिआये।
अब परिहरु बेगि येहि ठाँई, मोख मुकुति तोहिं देहि गोसाई।
मोर हीवर डर[3] डरपै, शरमि शरमि जा जीउ।
मुये हूँ ते एह राकस, पुनि मति होइ सजीउ ॥२७६॥

———

[२७५] १ राकस एक०।
[२७६] १ और एक०। २ मरोह भा०। ३ हिय एक०।

राकस मारि पेमहिं लै चला खंड

बहुरि कुअर कामिनि तें कहा, गा सो भरम जो चित मो अहा।
चित सेती दुख परिहरु बाता, तुम्ह दुख हरि[1] सुख दीन्ह बिधाता।
कौनहु दुक्ख न होहु दुखारी, राकस हत सुख दीन्ह मुरारी।
पुनि उठि दुनौ पथ सिर भैऊ, कोस[2] चारि बन ही बन गैऊ।
बहुरि देस बसती मो आए, देखत कलि के भाव सोहाए।

बहुरि निकट जो आये, चित्रसेनि के गाउ।
नगर अनूप सोहावन, चहुँ दिसि घन लखराउ ॥२७७॥

पेमा डीठि नगर जौ परी, मन अनद हरख जिय करी।
देख उतग अवास सुहाये, पेमा ह्रिदै हुलास बधाये।
पुनि चलि निकट कुअर के आई, कहेसि कि करु मन हर्ख बधाई।
मै जो कहा तोसौ दिन[1] राऊ, पिता नगर यह चितबिसाऊ।
दरसन जोग उतारहु राजा, लेहु सिद्धि जो साहस काजा।

चित सो सब दुख परिहरु, करहु अनद बधाउ।
तुह मधुमालती सेती, येही नगर मेराउ ॥२७८॥

कुअर नाम कामिनि सुनि काँपा, सुनत बिरह सब गात बिआपा।
मधुमालति कै सुना मेरावा, जानहुँ मुआ पलटि[1] जी आवा।
कै जनु पाव पिआसै पानी, कै जनु चकई रैनि बिहानी।
कै जनु मधुमालति रस आसा[2], कै जनु अबुज सूर बिगासा।
कै जनु पपिहा धार सेवानी, कै जनु कुमुदिनी ससि रग राती।

बिछुरे पेम बिछोही, जा दिन दुनौ मिलाहि।
मनि मनि[1] माँह बधावा, मदिल कहा कराहिं ॥२७९॥

पुनि बर नारि कुअर पहँ आई, निअरे भै जो कहा बुझाई।
सुनसि कुअर तै बात हमारी, हौ एहि नगर जे राजदुलारी।

---

[२७७] १ राकस हत एक०। २ माँस भा० रा०।
[२७८] १ तब भा०।
[२७९] १ पिड। २ बासा रा०।

एहि बिभेस कैसे घर जाई, काहे दुरिजन लोग हँसाई।
माता पिता लोग जन धाईहि, पर आपन जो देखै आईहि।
आपु कुअर एहि ठाव[१] रहाई, मात पिता के लिखि चाह पठाई।

बहुरि कुअर जौ कामिनि, बैठि रहे एक गाउ।
इहाँ सौ कोस डेढ एक, नगर जो चितबिस्राउ ॥२८०॥

राजा बैठ सभा जहँ अहा, एक बचन सुभ सब से कहा[१]।
कहा आजु अस सगुन जनावा, हरखि हरखि जे गहबरि आवा।
फरकै नैन भुआ बर मोरा, प्रान पिआर आव कोइ कोरा।
सगुन सुभाव ऐस जौ होई, मिलिहै प्रान पिआरा कोई।
सगुन बिसेख बाँव नहिं जाई[२], बिछुरा गिव लागै कोइ आई।

मन अनद हिअ हर्ख[१] बधाई, सहज उठै जो चाउ।
कोइ बिछुरा[३] है आवै, अस किछु सगुन सुभाउ ॥२८१॥

पेमै बैसि लिखा दुख पाती, सुनत पाति जो बिहरत छाती।
दुख की बात जेती किछु[१] जागी, सब मसि भै कागद महँ लागी।
बन का पात जहाँ लगु अहा, लिखत न केहु निघटै चहा।
दुख लिखि कै जो लिखा जोहारा, माता पिता कुटुंब परिवारा।
औ जेत सखी सहेली बारी, सब कहँ पेमै लिखु अँकवारी।

बहिनि भाइ जन परिजन, लोग कुटुब परिवार।
समुझि समुझि बर कामिनि, सब की लिखा जोहार ॥२८२॥

दुख पाती जो लिखी सिरानी, बारी एक हँकारेउ आनी।
पेमा बारी पाँव लै परी, बेगि चलहु न बिलबहु घरी।
लै पाती बारी उठि धावा, रहस गहा भुइँ पाँव न लावा।

---

[२७९] ३ एक० में केवल एक 'मनि' है जिससे यह प्रतीत होता है मनि की पुनरुक्ति का सूचक २ छूट गया था। फलत इसका पूर्वज अवश्य ही नागरी लिपि में रहा होगा।

[२८०] १ सरॉय।

[२८१] १ अकस्मात हिय अहेउ उचाहा भा०।
२ जनाई एक०। ३ बिछून रा०।

[२८२] १ जो मींत जन।

बारी बाद पौन सौ करई, दिस्टि चाहि आगू मन सरई।
निमिख एक मो बारी गैऊ, राये दुआर ठाढ गै भैऊ।

परतिहार ते कहि पठवा, जाइ जनाउ नरेस।
द्वार[1] ठाढि एक बारी, कहै पेमा क सदेस ॥२८३॥

परतिहार सुनतै उठि धावा, राजा ग्रिह गै बात जनावा।
राज बार बारी एक आवा, अमी बचन जे कहै सोहावा[1]।
पेमा आहि जे राज दुलारी, ताके सदेस कहै किछु बारी।
पेमा नाव सुनत उठि धावा, मन रहसा किछु सुनै न पावा।
धाये सुनि राजा औ रानी, बिछुर मीन जस पावै पानी।

मात पिता जन परिजन, सखी सहेली झारि।
धाइ बार[2] चलि आये, सुनत नाव बर नारि ॥२८४॥

पेमा नाव सुनत उठि धाए, उठि चलि राज दुआरे आए।
राजा उठि धाये बिसभारा, औ रानी सिर पाँ न सभारा।
आगे भै बारी जोहरावा, औ पेमा का बचन सुनावा।
पुनि दीन्हेसि पेमा की पाती, चित्रसेनि लै लाई छाती।
व्याकुल भै पूछै महतारी, केतिक दूरि है राजकुमारी।

बारी कहा इहाँ सौ, कोस डेढ एक लगि गाउ।
तहँ आपुन हहिं बैसे, मोहिं पठएन्हि तुम्र ठाँउ ॥२८५॥

राजा सुनत भयौ असवारा, औ जो लोग कुटुब परिवारा।
औ रानी कहँ पालक साजी, हरख अनन्द बधावा बाजी।
तेहि पाछे सब चली सहेली, लरकाई सग साथ जो खेली।
नगर छतीसो पौन सवाई, पेमा नाव सुनत उठि धाई।
हय पखरे औ परी अँबारी, चलेउ राउ आगे भै बारी।

बलि सो देवस बलि सो घरी, बलि सो मिलिए तब्ब।
तन बलि मन बलि जीव बलि, धन बलि जग बलि सब्ब ॥२८६॥

पेमहिं आइ मिला परिवारा, हिये लागि नेवछावरि सारा।

---

[२८३] १ बार।

[२८४] १ सेरावा एक०। २ बारी एक०।

मात पिता पाँ लागी बारी, औरन्ह मिली सो दै अँकवारी।
बहुरि आइ सब मिली सहेली, लरिकाई संग साथ जो खेली।
पुनि गावत सब चेरी आई, पाँव लागि कै मिली सब धाई।
आई पौंनि छतीसौ जाती, तन चंदन सिर सेंदुर राती।

नगर बधावा चहुँ दिस, हरखित सब परिवार।
होइ कल्यान[1] कोलाहल, घर घर मंगलचार ॥२८७॥

चित्रसेनि पुनि पूछै बारा, के तोहिं राकस सेंति निस्तारा।
केइँ दानौ बस[1] हुते छोडाई, मोख मुकुति तुह कैसे पाई।
कहहु मोहिं समुझाइ सो बाता, कैसे भौ तोहिं दहिन बिधाता।
दोसर राम औतरा आई, रावन हनि जो सिआ छोडाई।
अब सो कौन सारथी तोरा, जो अँधार जग कीन्ह इंजोरा।

तुह दरसन बिनु नैनन्हि, जगत होत अधार।
कहु केहि के पुरखारथ, भयौ ऐस उजिआर ॥२८८॥

पेमा लागु पिता सौं कहई, कुअर एक मोरे सँग अहई।
महाबीर कुलवंत सो ग्याता, सो मधुमालति के रँग[1] राता।
जेत दुख कुअर क पाछिल अहा, मात पिता सौ पेमै कहा।
औ जिमि राकस[2] हना प्रचारी, सो सब कहा पिता सो बारी।
औ सब साहस बात सवाई, पेमै कहा पितहिं समुझाई।

जेहि बनखंड आही मैं, बिधि कुंअरहिं लै आउ।
कहेउँ दुक्ख सब आपन, औ वोहि कर सतभाउ ॥२८९॥

कहेउँ बात आपन सतभाऊ, जिमि दानौं मोहिं बन ले आऊ।
औ पुनि सुना कुअर की बाता, जैसे मधुमालति रंग राता।
तौ मैं आपन जिउ कै जाना, मधुमालति के रूप भुलाना।
तौ मैं बात सबै वोहि केरी, बात कुंअर सब आगे नेरी।
औ आपनि वोहि केरि दिआरी, कहेउ कीन्ह जिमि जन्म चिन्हारी।

---

[२८७] १ सुक्ख रा० ।
[२८८] १ पसु एक० (<बस—फारसी लिपि)
२ निस्तार एक० ।
[२८९] १ सँग एक० । २ दानौ रा० ।

औ जोगई जो बाचा, मधुमालती की माइ।
सो अब लगि निरबाहै, सतति दुइज मिलाइ ॥२९०॥

सुनत कुअर कामिनि की बाता, हरखित भयौ पीत सौ राता।
सुनतै परा पाँव लै मोरे, कहै जीव मोर आरति[1] तोरे।
कुँअरि खोज मै कतहुँ न पावा, आजु मरत तै मोहिं जिआवा।
अब जौ तोहि बन छाडौं बारी, लाजौं जननि चढै कुल गारी।
औ मधुमालति केरि सहेली, तोहि कैसे बन तजौ अकेली।

राकस मारि मोहिं लै आवा, अपने बल बौसाउ।
आदर मान करहुँ वोहि[2] केरा, ओह मोर बाचा क भाइ ॥२९१॥

चित्रसेनि तौ महथ बोलावा[1], आदर कै कुअरहिं लै आवा।
उठि राजै[2] गहि अकम लावा, अपने निकट पाट बैसावा।
कहेसि तोरि का अस्तुति सारौ, जीउ किंचित है लाज निवारौ।
राजकुंअर पुरखारथ तोरे, कया जीव घट आहै मोरे।
किछु बिकलप[3] न मन मो आनहु, राजपाट आपन कै जानहु।

जैसे पिता राजघर रहतेहु, तैसै इहाँ रहाहु।
दुख उदास बैराग चित, छाडहु केलि कराहु ॥२९२॥

औ जो किछु है मन की बाता, सो पुनि[1] मेरइहि आनि बिधाता।
औ पेमा मम राजदुलारी, सतति करिहै सेव तोहारी।
औ जत सब परिजन है मोरा, अस जानहु सब सेवक तोरा।
राज निकट[2] एक मदिल सवारा, आनि कुअर तेहि ठाँव उतारा।
सब मिलि करै लागु सेवकाई, मकु बिलँबै इहँ सौ नहिं जाई।

कुअर सदा बैरागी, मधुमालति के नेह।
काया इहवाँ जिउ उहवाँ, जासौ लागु सनेह ॥२९३॥

एहि बिधि गए कुअरहिं दिन चारी, बिरह आगि पुनि ही परजारी।
पेमहिं राउ कहा सुन बाला, मम तन उठी बिरह की जाला।
अग्या देहु जे तुह बर नारी, ढूढौ जाइ सो पेमपिआरी।

---

[२९१] १ नेवछावरि। २ केहि एक०।
[२९२] १ पठावा भा० २ कै एक०। ३ विलग एक०।
[२९३] १ पै रा०, भा०। २ नग्र एक०।

सूते भाग जाहि मकु जागी, प्रगट मिलै जो राजसभागी[1]।
बिरह दग्धि हिय तिल न बुताई, अब परगट बिरहे जिउ लाई।
कठिन आगि बिरहा की, तिल तिल दहै सरीर।
कहै न पारौ बिरह दुख, दुसह[2] पेम की पीर ॥२६४॥

सुनि[1] दुख बात कुअर बर नारी, कहै अब कत होह दुखारी।
कहेउँ दुख[2] तोहिं आगे सारा, सो मकु तुह चित हुते बिसारा।
कालि दुइजि आहै उन्ह पारी, आइहि जननी सहित कुआरी[3]।
बारी महँ चित्रसारि है जहाँ, तुह परभात गै बैसहु तहाँ।
मैं औ वोह मिलते मिलि जैहै, खेलत मिसु चित्रसारी ऐहै।
जौ उगर्जाह उन्हसे तुहसै परचै, पाछिलि प्रीति सभारि।
सहजहिं दुऔ मिलि जैहहिं, तुह औ राजकुआरि ॥२६५॥

मिलन औधि सुनि जिउ गहबरा, दौरि कुअर पेमा पॉव परा।
पॉव सौ पेमै सीस उचावा, कहै कालि परभात मेरावा।
भयौ साति मन सुनत मेरावा, हरखित उठि चित्रसारी आवा।
जुग सम रैनि कुअर के भई[1], पेमहिं पुनि जागत निसि गई[2]।
जेहि बिवोग निसि जागि सिराई, तौ इंजोर भिनुसारे पाई।
निसि बिहान जब भोर भौ, सूर कीन्ह परगास।
आई जननी संग मधुमालति, चित्रसेनि के पास ॥२६६॥

---

[२९४] १ गुपुत जिय माहीं। २ उठा एक०।
[२९५] १ पुनि एक०। २ अंत भा० मा०। ३ बरनारी भा०।
४ वोह हम एक०।
[२६६] १ गहई एक०। २ होई एक०।

पेमा मधुमालती मिलीं खंड

पुनि मधुमालति पेमा चीन्ही, धाइ दुनौं गहि अकम दीन्ही।
दुऔ चतुर औ बाला अली, दुऔ पैम रस जोबन बली[१]।
मधुमालती पूछै सुन बारी, केउ राकस सौ तोहिं उबारी।
आपनि बात सखी कहु मोही, कुटुंब आनि मेरवा कै तोही।
कहु सत बात सखी समुझाई, कैसे मोख मुकुति तुह पाई।

कै तोहिं छोडि दीन्ह सइं राकस, कै कोउ बरबस लै आउ।
सपत सीभु[२] दै पूछौ, कहु आपन सतभाउ ।।२६७।।

जौ रे सपत दै पूछे बारी, पेमै बात कहन अनुसारी।
एक दिन कुटुब सौंरि मैं रोई, रही सोइ दुख पास न कोई।
अत दुख रहा दुखी जिव मोरा, देखा सो सपना मुख तोरा।
जनु तै मोंहि धै बाँह उचाई, कहा कि चलु उठि खेलै जाई।
जागि उठी कोइ पास न बारी, रोयेउँ घालि डफारि गोहारी।

एहि अंतर का देखौं, बिधि प्रसन भा आइ।
दुख की रैनि अधारी, खन मो गई बिहाइ[१] ।।२६८।।

निमिखि माँह सो घरी तुलानी, दुख कै आगि परा सुख पानी।
कुंअर एक राता रंग तोरे, लै आवा बिधना सिर मोरे।
ओहि पूछेंव दै सपत बिधाता, रोइ कहेसि जैसी तोहि राता[१]।
अस दुख कुअर खाना तोरा, सुनि न रहा जिउ ठाहर मोरा।
सुनि दुख मोहि जिउ परा फफोला[२], नैन नीर भौ थकथक[३] चोला।

पेमा बात सब पाछिल, तुह दुहुँ[४] को बेवहार।
सो सब रोइ कहेसि मोंहिं आगे, बिरह घाव बिसभारि ।।२६९।।

मैं बलि बलि तुम्र चर्नन्ह केरी, जे काटी मोरि दुख कै बेरी।
नेवछावरि का सारौ तोरी, जेहि प्रसाद मुकुती भौ मोरी।

---

[२६७] १ कलीं। २ सबहिं रा०, भा०।

[२६८] १ बिलाइ।

[२६९] १ होत बाता एक०। २ भर्म भोला एक०।
३ थलथल भा०। ४ दुख एक०।

दुख समुंद मो बूडति बारी, तैं[1] मोरि[2] आइ भई कंडहारी।
कुंअरि चरन पर मैं जीव वारौं, तबहुं न नीख देन मैं पारौं।
जौ न कुंअर चित राँचत[3] तोही, कैसे होत मोख बदि[4] मोही।

सहस जीउ नेवछावरि, आनि करौ मैं तोरि।
जेहि परसाद बिधातैं, मोख मुकुति दिए मोरि ॥३००॥*

बहुरि मोहिं पूछेसि सुन[1] बारी, तोहि वोहि बन कबकी बेवहारी।
पेमैं जत दुख आपन कहा, परिहरि लाज कुंअर ते कहा।
पुनि मैं आपन तोर हिआरी, जैसि अही तसि कही बिचारी।
सुनि तोर नाव परा मुरछाई, बिसहर[2] डसा लहरि जनु आई।
पुनि जौ चेत चितहिं भा ताही, पूछेउँ बात कहेसि जसि आही।

तोरे बिरह बिभूता, काछे भेस अधूत।
राकस मारि मोहिं लै आवा, धन जननी जेहि पूत ॥३०१॥

सुनत चकित भै राजकुमारी, कहेसि मोहिं वोहि कैस चिन्हारी।
कौन कुअर का जानौ बाता, मोरे रूप कहवाँ वोह राता।
देखैं वोइ कहवाँ मोहिं पावा, औ मोर के वोह नाव सुनावा।
पिता गिरिह मै राजकुमारी, पर पुरखहिं मोहि कैस चिन्हारी।
जो अस मात पिता सुनि पावहिं, मोहिं जिअत धै गढ़ा भरावहिं।

अस अपजस तैं पेमा, कहा लगावसि मोहिं।
मोहिं लाहे तोहिं लाहा, खत मोरे खत तोहिं ॥३०२॥

तैं सुजान औ चतुर सयानी, कहत बात तैं मोहिं न लजानी।
सुनसि कहौ मैं तोहिं उपदेसा, बात कही जो किछु लौ लेसा।
मैं कुलवंती राज घर धिआ, कहत लाज तोरे आइ नछिआ[1]।
तोहिं सेती मोहिं बार हिआरी, तौ मैं ऐसी सही तोरि गारी।
सरग चाँद बस मनि[2] पातारा, इन्ह दुहुं कैस पेम बेवहारा।

---

[३००] १ मैं एक। २ तोरि एक०।
३ राता एक०। ४ पद एक०।

* नोट—एक० प्रति में इस दोहे के स्थान पर अगला ही दोहा था अतः इसकी पूर्ति रा० प्रति से की गई है।

[३०१] १ ना एक०। २ बहुरि एक०।

रूप नैन नहिं देखा, स्रवन सुना ना नाउँ।
तासौ अपजस लावसि, जाकर नाउँ न ठाउ ॥३०३॥

बात बूझि[1] तौ कही[2] सयानी, इन्ह बातन्ह उतरै त्रिय पानी।
बचन तोर मोहिं बिखु जनु लागा, अस को बरै धूरि कर तागा।
अजहुं जननि कोरा मैं बारी, का जानौं पर[3] पुरुख हिंआरी।
पुरुख न जानौं कार कि[4] सेतू, पर पुरखहिं मोहिं कैसन हेतू।
अस अपजस कोइ लाव न केही, भीति देखि कै करी[5] उरेही।

जस तै बात कहत हँसि, अस जग कहै न कोउ।
त्रिआ जाति अपजस कर, कुल पै नासै सोउ ॥३०४॥

सुनत उतर मधुमालति केरा, कामिनि मुख पेमा हँसि[1] हेरा।
कहै सौह भै बकतै बाला, देखौं बोलति है केहि गाला[2]।
सीखति हौ अब नैन धुताई, मो सौ कपट क बात चलाई।
चतुराइन मोतै बनि आइहि, धाइ के आगे पेट छपाइहि।
दाहिनि बाट छिदँरि जो जावै, सगी सन की चोरी फावै।

आदि अंत लगि जानौ, मैं सब बात तोहारि।
पेम कि छपै छपाये, बौरी कहहु न बात उघारि॥३०५॥

कहहु बात मो सौं सतभावा, परिहरि बहुत भीति कर धावा।
बदन पिअर औ खीन सरीरा, परगट तोहिं पेम की पीरा।
कहहु कहाँ लगि बात बनाये, बौरी पेम कि छपै छपाये।
तै जो सखी मोरि पेम पियारी, कस न कहौ मोहिं बात उघारी।
जौं नहि मोहिं पतीजसि बारी, मागि देउ सहिदान तोहारी।

मुंदरी मागि कुंअर सौ, कर कामिनि के[1] दीन्ह।
कहेसि कहाँ एह छाडेहु, लेहु जो आपनि चीन्ह ॥३०६॥

---

[३०३] १ हिया एक०। २ मीन मा० मा०।
[३०४] १ पूछि एक०। २ सही एक०।
३ कैसी मा०। ४ काकरि एक०। ५ चित्र।
[३०५] १ सौंह भै एक० (देखिये अगला चरण)।
२ हाला एक०।
[३०६] १ एक एक०।

जबही दिस्टि परी सहिदानी, दुनउ डोल भरि आयेउ पानी।
चाहेसि बहुतै जतन छपाये, बरबस चखु जल भरि भरि आये।
म्रिगमद पेम रहा नहिं गोवा, वह सुबास यह सौंरि बिछोवा।
राखे पेम न रहा छपाना, उमडे नैन जगत सब जाना।
पेम प्रीतम कर रहा बिछोवा, परगट भौ जिव रहा न गोवा।

पाछिल बात समुझि जिउ, मझन उपजा बिरह बिकार।
थाभि न सकी लागि गीव पेमा, रोई घालि डफारि ॥३०७॥

बर कै पेमै कठ छोडावा, हरकी औ परबोधि बुझावा।
बिरह ब्याकुली पिक कठबानी[1], बात कहै चित भरम भुलानी।
पूछै कुअर कहा सो नारी, सपने बिरह मोहिं गौ मारी।
जागि सपन जौ देखौं हेरी, सेज मोरि नहिं है ओहि केरी।
औ मुंदरी जो है कर ताही, लैगा मोरि आपनि दै मोही।

अब लगि बिरह अग्नि जिउ राखा, लोग कुटुब कै कानि।
लाजन कहेउ न काहु सो, गुपुत सहा जिउ हानि ॥३०८॥*

कठिन बियोग अधिक जिय पीरा, निलज जीउ तजै न सरीरा।
कौन घरी सो अही सभागी, मोहिं ओहि पेम प्रीति जो लागी।
मैं न जरी जे एकसर आगी, कौन सो जग जेहि के नहिं लागी।
अब लगि गुपुत जरी जे आगी, अब परगट दह दिस जो लागी।
गुपुत जरौं कहवाँ लगि चोरी, परगट जरी दसौ दिस होरी[1]।

कौनौ सरूप न जानौं बिधनै, मोहिं देखावा आनि।
एक निमिखि जेहि देखे, कोटि सहा जिव हानि ॥३१०॥

गा बिरहा मोहिं हिये दौ लाई दिन दिन सखी दगध[1] अधिकाई।
कत जननी मोहिं दूध पिआये, दूध ठाँव कस बिख न पिआये[2]।
नाभि नार जे काटी बारी, कस न दीन मोरे गिय[3] डारी।
अब यह खन मो जीव न मोही, अब न सकौ मै परिहरि वोही।
औ न काल बस मोरे बारा, कैसे होत मोर[4] निस्तारा।

---

[३०८] १ कोकिल रा०। एक० प्रति में चतुर्थ एवं पंचम अर्द्धाली के द्वितीय चरण परस्पर स्थानान्तरित हैं। *यहाँ से आगे अर्द्धाली संख्या मे त्रुटि के कारण एक की वृद्धि हो गई है। —सम्पादक

[३१०] १ वोरी एक०। मोरी भा०, मा०

पेम बियोग न सहि सकौं, मरौं तौ मरै न जाइ।
दुइ दूभर मो हौं परी, दगधि न हिये बुताइ ॥३११॥

तौ पाछिल दुख बात जो अही, मधुमालती पेमा सौं कही।
सुनत कामिनी बचन[1] सोहाए, पेमा नैन सलिल भरि आए।
प्रीतम लागि जौ रे दुख सहिए, दस गुन आगे लाहा लहिऐ।
एक सुख लागि सहस दुख सहिऐ, सहस सुक्ख एक दुख निरबहिऐ।
एक फूल कारन सुतु बारी, सहिऐ[2] काँट सहस देवहारी।
पेम समुंद पाँ बोरि[3] कै, पाछू न टरिऐ काउ।
कै प्रीतम नग हाथ चढ, कै सिर जाइ तौ जाउ ॥३१२॥

कहै तोहार सुदिन सखि आजू, मन कामना सिद्ध सब काजू।
औ सनि है[1] सखी छठउँ[2] तोहारा, चढै हाथ पाछिल निध बारा।
नवये गुर सखि है जो तोही, निज जानहु चित मिलै बिछोही।
औ मगल जो तिसरे तेजा, चढै आइ प्रीतम निज सेजा।
और सूरज[3] दसए उजिआरा, सुखनिधि देइ दुखहरि[4] जारा।
एगारहे बिबि जन्म तुअ, सुक्र बुध भ्रिग अंक।
सातौं गरह सुद्ध[5] तुअ, गुनि गुनि देखु मअक ॥३१३॥

राहु समान आहि जो बारा, जे मिलि बिछुरै पेम पिआरा।
मैं जाना कुंअरहि दुख भारी, पै अति तै दुख कुअर दुखारी।
एत दुख सहे लागि जे बारा, मिलै आजु तोहि पेम पिआरा।
तोरे ध्यान धरति है बारी, बैसा सब ससार बिसारी।
जब देखा तोर मुख उज्यारा, सब कीन्हा नैनन्हि अधियारा।
देखु आइ गति ताहि कै, तोहि बिनु और न कोइ।
तन मन जिउ जोबन सबै, वोह जो बैसा खोइ ॥३१४॥

---

[३११] १ बिरह एक० । २ खियायेउ भा० ।
३ ग्रिह एक० । सिर रा० । ४ मोरव रा० ।
[३१२] १ बात एक० । २ सँचिये । ३ पैरि एक० ।
[३१३] १ रबि एक० । २ छेम एक० । ३ सुन्दर एक० ।
४ सुख निधि एक० (पुनरुक्ति) । ५ दाहिन ।

अति भौ बिरह भसम जरि काया, देखि कुअर जिव उपजी दाया।
रहा न कया मासु सखि रती, तापर बिरह हाड देइ काँती।
जाकर जीउ बरबस हरि लीजै, ताकहँ पलटि दया तौ कीजै।
नेक सरूप देखाउ तै बारी, तै पुनि देखहि कया उन्हारी।
बिधि चरित्र सेती पै डरिऐ, भू जी सोइ करम जो करिऐ।

पेम कि निहफल जाय जो, सुनहु कहौ समुझाइ।
कबहुँ के इह कुँअर दुख, तुह सिर सखी बिसाइ[1] ॥३१५॥

पुनि पेमै गहि बाँह उचाई, साथ लिये बारी दिस आई।
कहेसि चलौ गै देखिय सोई, जेहि दूनौ जग छाँड न कोई।
तजहु लाज चित की निठुराई, दया करिय नेकु देखहु आई।
जो जाके मारग जिउ नेरै, सो कैसे तासौ मुख फेरै।
सोइ सुक्ख[1] जाही दुख होई, पाछे दुख ताही सुख होई।

पुनि पेमै सखि आपनि पठई, जाउ जनाउ कुमार।
मधुमालती औ पेमा, दुऔ ठाढि हहि बार ॥३१६॥

जबही सखि मधु नाम[1] सुनावा, दरसा सुनतै सात्तिक[2] भावा।
कंप भाउ मुख आव न बैना, चित सौ चेत गा झापेउ नैना।
ढरै आगि मो जैसे राँगा, तिमि नितेज भौ आठौ अगा।
पेमै लै छिरका मुख[3] पानी, कहै जागु सिध घरी तुलानी।
कहु जो कछु कहबे ही बाता, पुनि अस दिन कब करै बिधाता।

आजु भाग तोर दाहिन, बैसहु चित्त सभारि।
ठाढि आहि सिर ऊपर, साहस सिद्धि तोहारि ॥३१७॥

---

[३१५] १ बिहाइ एक०।
[३१६] १ सखी एक०।
[३१७] १ मास एक०। २ सत्तिक एक०। ३ चख एक०।

सुनत नाव साहस सिध जागा, कहै बचन अम्रित सम लागा।
कहै कौन दिन आजु सोहावा, जाहि बास मैं प्रीतम पावा।
फूली मकु रे पेम फुलवारी, जेहि सुबास पूरित मो बारी।
पौन बास काकर लै आयेउ, जेहि रे तोहि बिनु मैंमत पायेउँ।
पेम प्रीति जे आव अमोला, आइ देखु बीर बिरह फफोला।

मैं तोहिं कारन सब तजा, जत कछु येहि ससार।
एक न तोर दुख परिहरा, जो जग जीवन सार ॥३१८॥

गइहु जो पेम लीक हिय काढ़ी, सो न मिटी बरु[1] दिन दिन बाढी।
सुख कैसे लिपित भा नीरा, तुअ दुख नैन भवँ जो पीरा।
मकहुँ आजु बितीतू राती, कै चातिक सिर बरिस सेवाती।
तोरे बिरह जुंआ फर बारी, कौन सो बिखै जो न मैं हारी।
मिलहु आजु हम दै गलबाही, काल्हि आजु अस होइ कि नाही।

आजु जो कछु है करना, कस न लेहु करि सोइ[2]।
काल्हि बहुरि का जानी, दहुँ कैसी कलि होइ[3] ॥३१९॥

जब परगट भा रूप तोहारा, तब के हम चखु देखनिहारा।
जा दिन आदि रूप तुह सोहा, ता दिन हुतें तोहिं मइँ मोहा।
रूप तोहार मोर दुख बारा, देस देस गै भैउँ पँवारा।
जौं जौं रूप उदित जग तोरा, तौं तौं जोव बिरह बस मोरा।
दिन दिन रूप अधिक जै तोही, अब न सकौं मैं परिहरि मोही।

जौं तुह बदन निहारि कै, देखा बदन अघाइ[1]।
तिन्ह धन धन कहि धाइ कै, हम चखु ब्रूबा आइ ॥३२०॥

बाँके नैन कटाछ सोहाये, दुनौ पलक मो रकत तिसाये।
बिरह अगिन जग दहा न एता, तुह बिरहै जौं उपजा एता।

---

[३१९] १ जो एक० । २ कैसी कलि बिधि होइ एक० ।
३ कैसी विधि लिखा होइ एक० ।
[३२०] १ निभाइ ।

तुह चित चचल निरदै, बैसेहु सब जग खेलि।
मै अबला केंव निरबहौं, तिल तिल जिवरा पेलि।३२४।।

कामिनि बचन कुँअर सुनि रोवा, कहै मोर दुख तोहि न गोवा।
जो किछु मोरे जिउ पर कीन्हा, सभ जानौ जे आपन चीन्हा।
सदा ठाँव जिव भीतर तोही, मोर मरम[१] का पूछेसि मोही।
मोर दुख मोंही पूछै कहा, आपुहि पूछ किये जो अहा।
हिये माँह जेहि केर बसेरा, सो का दुख पूछै तेहि केरा।
सदा हिये महँ बाला, ठाउ रहन कर तोर।
जानि बूझि सब मर्म जिव, का पूछै दुख मोर।।३२५।।

चिहुर तोहार और जिव मोरा, लुबुधे दुनौ देखि मुख तोरा।
बदन तोर का मोहिं छपावत, जौ तुह चिहुरन घूँघट आवत।
सौंह न जाइ सूर तन हेरा, जस दुपहरि खरभरी बेरा।
नैन सूर बिच आहि न कोई[१], अपने जामनिका आपन सोई।
छोट हाथ ना पहुँचै पारौ, तुह मुख से ऊपर केउ टारौ[२]।
चिकुर सकोरहु बाला, दिनकर उदै कराइ।
लोयेन जरे बियोग के, पिअहिं सरूप अघाइ।।३२६।।

जो कोइ देख चाह मम रूपा, सुनहु बात एक कहौ अनूपा।
किमि संकोच जो नैन पसारा, दिस्टि माग ले आउ उधारा।
ताहि दिस्टि चाहिय मम रूपा, इन्ह नैनहुं देखि जाय न रूपा।
मम नैनन्हि जो दिस्टि हथियावै[१], मोहिं देखे तोहिं और न भावै।
कहौं कुंअर मैं निस्चै तोही, यह देखि नैन सकै न मोही।
कै जिउ जोबन तन मन, नैन स्रवन दै बादि।
तब तो लोयेन उघरै, जेहि सूझै अत आदि।।३२७।।

---

[३२४] १ आगे एक०। २ सहेहु बिरह दुख हम आगे एक० (पूर्ववर्ती चरण की पुनरुक्ति)। ३ लै एक०। ४ जौरा एक०।

[३२५] १ दुख मा०, मा०।

[३२६] १ गोई एक० (< कोई फारसी लिपि)
२ तो कच लाँव छोटि मोरि बाहीं रा०।

[३२७] १ ठहरावै एक०।

हिये माह सतति तुम्र ठाऊ, औ रसना बर जर्पाहि तुम्र नाँऊ।
औ नैननि मो ठाउ तोहारी, दिस्टि माँह तुह मुरति अपारी।
जहाँ न तोर रूप[1] उजिआरा, तहाँ दिनियर आछत अधियारा।
जौ नहिं नैन भवै चखु मोही, दिस्ट बाजु जो देखी तोही।
तोरि दिस्टि नैनन्हि महँ मोरे, लोयेन जोति अंध बिनु तोरे।
बाला जहाँ उदय करै, तुह मुख ससि उंज्यार।
सहस सूर जौ उगवै, तबहुं सो सब ठाँव अधार ।।३२८।।

छाँड्हु येह चतुराई जेती, केतिक छंद करहु हम सेती।
अब परिहरहु दद उर दीठे, पिअत गुपुत मो बचन जो मीठे।
एते देवस सुख माने भोगू, अब हम देखु करत हौ जोगू।
तुह फिरि फिरि करहु अनदा, हमहिं दहै जे मनमथ ददा।
तुह मानहु रस भोग बेलासा, अहनिसि हम तन बिरह नेवासा।
तुह बहु बल्लभ भौंरा, थिर भै रहौ एक पास।
हम अबला केउ निरबहौ, निस दिन सदा उदास ।।३२९।।

सौरि सपत बाचा जो कीन्हे, मोहि आपुहिं बिधि अतर[1] दीन्हे।
ससि पूनिव देखा उजिआरा, किमि सो छपै छपाये बारा।
सदा हिये मो रहनि तोहारी, का मो सौ मुख गोवसि बारी।
देहिं अमी रस अधर अघाई, जात प्रान काया बेलंबाई।
बेगि[2] देखाउ रूप मोंहि बारी, कै निजु भई जीउ लेनिहारी।
कौन दोख[3] केहि औगुन, बदन छपाये मोंहि।
औगुन इहै जो सकल सिस्टि पर, भई अवस्था तोंहि ।।३३०।।

कुअर बचन सुनि अंबुज करी, बिगसित भौ रस बातन्ह धरी[1]।
कहेसि मोंहि कुल कर[2] साँसा[3], कुकरम कै को आपुहिं नासा।
लाजौ कुटुंब पिता महतारी, एक मैं नसौं चढै कुल गारी।
बाचा देहि जौ मो कहँ पीऊ, करौं आइ तोहि पर बलि जीऊ।

---

[३२८] १ मुख एक०।

[३२९] यह छन्द भा०, मा० तथा रा० प्रतियों में नहीं है।

[३३०] १ अंतर बाचा जो एक०। २ भाग एक०। ३ दुख एक०
(दोख फारसी लिपि)

एता कहौ जौ मो सौं नाहा, मिलौ आजु तुह देइ गलबाँहा।
बिरह आगि बरु जिउ सहौं, तेहि डर होउ न आगु।
मति मम धरम चीर[४] पर, चढै पाप कै दागु ॥३३१॥

कहौ कुंअर मैं तोहि सतभाऊ, पानिप उतरि[१] चढै ना काऊ।
पानी तात कै रे जौ जुडाई, पहिल स्वाद कै ता पहँ पाई।
सूखे[२] कुसुब कै बास न जाई, और रूप कछु वोहि घट आई।
पै न पहिल अस गारौ होई, औ आदर सौं लेइ न कोई।
तस तिरिया जौ पानिप खसै, सो निज आदि अंत कहँ मसै[३]।
जौ लगि पिता न सकलपै, मो करै न कन्या दान।
तौ लगि होइ न सुरत रस, और सबै रस मान ॥३३२॥

कहै कुंअर सुन पेम पिआरी, उतपति बाचा हम तुह सारी।
आदि सपत जो हम तुह भैऊ, रुद्र ब्रह्म हरि अंतर दैऊ।
पाप के पथ पा धरौ न काऊ, उहै सपति मोहिं तोहि सतिभाऊ।
अब जो बाचा सपत है तोरी, बिरचि न रचै सपत जे मोरी।
जौ लगि तरु धर्मं फरै न मोरा, मोहि अखाजु[१] अम्रित फर तोरा।
बर कामिनि जब ताँई, तोहि मोहि होइ न ब्याह।
पाप न अंतर सचरै, बिधि बाचा मम आह ॥३३३॥

बाचा सपत सुन राजकुमारी, चद्रबदनि[१] मुख[२] दीन्ह उघारी।
कुंअरहि उपजा मोह बिकारा, देखत जोति बदन उजिआरा।
देखि कुअर बर कामिनि धाई, परतछ अत्रिछ लीन्ह उठाई।
कहेसि लाज[३] मोहि बूझी नाहा, मैं तजि लाज[३] दीन्ह गरे बाँहा।
अजहुँ नाह जे चेतहु आपू, लागु गीव जे हरै सतापू।
पेम पिरीतम लागु गिव, देखा मुख जे गात।
रोम रोम से काढि ले, बिरह दग्ध उतपात ॥३३४॥

---

[३३१] १ बारी एक०। २ गारी एक०। ३ नासा एक०। ४ जरि एक०।
[३३२] १ पाप के नाव एक०। २ सूँघे मा०।
३ जानि बूझि जो, ताहि न नासी एक०।
[३३३] १ अघात एक०।
[३३४] १-२ लाज जमनिका मा०। ३ मान।

कुंअर के गीवा कुंअरि लगाई, भा सचेत जो प्रीतम लाई।
ऊभ कुअर ले प्रीतम लागे, औंटा जानेहु सोन सोहागे।
बार कामिनि जे राजकुमारी, एक भैउ दुइ प्रान पिआरी।
प्रान एक भौ एक जो देही, मिलते दूनौ पेम सहेली।
बिरहे बिछुरे अहे जो वोऊ, साते पिअत अमी रस दोऊ।
पेमी बिछुरे जाहि दिन, दोउ मिलि पूजी आस।
तीनहु लोक[1] बधावा, महि पताल आकास ॥३३५॥
जिअ की बात दुऔ जिअ होई, तेहि का मरम न जानै कोई।
सुरसरि जानु पियासा परा[1], मुये पिड पानी अनुसरा।
दुइ जोबन गहि हिये समाने, अधर अधर रस पिअत न जाने।
मिलत पिरीतम जस सुख होई, सो किमि जीभ कहि पारैं सोई।
बिबि सरीर एकै भै गैऊ, बैठे पहर एक दुइ भयेऊ।
नाक नीर लगि बूडे, रहे पिआसे दोउ।
परगट भाउ सो बरनेउँ, गुपुत जान ना कोउ ॥३३६॥

---

[३३५] १ दिनहिं बाजु एक०।
नोट :—भा० मा० तथा रा० प्रति में ३३४ तथा ३३५ छन्दों के स्थान पर केवल एक छन्द है जिसमें प्रथम की ३ पंक्तियाँ और दूसरे की अंतिम ४ पंक्तियाँ हैं।
[३३६] सोरसर पिआ अस बारा एक०।

पुनि गै दुओ सेज चढि बैसे सोभित मधुकर मकरंद[1] जैसे।
कबहुँ दुओ पाछिल दुख कहही, कबहूँ आपुस महँ मिलि रहही।
रबि अथवा ससि कीन्ह प्रगासा, एक सैन[2] दुइ किआ नेवासा।
जग जीवन फर कत जस एही, जस बिछुरे दुइ मिलै सनेही।
रैनि बिहानि दुओ रस जागे, जिन्ह[3] चखु नीद भोर केहि लागे।
अधर अधर उर उर सौं, मेरै रहे सुख[4] सोइ।
देखि समुझि ना मन परै, दहु हहिं एक कि दोइ ॥३३७॥

पाट पटबर दीन्ह दुआरी, पेमा भई पहरू चित्रसारी।
साठि सहेली पेमा केरी, एक एक सग जो पँच पँच चेरी।
सब सरूप जौ जोबन बारी, एक बैस औ एक उन्हारी।
खेलै हँसे रहै एक ठाई, पेमा बहुरि देखै सब आई।
आस पास चहुँ दिस चित्रसारी, केलि करत हैं साज दुवारी[1]।
इहाँ सखी सग पेमा, करै सहज रस केलि।
उहाँ रूपमजरी के जिउ, चढी भरम कै बेलि ॥३३८॥

रूप मजरी बैसि जो अही, अकसमात[1] चित चिता दही।
चक्रित चित औ भर्म भुलानी, भई ठाढ औ हिये सुगानी।
पुनि मधुरा ते कहा बोलाई, धी की जाति बिधि मोकलाई।
साझ कि गईं दुओ हहिं बाला, नहिं जानौ दहुँ कौने हाला।
कौन काज दुइ राज[2] दुलारी, घर तजि राति रही चित्रसारी।
मधुरै कहा मैं चेरी, पठई है उन्ह पास।
अब बोइ छिन मो ऐहै, बैठहु तजौ उदास ॥३३९॥

औ पुनि कहा सुनु तै रानी, चतुर सुबुधि हौ सदा सयानी।
पथ बोहट औ निसि अंधियारी, कौने काज जाहु चित्रसारी।

---

[३३७] १ रति मकरंधुब रा० । २ नैन एक० ।
३ चखु एक० । ४ मुख एक० ।
[३३८] १ राजदुलारी एक० ।
[३३९] १ असमन ते एक० । २ रहीं एक० ।

तुह बैसहु मैं उन्हि घौ रावौं, कहौ तौ मही उन्हे लै आवौ।
वोइ आपुस मो बारि सहेली, लेहिं पिता घर कै रस केली।
बिछुरी मिली बहुते दिन दोऊ, ते खेलत उन्ह बरज न कोऊ।

वोइ दुइ बाल सहेली, खेलहिं केलि कराहिं।
मोर तोर कौन परोजन, लरिकन्ह पहँ जे जाहिं ॥३४०॥

मधुरा बरजि रही बहु भाँती, पै रानी जिउ भई न साती।
कहेसि निमिखि एक मै गौ तहाँ, मधुमालती पेमा है जहाँ।
अब जो भरम भौ जिव भारी, औगुन कछु देखौ चित्रसारी।
बरज न मानेसि गौ चित्रसारी, मधुरहिं लाज भई जिय भारी।
चेरी बीस लीन्ह सँग लाई, आपुन[१] चित्रसारि कहुँ आई।

बरजि रही बहु मधुरा, रानी स्रवन न कीन्ह।
सो गौनी चित्रसारी, गै देखा सब चीन्ह ॥३४१॥

जौ रानी चित्रसारी आई, देखा सो जो कहा न जाई[१]।
ससि मंदिल रबि[२]किरनि छपानी, रबि देखे ससि जोति हेरानी।
देखा राति भई जो कारी, पेमा पास आइ दिहु गारी।
है निलज्जु तुह कानि न मोरी, दाग दिये कस पोतिया कोरी[३]।
मैं येह तजी भरोसे तोरे, कुल कलंक कस लाये मोरे।

सत भाखा सतन्ह[४] कै, सत्त कही समुझाइ।
कारा होइ सो निस्चै, कारे सग जो बसाइ ॥३४२॥

पेमै कहा सुनसि मैं कहऊँ, तुह माता बोलहु सो सहऊँ[१]।
मोहि न माँख किछु तोरी गारी, जसि मधुरा तसि तै महतारी।
पै किछु खोरि[२] लाइ ले मोही, तौ गरिआव भाव जत तोही।
भरम न जीव जे मानहु रानी[३], एक दुनहुँ अस सुरसर पानी।
औ पाछिलि दुनहू कै प्रीती, सभ जानौ अंत आदि जेंव बीती।

---

[३४०] भा० तथा रा० प्रतियों में इस छन्द की अर्द्धालियाँ उलट-पुलट गई हैं।

[३४१] १ औ पुन एक०।

[३४२] १ कहत लजाई। २ रबि मंदिल जो एक०।
३ पीति अकवोरी एक०। ४ सुनि तिन्ह एक०।

उतपति बात कही सब पेमै, प्रीति मिली जेहि भाँति।
पालक फेरि बदलि कर मुदरी, पहिरि जीव भौ साति ॥३४३॥

सुनु माता जो दुहुँ जिग्र माही, दरस[1] परस छाँडि खोरि ग्रौ नाही।
मैं काहे ग्रस भैउ ग्रयानी, मेरवौं निरमल छीर मो पानी।
ग्रंब्रित कुंड जैस ग्रवतारा, ग्रजहुँ देखु वोइसे है बारा।
पेम लीन है पाप न पासे, ग्रजहूँ सुरसरि नीर पिग्रासे।
कौंल कली काहूँ न बिगासा, भौंर बिमोहि रूप नहिं बासा।

ग्रजहुँ सेवाती धार सीप लगि, घोर गगन गुमाति[2]।
ग्रजहूँ जैस जनमी मधुमालति, पहिरि जीउ भौ साति ॥३४४॥

रानी पेमा निकट बोलावा, कहेसि जो पूछौ कहु सतभावा।
कहु मोहिं एक भाति बेहारा, राँक दुखी की ग्राहि भुग्रारा।
कुल कर नीक कि है कुल हीना, कै रे बिरह दुख हुते मलीना।
कै सनमथ पुरब[1] कै बाता, कै रे देखि यहि के रगराता।
तब पेमै निजु बात जो ग्रही, रूपमजरी सो सब कही।

गढ सुहावन कनैगिरि, सूरजभान भुग्रार।
टिकइत उहवाँ राजा ठाकुर, कौला प्रान पियार ॥३४५॥

पेमा बचन सुना जौ रानी, भा सतोख तौ जिउ सुस्तानी।
कहेसि फुरहु संतति जे रोवै, पेम लाज मोसौं येह गोवै।
कबहूँ सीस धै बैसि तँवाई, कबहुँ ठाढ भै हँसै हँसाई।
कबहूँ चक्रित दह दिसि देखा, कबहुँ मुग्ध भै रहै ग्रलेखा।
कबहुँ कहै[1] दरपन ते बैना, कबहुँ रुधिर भरि ग्रावैं नैना।

कबहुँ देवस चारि ग्रन्न छाडै, कबहूँ रोवै गोइ।
कबहूँ बिरह ब्याकुली, बदन ढापि रह सोइ ॥३४६॥

तेहि ऊपर तै एह का कीन्हे, बुझी ग्रागि घ्रित ऊपर दीन्हे।
एक ग्रैसहिं रहा बैरागी, ताहि उपर तै बई बज्र ग्रागी।

---

[३४३] १ कहऊँ एक० (पुनरुक्ति)। २ खोइ एक०।
३ नारी एक०।
[३४४] १ दूसर एक०। २ घहराति।
[३४५] १ कैसइं सुनि काहू सेउँ।
[३४६] १ बकै भा०।

तँ का बज्र ताहि पर पारा, जेहि आपन न होस सभारा।
पालक एक हेम नग जरी, एहिके मंदिल काहु लै धरी।
ता दिन ते जो मरि मरि जीअइ, अन्न न खाइ न[1] पानी पीअइ।

आजु बात सब जाना, औ बूझा सब मर्म।
तँ काजर काहे सिर काढे[2], आगू यह कौन धर्म ॥३४७॥

अति कि रिसि कछु चेत न रहा, रानी बहुरि सखी ते कहा।
अस बेगरावहु दूनहुं जानी, जैसेन खसत पख ते पानी।
अस मोहनी चखु निंद्रा लागी, करवट देत वहुरि ना जागी।
सखिन्ह बीच दुहुं करवट दैऊ, एक देह तब दुइ ठा कियेऊ।
कुअरहिं पिता नगर लै डारेउ, मधुमालती लै मदिर उतारेउ।

चित्रसारि सौ रानी, पुनि गौ मधुरा पास।
कहेसि देहु जौ अग्या, चलउँ सबेरा बास ॥३४८॥

कुँअर इहाँ जागा जहँ आना, चक्रित चित भा भर्म भुलाना।
सौतुख सपना जात न कहा, देखा चक्रित चित भै रहा।
बाहि खेह सिर धुनि धुनि रोवै, नैन रकत मुख अबुज धोवै।
कहा सो चित्रसारि कविलासा, कहँ सो सोरही जाहि सग बासा।
रजनी गत[1] होत भिनुसारा, चले कुंअर जहँ होत हिआरा[2]।

कहँ कबिलास नेवास जे, कहाँ सुरहिनि कर[3] सग।
निमिख माँह जो राज सुख, कहु केहि कीन्हा भग ॥३४९॥

कोइ संग साथ न बिनु करतारा, रोवत चलेउ बाहत[1] सिर छारा।
नैन सरूप जो रहे लोभाई, जग जीवन इहौ नहिं भाई।
सग न साथ पेम मदमाता, पीरम न बकतै कहै न बाता।
चला जाइ एकसर दिन राती, मधुमालती कर पेम सघाती।
बन सायेर जेत आगे परे, पेम प्रताप ते सब रे तरे[2]।

---

[३४७] १ खंडवानि रा० । २ तैं कत हरिय डार घसि काटी रा० ।

[३४९] १ अंत । २ दारा रा० । ३ सुरज बस एक० ।

एह तौ उहाँ चला तेहि मारग, प्रथम भौ जेहि सिधि।
मधुमालती इहाँ जागी, झंखै जो खोइसि निधि ॥३५०॥

मधुमालती जौ सोवत जागी, बिरह आगि तौ नखसिख लागी।
ऊभि साँस जिउ गहभरि[1] आवै, तजि लज्या चखु रुहिर बहावै।
नैनहि भरि भरि धार जो फूटी, नैन नीर[2] चलु बीरबहूटी।
जबही दसन डफोरत खोला, दामिनि चमकि चमकि तौ बोला।
मुकलिल केस रैनि अँधिआरी, अब दुख आगे सुख उजिआरी।

रोदन करति मधुमालती, बिरह बिथा तन साल।
लोगन्ह अचरिज भा यह[4], अब दुइ बरखा काल ॥३५१॥

मधुरा सौ जौ अग्या पाई, रानी नगर महारस आई।
धाइ आइ मधुमालति पासा, देखी ररै जिउ ऊभै साँसा।
कनक देह सब मिल गौ माटी, नैन नीर धोये बिधि[1] पाटी।
फारेउ तार तार तन चोला, रोवत भौ राते दुइ डोला[2]।
सौरि सौरि प्रीतम अनुहारी, ररै जो खेह बाहि सिर बारी।

प्रथमहि पेम जो उपनेउ, हुती जो बारि अयानि।
अब भरि जोबन किमि रहै, लियेउ जो पापी प्रान[3] ॥३५२॥

पेम प्रीति जिउ बाउर होई, कान न करै कहै जत कोई।
जहाँ भैउ बिरहा तन राजा, तहाँ न रहे सुद्धि बुधि लाजा।
समुझाये तौ समुझ न बारी, रोइ रोइ धरनी खाइ पछारी।
पुनि रानी चलि ; आगे आई, कहेसि लाज तै कुलहि लजाई[1]।
मारेसि हाथ दुवौ वोह मागा, है कुल बोरनि का तोहि लागा।

---

[३५०] १ घालि रा० । मेलि भा० । २ ते तइ उबरे एक० ।

[३५१] १ गहि गहि एक० । २ बीर एक० । ३ रही एक० ।
४ सघन एक० ।

[३५२] १ निधि एक० । २ बोला एक० ।
३ प्रीतम कहत परान भा० ।

दुख दाधे बिरहे जरा, घट जें मिलन अधार।
पेम बिवोग देइ जनि काहू, जन्मत एहि ससार॥३५३॥※

मात पिता कुल लाये खोरी, जन्मत कस न मुई कुलबोरी।
कुल मुख कारिख किये करमुखी, तोही जन्मत भयेउँ मैं दुखी।
जौ बारे मरतिसि कुलबोरी, होत न देस मो हाँसी मोरी।
एह कारिख दहु कैसे धोई[1], कारिख और होइ तौ धोई।
बहुति भाँति फुसिलावै[2] रानी, स्रवन न कीन्ह पेम बौरानी।

रानी बहुत जतन कै देखा, कैसहुं समुझ न सोइ।
का तेहि सिक्षा सिर लगै, जेहि जिउ हाथ न होइ॥३५४॥

---

[३५३] १ गँवाई।
※ नोट :—दोहे के स्थान पर भा० तथा रा० में निम्न पंक्तियाँ हैं —
दूध अंत तैं बारी तोहिं दहु कौन बियोग।
सुद्ध सांत भइ रहसि न तौलहि जौलहि मिलै संजोग॥
[३५४] १ खोई। २ समुझावै रा०।

कान न कीन्ह जननी जत लापा, सिध जोगी तौ आपुर जापा[1] ।
जौ रानी समुझावत हारी, किछु रस बचन करू किछु भारी ।
सिख बुधि सुनै जेहि जिउ होई, बौरी कहँ सिख बुधि दे कोई ।
जौ पर सिख बुधि किछू न लगी, रानी चक्रित रही जनु ठगी ।
तब जिउ डरी कहेसि का करऊँ, यह संजोग मैं कुल कहँ डरऊँ ।

तब करु चिरुआ भरि लै कै, पढि छिरका मुख पानि ।
लागत खन मधुमालती, पछी भै रे उडानि ।।३५५।।

पछी रूप मधुमालती भोई[1], केउ न जान कहाँ उडि गई ।
ऐसहि अही पेम की बौरी, तापर पंछी भई ठगौरी ।
सगर नगर उठि देखै धाई, पछी रूप पंख नहि पाई ।
पौनहु चाहि अधिक उडि भागी, बहुत पाछु गये[2] हाथ न लागी ।
रूपमजरी मन पछतानी, कहेसि कहा मैं कीन्ह अयानी[3] ।

मात पिता तेहि पुत्री कारन, रोइ रोइ भये अचेत ।
पुतरी नैन जो कार तोहि बिनु, रोइ रोइ कीन्हा सेत ।।३५६।।

मधुर नाव सुनि जिउ भजा, मधुमालती सब धधा तजा ।
छाडेसि मया मोह ससारा, छाँडेउ लोग कुटुंब परिवारा ।
छाडेउ रहस चाउ रस केली, छाडेउ ते सब बारि सहेली ।
छाडेउ भोग भुगति रस आसा, छाडेउ मात पिता घर बासा ।
छाडेउ अर्थ दर्ब जेत आथी, छाडेउ जन परिजन सग साथी ।

छाडेउ राजपाट जत, सुख सेज्या नीद भोग ।
छाडेउ रहस चाउ सब, कियेउ पेम कर सोग ।।३५७।।

मधुमालती सब छाँड उडानी, जोवत खोज करत है रानी ।
व्याकुलि भै भवै बिकरारी, जस बाउर हो बीछु क मारी ।

---

[३५५] १ मौन घरें बैसी होइ तपा भा० ।

[३५६] १ होई एक० । २ किआ एक० । ३ सयानी एक १ ।

गिरि सायेर बन फिरि फिरि हेरा, कतहुँ न खोज पाउ पिउ केरा।
रन पट्टन जग भवे उदासा, पे वोहि की ना पूजी आसा।
तरु तरु घर घर देस बिदेसा, जन जन ढूढेउ रॉक नरेसा।

केदलीबन गोदावली, मथुरा बनारसि[1] प्रयाग।
देव द्वारिका औ सब तीरथ, फिरि फिर मॉग सोहाग ॥३५८॥

घुर्मत फिरत हेरत दिन राती, पेम सुरा व्याकुल मदमाती।
एक दिन उडी जात होत बारी, परी दिस्टि एक कुअर उन्हारी।
थिरकै खिनक जात पथ बारा, देखा एक कुअर उजियारा[1]।
ताराचद ताहि कर नाऊँ, पुर पैनेरि मानगढ ठाऊँ।
अति सुन्दर रूपवत सरेखा, छत्री बरिआऊ जो बेखा[2]।

लखन सपूरन बिद्या, मूरति मदन कुलीन।
बहुत उन्हारि मनोहर, देखत मधु[3] भौ लीन ॥३५९॥

पुनि धौराहर बैसी आई, देखत अति रे सरूप सोहाई।
हरे पॉख अरुन जे ठोरा, नैन फारि जनु मानिक जोरा।
कुअर उन्हारि नैन दुइ लायेसि, जरत बिरह दौ आसरौ पायेसि।
कुअर दिस्टि तौ पखिहि लागी, देखत मया मोह मन जागी।
रहे देखि जसि लाए ध्याना, देखत राये रॉक परधाना।

सबन्ह कहा अस पछी, येहि कलि कबहुँ न आउ।
कोटि नैन जौ होहिं जग, तबहुं न देखै पाउ ॥३६०॥

रहसी देखि कै कुअर उन्हारी, बैसी आइ तेहि आस[1] अटारी।
कहेसि जरे तेहि अमी सेरावौ, बिरह आगि तौ जरत बुझावौ।
बूडत आस धाइ तिनु लेई, तिनुका बूडत आसरौ देई।
ओस पियास न त्रिखा बुताई, ऑब साध की अँबिली जाई।
बिरह आगि हीवर[2] परजारी, होइ सतोख न देखि उन्हारी।

---

[३५८] १ गया रा० ।
[३५९] १ की रूप उन्हारी एक० (पुनरुक्ति)।
२ छत्री बली अजाहिल बेखा रा०।
३ बिधि एक०।

पछी रूप[३] कुअर निहारत, देखि रूप भा लीन ।
ताराचद कुँवर हिय चटपटि,ज्यो जल बिछुरै मीन ।।३६१।।

पछी रूप देखि कुअर भुलाना, नेगिन्ह कहा जो भौहनि साना ।
बेगी समुभि जना दौराये, ब्याधा नगर सबै धरि आये ।
कहेसि चहूं दिस जाल पसारहु, तेहि ऊपर लै अन बिथारहु ।
पछी पेम प्रीति जिउ गही, लाइ नैन दुइ कुअरहिं रही ।
जाल फॉद भौ चित न आना, रही कुँअर मुख लाये ध्याना ।

छिन एक गए सजग भै पछी, उडन की मनसा कीअ ।
कुअर कहा जो येह उडि जाइहि, सग चलिहि मम जीअ ।।३६२।।

रोपा जाल चहूँ दिसि घेरा, ठाव ठाव जो अन बिथेरा ।
पखी होइ तौ अनहिं लोभाई, यह भूली बिरहै बौराई ।
बहुरि उडै को चित दौरायेसि, खिनक उन्हारि आसरा पायेसि ।
पखी उडन को पख सकोरा, कुअर ठाढ भै हाथ मरोरा ।
कहेसि जौ रे येह जाइ उडाई, सिधि निधि[१] मोरि साथ येह जाई ।

कहा कुअर उडि जाइहि, हाथ धरौ मैं जाइ ।
धावत मदुक,सीस ते उछरा, मोती गौ छितराइ ।।३६३।।

मुकुता परे जाल ढहराई, देखि पखि तौ द्रिस्टि फिराई ।
उडन कै मनसा जौ चित आई, रही मुकुता ते खिन चित लाई ।
तबहि कुंअर अस कहा बिचारी[१], एह पछी निज मोति अहारी[२] ।
अनबेधे मुकुताहल नीरिय, मर्मं येहि का पाव न धरिय ।
धाये जन लै अनबिधे मोती, आनि बिथोरे गॅगन लहि जोती ।
तव मधुमालती मन गुना, पेम पथ जिउ देउँ ।
आपु वँझाई जाल महुँ, चाह मनोहर लेउँ ।।३६४।।

---

[३६१] १ आइ एक० । २ जेहि हिय भा० ।
३ मधुमालति ।
[३६३] १ सुधि बुधि भा० ।
[३६४] १ पुकारी भा० । २ प्रान अधारी एक० ।

जौ मधुमालती निस्चै जाना, कुअर जीउ मम हेतु समाना ।
एक वरिस भा मोहि येहि भेसा, पावा कतहुं न कुअर सँदेसा
वहुरि कुआंर जी आस्रा होई, मकु येह कुअर आह जो सोई
अब मैं बाझि[1] मर्म येह लेऊँ, औ निज मर्म जीव कर देऊँ ।
मकु पावौ कछु प्रीतम चाहा, मरौ तो लहौं प्रेम पथ लाहा ।

येह मन दीप पेम महँ, परैउ बेगि होइ आइ[2] ।
चार पाँय मधु अरुझाने, जिअत निकसि नहिं जाहि ॥३६५॥

पछी बाँझतौ ब्याधा धाये, जाल सहित जिअतैं लै आये ।
कहेसि कुंअर मन भयौ हुलासा, सूर उदित जिमि[1] कौल बिगासा ।
पिंजरा एक कनक कर आना, ता महँ पछी किआ मन माना ।
दिस्टिहुं ते खिन एक न टारै, मनि मुकुताहल आगे डारै[2] ।
जौ खाभी पंछिन्ह कै जानी, सबै कुंअर तेहि आगे आनी ।

निमखि न पिंजरा परिहरै, और न काहु पतिआइ ।
हिय ऊपर निास बासर, पिंजरा लिये रहाइ ॥३६६॥

तीनि देवस बीता येहि भावा, कुअर पछी दुहुं[1] किछौ न खावा।
पुनि उपजा बाला मन[2] माँहे, एहि मोहि लागि मरै केहि लाहे ।
मिला[3] राजकुंअर सुकुवारा मरै तो हत्या चढै कपारा।
यह गुनि जो कहै राजकुँआरी, कौने अरथ तैं कुअर दुखारी।
मोंहि तोंहि दहु कैसी रीती, मानुस पछिहिं कौन पिरीती ।

आपु जीउ जोबन सब दै यह, दुक्ख लिहा बेसाहि ।
राजकुअर सुख भोगी, दुख केहि अरथ सहाहि ॥३६७॥

पुनि पखी मुख अंब्रित घोला, कहै बचन रस भरे अमोला ।

---

[३६५] १ बूझि एक० । २ फलि गा भै जाहि एक० ।
[३६६] १ भौ एक० (पुनरुक्ति) । २ टारौं एक० ।
[३६७] १ तौ एक० । २ पन एक० । ३ यह सो ।

मैं पखी तै राजकुआरा, मोहिं तोहिं कैस पेम बेवहारा।
तुह तौ राजकुअर सुख भोगी, मैं बैरागिनि पखी वियोगी।
कौनि प्रीति आपनि मोरि जानी, तीनि देवस छाँडि अन पानी।
पहिल रूप जो देखतेसि मोरा, जेत कछु करतेहु तेत सब थोरा।
　　रूप राज हरि लीन्हा, पखि किया करतार।
　　औ पुनि और न जानौ, का विधि[१] लिखा लिलार ॥३६८॥

हरखित पखी कुंअर सुनि बैना, जिमि रे चकोर चाद देखु नैना।
पछी बचन सुनि राजकुआरा, रहा चक्रित मन करै बिचारा।
बहुरि सपत दै पूछेसि बाता, कहु आपनि सत बात निराता।
सपत तोहि जौं फुर ना कहही, पसु पखी कै मानुस अहही।
औ भा पखी रूप जो तोही, सपत तोहिं[१] फुर भाख न मोही।
　　कौन नाँउ औ ठाँउ तोर, कौन तोर है देस।
　　कौन पाप केहि अधरम, भैहु जो पंखी भेस ॥३६९॥

येह सुनि पछी रुधिर भरि[१] नैना, रोइ रोइ कहै कुअर सौ बैना।
जौं रे सपत दै पूछे मोही, कहौ मरम सब आपन तोही।
नग्र महारस बिक्रमराऊ, पिता राज अति बल बौसाऊ।
जबूदीप भरथखड राजा, औ जग पाट छत्र सिर छाजा।
मैं वोहि घर पुत्री औतरी, अचक अवस्था देखु यह परी।
　　नाउ मोर मधुमालती, राजा ग्रिह औतार।
　　जो रे लिलारे[२] बिधि लिखा सो को मेटै पार ॥३७०॥

पुनि पाछिल[१] सब बात जो अही, मधुमालती कुअर सौं कही।
उतपति रैन जो भयौ मेरावा, जत कछु आह कहा सतभावा।
औ जेत दुख बिछुरे पुनि सहा, सो सब एक एक करि कहा।
औ पुनि कहेसि दोसरी बारी, मिले दुऔ पेमा चित्रसारी।
औ जैसे सोवत बिहराने, जब जागे तब देस देस[२] आने।

---

[३६८] १ दुहुँ का।
[३६९] १ आहि एक०।
[३७०] १ भै एक०। २ कुँअर को मेटै भा०।

पुनि जननी पानी पढि छिरका, लोग कुटुंब कै कानि ।
सो सब आदि अंत लगि, कुअर सौ कहा बखानि ॥३७१॥

औ सब राजकुँअर की बाता, आदि अन्त सब कहा निराता ।
आदि रैनि[1] जिमि भई चिन्हारी, औ जिमि बाचा बीच विध सारी ।
औ जिमि तजा पिता घर बारू, औ बूडा जिमि सहन भडारू ।
पेमहि मिला आइ जेहि भाती, प्रीतम चाह पाये भा साती ।
तब अनद बहु मान बधावा, राकस मारि वोहि लै आवा ।

पुनि पेमै चित्रसारी, बिधि ले मेरवा हम दोउ ।
खिन एक नैन पलक सौ लागत, बिधि हम किआ बिछोउ ॥३७२॥

पाप न भएउ कुअर हम माहे, यह दुख परा न जानौ काहे ।
राजकुअर लै कह दहुँ डारा, नहि जानौ दहुँ जिअत कै मारा ।
भा पखी जब मो तन आई, पेम अग्नि निसरी बौराई ।
ढूढिहुँ उदै अस्त ससारा, मिला न कतहूँ पेमपिआरा ।
पहिले बार परा दुख भारी, तब अचेत अब जोबन बारी ।

सकल सिस्टि मैं हेरी, होइ पखी के भेस ।
कोइ न ऐसा मोहिं मिला, कहै जो कुअर सदेस ॥३७३॥

आपन मर्म[1] कुअर जत अहा, लाज छोड़ि मैं तो सौ कहा ।
जौ दयाल जिअ अति तुअ पायेउ[2], सकति आपु तुअ जाल बझायेउँ ।
देखि तोहिं प्रीतम अनुहारी, बैसी जिअ धरि आस अटारी ।
अब जौ छाडि देह मोहिं राऊ, पेम पंथ पुनि होउँ बटाऊ ।
कै ढूंढत[3] मिलि जाइहि पीऊ, कै लागिहि वोहि मारग जीऊ ।

मझन चढि कै पेम पथ[4], करिअ न जिअ कर लोभ ।
प्रीतम काज जो जिउ घटै, सो(इ) दुऔ जुग सोभ ॥३७४॥

सुनत राय पछी[1] दुख बैना, मया आसु भर आवै नैना ।
कुअर कहा सुन रे जिउ त्यागी, तोर दुख सुनत उठ उर आगी ।

---

[३७१] १ पंखी एक० । २ दिस दिस ।

[३७२] १ अन्त एक० (पुनरुक्ति) । २ राजू एक० ।

[३७४] १ कर्म एक० । २ भैऊ एक० । ३ हेरत रा० । ४ सर भा० ।

जनि कछु चिंता करसि जिअ माही, उटवौ सोइ उद्धरसि जाही ।
अगम गहौ बाला तोहि लागी, जिमि बुझाइ तोर हीवर आगी ।
मोर बौसाउ भाग तोर बारा, मेरवनिहार एक करतारा ।

राज पाट सब परिहरि, दुख अगवौ तोहि लागि ।
मकु साहस सौ होइ सिधि, बुझै तोर हीवर आगि ।।३७५।।

जहँ लगि सकौ जीव औ जाती, मेरवौ सोइ जाहि हहि राती ।
प्रथमहि नगर महारस जाऊँ, पुनि हेरौ गै चित बिसराऊँ ।
मकु मोहि जस दै घाल बिधाता, बहुरि मिलै तोहि पेम सघाता ।
मिलै न जौ लगि प्रीतम तोही, तौ लगि साति होइ ना मोही ।
जौ लगि पहिल रूप नहि पावहि, तौ लगि कुंअर काज नहि आवहि ।

नगर महारस जाइ कै, पहिल रूप तोहिं देइ ।
आनि कुअर तोहिं मेरवौ, जौ बिधि आउ न लेइ ।।३७६।।

कहि रस[1] बचन पछी सतोखी, लै बिदेस निसरेउ जिउ[2] जोखी ।
पर सुख लागि दुख जिउ भावा, परिहरि सुक्ख दुक्ख मन लावा ।
राज[2] चाउ सुख सब परिहरा, दुख कर मोट आनि सिर धरा ।
मैं बलि बलि तुअ चर्नन्ह केरी, पर दुख दुखिआ जिन्ह फेरी ।
कारन आपु दुखी सब होई, पर दुख दुखी बिरुला जन कोई ।

---

[३७५] १ पंडित एक० । २ अव सगम भौ एक० ।
[३७६] इस छन्द के पश्चात् रा० तथा भा० प्रति में निम्न छन्द है जो एक० में नहीं है —

पर दुख हिये दुक्ख जेहि होई । एहि कलि माहँ सो बिरला कोई ।
सहस जीउ तेहि पर बलहारी । जो बसाउ पर आपु उजारी ।।
रूखन्ह तरु भा ढील जो मारी । ओहि ऊपर भा फल टपकारी ।
सीपहिं देखि जगत जो मॉता । तेहि वह दोइ मोति भरि हाथा ।।
जो रे करोवै कचन खानी । सोन देइ तेहि बारह बानी ।

देखहि तूँबी बापुरी जो पर रहइ सुख लागि ।
सहहि कठिन दुख आप सिर, हिए रगत मुख आगि ।।

ताराचद कुंवर पर सुख लगि, लीन्ह आपु सिर भार।
पर सुख लागि जो दुख सहै, गनै तेहि ससार ॥३७७॥

धाये सुनि कै बाल सँघाती, कुअर मते धाये[1] अधराती।
कहेसि परा मोरे सिर काजू, होइहौ परदेसी तजि राजू।
जौ तै हसि सघाती मोरा, रहै जे मो पहँ तोर निहोरा।
यहि परोग मोरे सग आवसि, बाला प्रीति सग पहुँचावसि।
कहै न भला जगत[2] केउ तोही[3], यहि ठाँ भै जौ सग देउ न मोही।

एक तै बाल सघाती, औ बधौ हहि मोर।
आपु काज येहि औसर, लावो न आपु निहोर[4] ॥३७८॥

कुंअर सोहिरदौ सुना सो बाता, सिर पाँवहु ते काँपा गाता।
कहेसि होहि जौ सौ जिउ मोरा, देउँ सबै नेवछावरि तोरा।
जौ न आज तोरे सग जैहौ, पुनि केहि काज कालि मैं ऐहौ।
जौ जिउ नेग न लागै तोरे, सो जिउ बहुरि काज का मोरे।
तुह सग जौ न जाउँ यहि वेरा, इहाँ रहौं मै भै केहि केरा।

तुह बिदेस कहँ गौनब, छाडि राज समुदाइ[1]।
मैं जौ रहौं तुअ परिहरि, को भला मोहि कहाइ ॥३७९॥

---

[३७७] १ मरम एक० । २ की आसिर एक० । ३ काज एक० ।

[३७८] १ राएउ । २ जात एक० । ३ मोरा एक० । ४ न भोर एक० ।

[३७९] १ कटकाइ रा० ।

ताराचंद मधुमालती लै चला खण्ड

पुनीवध[१] राजा थनवारू, राज कुअर अधिराति हँकारू।
अग्या कुंअर परछि जे लैऊ, आइ जोहार आगे भै कैऊ।
कहा कुअर गै तुरै पलानू, सालहोत्र जो तै सभ आनू।
नाँव क अरथ जो जानै जेही, सहसन्ह मो आनु उबेही।
पीठि घालि पाखर सोनवानी, तुरित तुरगम साजु पलानी।

मरुत न पूजै तेज सम, चरन रेनु तुरिजाहिं।
करै जो रोस जिउ धावै, निरखि निकट परछाहिं ॥३८०॥

दरब लादि गाडी दस लीन्हा, सुदिन साधि प्रस्थाना कीन्हा।
लोग[१] कुटुंब परिहरि सदेसी, परदुख लागि भयौ बिदेसी।
जेते इहाँ रहे सँगबासी, भए साथ जो सबै उदासी।
पुनि कुअरन्ह कै बेरहन[२] बाटे, पौन बेग जो पख न काटे।
धावत चरन लखा नहिं जाई, मन मो सौ दुइ पाव हेराई[३]।

सुकुल पच्छ सोबार सातै, सुभ लग्न कीन्ह पयान।
मधुमालती कै पिजरा सग लै, उतरे जाइ मेरान ॥३८१॥

पूछत नगर महारस जाही, इहै चित मन भीतर आही।
पहिल रूप जब पावै येही, तब ढूढौ जो एहि क सनेही।
मधुमालति पिंजरा हिय लाई, चला जाइ बन माझ जो राई।
जौ जौ पाव महारस चाहा, तौं तौं जिउ मो होत उछाहा।
देख महारस नगर सोहावा, जरत हिआ जनु अमी सेरावा[१]।

पुनि जौना मालिनि कै बारी, उतरे राजकुमार।
मालिनि पुहुप लिए भरि डाली, कीन्हा आइ जोहार ॥३८२॥

---

[३८०] १ फुनि ही बंध भा०।

[३८१] १ निज एक०। २ परइन भा०।
३ जनु मन महँ सो दहुँ बाहर आए भा०।

[३८२] १ सेवावा एक०।

पुनि पूछै जौना कहँ राऊ, बिस्मै नगर कहौ केहि भाऊ।
हरखवत कोइ काहु न देखी, कारन कौन दुखी सब पेखी।
जौनै कहा सुनहु नर नाहा, बिस्मै नगर बात मोहि पाहा।
बिक्रमराउ नगर येहि राऊ, रानिहिं रूपमजरी नाऊँ।
बिक्रम तेज अनल जे बरई, सूरजबस जेहि कलि[1] उद्धरई।

पुत्री एक अत कै तेही, कुल लीन्हा औतार।
नाम तासु मधुमालती, तीनि भुअन उजिआर ॥३८३॥

बिधि चरित्र कुछ ऐस भा आई, वोहि के हाथ भई बौराई।
वोहिकै माय सकती वोहि खोई, पछी रूप ते कुटुब बिछोई।
ता दिन ते राजा औ रानी, बिस्मै बहुत तजा अन पानी।
नैन दिस्टि जो रोइ बहाई, जगत्यौ हेरि हेरि ना जाई।
राज नगर बिस्मै जे होई, हरखवत तेहि नगर न कोई।

सभ घट कर जिउ आहै, मधुमालती येहि गाँउ।
सो जिउ गौ सरीर तजि, तेहि गुन नगर बिराउ ॥३८४॥

जौना कहै सुनहु नरपाला[1], जा दिन हुते गई वोह बाला।
तब से नगर बिसूरा परा, सुख अनद घट घट ते हरा[2]।
माता पिता जे भयौ बिभेसा, जस बिनु जीउ कया है सेसा।
ता दिन ते मैं फूल न गाथे, फूल गाथि बाँधौ[3] केहि माथे।
जेहि निति गँथै पुहुप कर माला, बिधि हरि लीन्हा पहिरनहारा।

जौना बचन सुनि कुँअरी, कुँअरहिं लीन्ह हँकारि।
जौ तुह अग्या पावौ, एहि सौ करौं चिन्हारि ॥३८५॥

कुअर कहा चीन्हत हौ एही, कहेसि मोरि है बाल सनेही।
मालिनि कुअर निकट चलि आई, मधुमालती सौ भेट कराई।
तब जौना पिजरा कठ लाई, रोवत नैन सलिल खुटाई।
मधुमालती पुनि गहबरि रोई, रूप हीन औ कुटुव बिछोई।
लोयेन दुनौ नीर लै[1] बहे, रोइ रोइ दुख पाछिरा कहे।

---

[३८३] १ कुल एक०।

[३८५] १ यह हाला एक०। २ रहा एक०। ३ माधौ एक०।

पुनि गै राज कुअर जे वरजा[२], अब रोवौ केहि ग्यान ।
तुअ दुख रैनि[३] व्यतीत[४] भौ, परगास। सुख भान[५] ॥३८६॥

कहा कुअर तौ जौनहिं राई, राउर चाह जनावहु जाई ।
गै कहु मात पिता सुख चाहा, औ जो लोग कुटुव जेत आहा ।
जौ मालिनि येह अग्या पाई, रहसत बार राजा के आई ।
रानी राय बैठे हुत जहाँ, जौना चाह कही गौ तहाँ ।
विक्रमराय रूपमजरी, रहसे चाह सुनत रस भरी[१] ।

चद्र उदै मुख दुहु कर गहा, होतेउ जो दुख राहु ।
पूनिव भै परगास, सुनि मधुमालती चाहु ॥३८७॥

सुनि[१] रानी मालिनि पाँव परी, कहेसि उहौ बिधि होइहै घरी ।
वस[२] होइहै सो देवस त्रिधाता, जेहि देखब दुहिता मुख माता ।
पूछेसि नैन देखे तैं हही, कै रे चाह सुनि आयेस कहही ।
मालिनि कहा चाह सुनि रानी, नैन जो देखेउँ कहौं बखानी ।
पछी रूप तन मासु न मासा, चीन्ही मोहिं तौ रायेन्ह पासा ।

आपन नाउ कहेउँ जब, तब लागी कठ धाइ ।
हित जन कह दहुँ का कही, सतुरौ देखि छोहाइ ॥३८८॥

राज कुअर मधुमालती रानी, औ एक सग कुंअर सुरग्यानी ।
भागिवत अति कुल निरमला, सोमबस सूरज[१] की कला ।
औ जत सँग जन परिजन आहा, अरथ दरब बहु बरनौ काहा ।
दोसर देवस भयो मोर बासू, आजु[२] मोहिं पठए तुअ पासू ।
कहेसि जननि से तैं कहु जाई, डाइनि पुनि जग धीअ न खाई ।

अग्या दीन्ह तौ आयेउँ, उठि चलु तजहु बिखाद ।
देखु आइ गति ताहि की, हतेहु[३] जो बिनु अपराध ॥३८९॥

सुनत बात रानी उठि धाई, पाँव चली मालिनि घर आई ।

---

[३८६] १ नै ; २ प्रजा एक० (२ बरजा फारसी लिपि) ।
३ दुख एक० । ४ व्यापित एक० । ५ पान एक० ।

[३८७] १ घरी एक० ।

[३८८] १ पुनि एक० । २ कस एक० ।

[३८९] १ पूनिंव रा० । २ आपुन एक० । ३ हुती ।

औ पाछे पुनि बिक्रम राऊ, धाय[1] उठा नाँगेउ[2] दुइ पाऊ।
राजहिं देखि कुअर अगुसारा, आदर सौ आगे पगु धारा।
पाछे रूपमजरी चलि आई, जिन्ह जिउ ते काया बेगराई।
प्रान गये जो देखी कया, छाया रही जीउ उडि गया।

रोवत वोहि के सब रोवा, देखि उठै जिय छोह।
कुंअर नैन नीर भरि[3] आये, रूपमजरी के मोह ॥३९०॥

कहा कुँअर जनि रोवहु माता, स्रवन सुनहु कछु कहौं जो बाता।
पछी एक मैं पकरन पाई, बोलत सबद[1] बिचित्र सुहाई।
रही औ ग दिन तीनि न बोली, बहुरि कहेसि सबै दुख[2] खोली।
कहै मोहिं मधुमालती नाऊँ, बिक्रमराय पिता जग राऊ।
मातहिं नाम रूपमंजरी, कठिन हिरदै निरदै अति खरी।

और सबै दुख आपन, कहा दुक्ख सब रोइ।
सुनत बात सब वोहि कै, गइ सुधि बुधि मम खोइ ॥३९१॥

सुनि दुख वोहि उपजी चित दाया, छाडेउँ लोग कुटुब कै माया।
कहा न कछु चित चिंता करहू, करउ सोइ जासौ उद्धरहू।
उटवौं धरम पंथ चढि सोई, तुम्र उद्धार जाहि तैं होई।
छाँडा राजपाट सब चाऊ, उटवा दया लागि बौसाऊ।
बाचा बाधि पिंजरा सिर धरा, निसरिउँ राजपाट परिहरा।

पुनि रानी के आगे, पिंजरा धरा कुमार।
देखि डफारि जो रोई, कोखि अगिन कै झार ॥३९२॥

तौ पिंजरा उर लावा धाई, देखी दुहिता न रही रोवाई।
खन खन नेरै निरखै बारी, नैन नीर नहिं रही पनारी।
सखी कहा तजु रानि उदासा, करहु हरख मन पूजी आसा।
हती जो दुख कै दही निरासी, सूर उदै भा कौल बिगासी।
दुख जो अति तनु तरनिज[1] भाजा, सुख मजूर सिखर चढि[2] गाजा।

---

[३९०] १ राय एक० । २ लागेउ एक० । ३ गहबरि एक० ।
[३९१] १ चित्र एक० । २ सुख एक० ।

घर घर नगर बधावा, आनदित परिवार।
पुनि मधुमालती नौ कै, आइ भैंउ औतार ॥३९३॥

घर घर पुर पुर बात जनाई, गई हुती मधुमालती पाई।
हरखवत सब नगर उछाहा, पर आपन जहवो लगु आहा।
नगर जो रहा सबै दुख बौग, जस बसत ब्रिंदाबन[1] मौला।
रानी कुंअर पाँव सिर लावै, चरन रेनु जो सीस चढावै।
कहै पूत[2] पुरखारथ तोरे, निसरत जीउ रहा घट मोरे।

बहुरि कुअर कह रानी, सहित सबै समुदाइ।
तजि मालिनि की बारी, राज नगर लै आइ ॥३९४॥

हरखित सबै कुटुब परिवारा, जानहु आज औतरी बारा।
घसि चंदन सब मंदिल लिपावा, रात पटोर सबै तहँ लावा[1]।
आनि अनूप डसावन डासे, सुरग सोहाव सुबासित बासे।
कुअर पाट बैसावा आनी, अंग न समाइ देखि जो रानी।
पुनि मधुमालती राजकुमारी, रानी आनि आगु बैसारी।

रूपमजरी पढि कै छिरका, मधुमालति मुख नीर।
पहिलै रूप भई बर कामिनि[2], परिहरि पखि सरीर ॥३९५॥

---

[३९३] १ तजि एक०। २ तजि एक ०।
[३९४] १ नवरितु बन भा०। २ कुँअर भा०।
[३९५] १ छपावा एक०। २ भौ मधुमालतो एक०।

मधुमालती पंछी ते आदमी भई खंड

जब उधारी पखी सौ बारा, लै दरपन ते बदन निहारा।
पहिल रूप जौ आपन पावा, हाथ जोरि हरि के सिर नावा।
तब लै सखिन्ह तुरत नहवाई, वस्तर[1] अनूप आनि पहिराई।
तब अभरन पहिरावा आनी, अग न समाइ देखि जो रानी।
घरी घरी सिर आरति[2] वारै, औ खिन खिन[3] गहि अकम सारै।

पुनि राजा औ रानी, दुहुँ मत कीन्ह बिचारि।
ताराचद कुंअर कहँ, दीजिउ[4] राजकुमारि ॥३९६॥

पुनि राजा सब कुटुब हकारे, एक मत्र सब मते विचारे।
सबन्ह कहा धी बैस जौ होई, पिता गिरिह भल बोल[1] न कोई।
दुहिता जौ सजोग भै आवै, मात पिता घर सोभ न पावै।
नासै बहु धी कुल के नासे, घर धी भली न जम के बासे।
आठ बरिस लहि दुहिता बारी, नवएँ रहै पिता कहँ गारी।

सब गुन कुअर सपूरन, औ कुलीन कुल केर।
एहि ते करिअ सगाई, तुरत न लाई बेर ॥३९७॥

कुंअर निकट तब आई रानी, कहा बात जो चित हुति ठानी।
कहेसि मोहि भौ कुल की आरी, आफौ तुह मधुमालती बारी।
येह सुनि कुअर कहा सुनु माता, बाचा मोहिं एहि[1] बीच बिधाता।
बाचा बहिनि मोरि दुहिता तोरी, जस जननी वोहि कै तस मोरी।
सुपुरुस बचा प्रान सग जाई, जात जन्म औ रहत रहाई।

जौ मैं बाचा किअ एहिं सै, मोहिं प्रतिपारै सोइ।
जौ एहि मिलै मनोहर, तब हम कौ सुख होइ[१] ॥३९८॥

माता सो किछु कर उपचारा, बहुरि मिलै एहि पेम पिआरा।
देखा दुख अति जेहि की ताई, ढूढा बहुत बिकट बन ठाईं।

---

[३९६] १ बसन। २ पानी एक०। ३ गहि एक०। ४ अभएउ भा०।
[३९७] १ कहै भा०।
[३९८] १ तोहि एक०।

जगत फिरी जाके मदमाती, वोह जो मिलै मोरे मन साती।
अग्या करु सब परिजन राई, राजकुंअर कहँ ढूँढ़न जाई।
पुरखन्ह सुना बचन जो आहे, खोजत[1] मिलै जाहि जौ चाहे।

माता सो कछु उटवहु, कुंअर मिलै जेहि भाँति।
इन्ह दुहु तपत बुझाइ हिय, होखै मम जिव साति॥३९९॥

ताराचद उतर सुनि नारी, आदि अत लगि कहा बिचारी।
जा दिन चितबिस्रांव कै बारी, तुह जे दीन्ह दुनौ कंठ सारी।
ता दिन ते हम दूनौ प्रानी, दसौ दिसा आपन जिउ जानी।
रिस न कीन्ह किछु मनै तवाना, बुधि खोवा पर भयौ गियाना।
देखि न गा जो दुख भा भारी, वोह घर गौ येह इहाँ अडारी।

बासर रैनि निहारै, लाए नैन अकास।
सौरि उन्हारि समस्त निसि, रोवै परी निरास॥४००॥

सब दुख कुंअर परा जो आई, कहौ तौ सुनि पाथर बेगराई।
अपने करम[1] कुंअर दुख पायौं, अचक जानु बिधि टक्कर खायौं।
मो सौं कछु कीन्हा निरमोही, जौ न करै एहि कलि मो कोई।
हाथहु ते जो रतन अँडाई, ढूंढत बहुरि[2] कहाँ सो पाई।
अब पेमा पहँ काहि पठावौं, वोहि की खोज कतहुं मकु पावौं।

ताराचंद कुंअर सुनि बोला, तुरत पठावहु काहु।
मकु वह बिरह बिभूता, मिलि जा हो निरबाहु॥४०१॥

तब रानी बारी हँकराये, सुबुधि ताकि जन दौराये।
समाचार जत इहा क अहा, सो सब लिखि कागद पर कहा।
पछी भौ जौनी बिधि बारा, फिरी मनोहर लगि संसारा।
औ जिमि ताराचद बझाई, औ सग नगर महारस आई।
तेहि पाछे वह कुअर हिआरी[1], मिली भाति जेहि राजकुमारी।

जौ किछु बात इहाँ की, सो सब लिखा बिचारि।
औ पेमा को दै सहिदानी, तुरत पठावा बारि॥४०२॥

---

[३९९] १ औचित एक०।
[४०१] १ करत रा०। २ बहुत रा०।
[४०२] १ की वोरी एक०। २ तो ब्याही एक०।

पुनि मधुमालती माता की चोरी, बारिन्ह सौ बिनवै कर जोरी।
पेमा सौ अस कहेसि बुझाई, यह मोरे हिये आगि तोरि लाई।
जगत फिरी सखी मै पिउ लागी, पै न बुझानी हीवर आगी।
मकु कतहूँ तुअ खोज कुमारी, मिलै तो मिलै जोग मम बारी।
पाछिल दुख जो आपन कहा, जत दुख कुंअर बिरह ते सहा।

पछी रूप बरिस दिन, फिरी कुंअर की आरि।
सो सब तोसौं हे सखी, एक एक कहौ उघारि ॥४०३॥

सावन घटा जो घन घहरानी, सौरि नेह चखु ओनएउ[१] पानी।
अगम दुक्ख दिन जात न गाढ़ें[२], लोयेन गग[३] जमुन भै बाढ़े।
रकत आँसु धर परे जो टूटी, सावन भये ते बिरह बहूटी।
सेज रौन औ पेम उजाहा, धन ताके जग[४] जीवन लाहा।
मै पिक रूप फिरी सब बारी, नैन रकत तन बिरहै जारी।

सावन घटा तरग जल, दामिनि छपा अनंत।
कठिन प्रान जो घट रहत सखि हे बिछुरे कत ॥४०४॥

भादौं भर्मं भयावन राती, बिरह दौन मोहिं सेज सघाती।
सिंघ मघा बरिसै झकझोरी, पेम सलिल दुइ लोयेन बोरी।
आठौं भाव मदन के जागे, सातौ सर्ग वोनै भुइं[१] लागे।
चहुं दिस घुमरि घोर घहराने, मैं निजु प्रान गौन कै जाने।
भादौं निसि जेहिं पीउ न पासा, सखि कौन तेहिं जीवन आसा।

मैं अरंन बन एकसरि, बिरह अधिक तन पीर।
निलज प्रान अति पापी, तजत जो नाहिं सरीर ॥४०५॥

नौरत[१] परब कुंआर जनावा, सबै सदेसा समीर[२] सुनावा।
सरद रितू ससि सीत अकासा, सबको परब मोहिं बनबासा।

---

[४०४] १ अँगवा एक० । २ काढे एक० (∠गाढ़ेः फारसी लिपि) ।
३ गगन एक० । ४ जन एक० ।

[४०५] १ कै एक० ।

निसुही निसि सारस सर बोले[१], सुरग आइ ससार अमोले।
दरसु अगस्ति घटा जो पानी, भये ठाढ जलहर[४] अतिवानी।
औ अपरब पाख परब उजाहा, तरुनी जगत रितु मानै लाहा।
सखी हे घट मो बिरह दुख, बकति न आवै मुक्ख।
औ तापर लोयेन चुवैं, लिखै न पावै दुक्ख ॥४०६॥

कातिक सरद सताई बारा, अमी बुद बरिसै बिख धारा।
बिगसहिं कौंल भाँति ते बारा, जनि कुमुदिनी ससि उजिआरा।
सरद रैनि तेहि सीतल भावै, जेहि प्रीतम कठ लागि बिहावै।
मोहिं तन आगि बिरह परजारा, सरद चाँद मोहिं सेज अगारा।
ते बेलसहि येह देवस अमोले, जेहि सुख सेज रौन मीठ बोले।
सरद रैनि तेहि सीतल, जेहि पिउ कठ नेवास।
सब के परब देवारी, मोहिं सखी बनबास ॥४०७॥

अगहन भरि जोबन जग सीऊ, बहु[१] पावक हित काँपै जीऊ।
सुख दिन भाँति घटत जो जाई, दुख औ निसि तिलतिल अधिकाई।
औ तापर जे जुग सम भारी, मोहि बनबास बाजु तुह बारी।
कठिन पीर जानै येह सोई, पेम बिछोह परा जेहि होई।
येह बडि कुमति[२] सखी जो भई, पिउ बिछोह दुख मरि किन गई।
यह कलक सखि मोकहँ, दिया जो पापी प्रान।
जेहि दिन प्रीतम बिछुरे, सुनत न निसरु[३] अपान ॥४०८॥

पूस रैनि अति दूभर भारी, मैं अबला नहिं जाइ सभारी।
किमि निरबहै जुबति की जाती, पहरहिं पहर चारि जुग राती।
सब चित चाउ जो प्रीतम केरा, मैं अरन बन ब्रिख बसेरा।
आइ पूस रितु बेलसै नाहा, धन जोबन दुपहरि की छाँहा।
जोबन तुरै जात दौराये, बहुरि न फिरि आये पछताये।

---

[४०६] १ रितु एक० । २ सुमरि एक० । ३ अमोले एक० (पुनरुक्ति)। ४ भौ अथाह लहरी एक० ।
[४०८] १ भइ रा० । २ खोरि । ३ निकस भा० । ४ परान भा० ।

भाग फिरा जौ हे सखी, तौ मुख फेरा नाँह।
नातरि का मोहिं परिहरै, यहि[1] भरि जोबन माँह ॥४०६॥

दूभर माघ सखी सुनु बाता, पिउ बिदेस जो बिरह संघाता।
किमि निरबहौं दूभर सज्वाला[1], पिउ न सेज मैं जोबन[2] बाला।
किमि कै दुसह माघ मधु काढै, बिरह देवस जो तिल तिल बाढै।
बिरह डार पर बैसी बाला, रैनि गँवावै बरिसै सिर पाला।
माघ रैनि जो पिउ बिनु जाही, मरना भला न जिवना चाही।

सुख सखि पीउ[3] सग गा, दुक्ख रहा मोहिं पासु।
तापर काँती बिरह कै, खन हाडहिं खन मासु ॥४१०॥

फागुन सखी बिपति सुनु मोरी, विरह आगि तन जरि भौ होरी।
तरुअर पात कर रहा न नाऊँ, जानेहु जरे बिरह के दाऊँ।
भा पतझार जगत बन[1] बारी, खाँखरि भई सबै फुलवारी।
भा पखी सब बन बैरागी, देखि ढाक सिर लागी आगी।
जगत माहँ अस ब्रिछ न होई, जेहि[2] डार मैं लागि न रोई।

सखी हे अजहुँ न पिउ मिला, मुई बिसूरि बिसूरि।
जोबन तन[3] मोहिं लुहलुहा, झखर भई ते झूरि ॥४११॥

चैत करह निसरे बन बारी, बनसपती पहिरी नौ सारी।
चहुँ दिस भै मधुकर गुंजारा, पखुरी डार फूल अनुसारा।
फागुन हुते जो तरु पतझारे, ते सभ भये चैत हरिआरे।
मोहिं पतझार जो भा बिनु साईं, सो न सखी मौला अब ताईं[1]।
कुसुम सीस डारन्ह ते काढे, तरुवर नौ साखा भै बाढ़े।

दुख दै गये जो पीतम, जननि दीन्ह बनवास।
औ रबि आठौ[2] भै तपा, कै मम सिर परगास ॥४१२॥

सुन बैसाख सखि दूभर भारी, बन हरिअर मोहिं तन दौ जारी।
जेहि सुख सेज सखी हैं कतू, तेहि अनद बैसाख बसंतू।

---

[४०६] १ इस एक०।

[४१०] १ सियाला भा०। २ जे दूभर एक०। (पुनरुक्ति)। ३ साजन।

[४११] १ जनु एक०। २ केहि एक०। ३ था एक०।

[४१२] १ अँबराई एक०। २ और पिआतौं एक० (फारसी लिपि जन्यत्रुटि)।

पहिरि पुहुप जो रचै पिआरी, मैं बन डार डार गीव सारी।
बिरहा पलुहि पलुहि जिव दाहै, किमि कै मधु बैसाख निरबाहै।
बरन बरन निसरे[1] तरु पाता, कोइ पीत कोइ हरिअर राता।

मोर जोबन फरगत सुन सखि, बाजु पिआरे नाह।
फूली धरती झरि परी, जेंउ मालती बन माँह ॥४१३॥

जेठ जीभ सखि पिउ पिउ जपा, सबिता सहस तेज भै तपा।
बिरहा गुपुत हिये दौं लावै, प्रगटि आगि रचि सिर बरिसावै।
गुपुत बिरह परगट रबि दहई, किमि दहु दग्धि राति[1] निरबहई।
जेठ सखी मोहिं निस दिन दहना, सीतल सेज साइ जेहि लहना।
खिन बिस्राउ लीन्ह जहँ बारा, बिरह आगि तहँ उठै दँवारा।

एक बियोग दुसरे बनवासा, तिसरे कोइ न साथ।
चौथे रूप बिहूनी, मरै तो म्रितु न हाथ ॥४१४॥

दूभर सखी असाढ जनावा, चद न[1] चमकि गगन देखरावा।
कुंजल मेघ कीन्ह द्रिग फेरा, दामिनि जनु आंकुस तिन केरा।
भई जोर झींगुर झनकारा, डाढि उठी डाभ हरिआरा।
पिरथी सब अकुर[2] अनुसारा, पियहिं न पेम अंकुरा बारा।
रँचि रँचि छायेन्हि[3] मंदिल अवासा, बिरिख पखेरू कीन्ह नेवासा।

मोहिं सखी गौ दुख महँ, बारह मास असाढ।
अब किछु करु उपकार दैअ लगि, जे मोर होइ निस्तार ॥४१५॥

तोरे खोज कुंअर जौ होई, एक एक कहेहु मोर दुख रोई।
औ अस कहेहु नाह तुँह लागी, नौ खंड फिरी आपन जिउ त्यागी।
काहूँ खोज न पायेउं तोरा, निलज जीउ घट छूजै न मोरा।
जैसे बिरह रूप सौं राता, रूपै[1] तैस बिरह सौ साता।
काया ना पहुँचै तुह ताई, जिउ निसु दिन तुह संग गोसाईं।

---

[४१३] १ निकसे एक०।
[४१४] १ नारि।
[४१५] १ चपला रा०, भा०। २ अब बिरही कुँआर एक०।
३ छिरकै एक०।

जब सौ मैं तुह बिछुरी, मुई बिसूरि बिसूरि।
जिउ तोहरे चरनन्ह तर, जौ सरीर हुती दूरि ॥४१६॥

जब सौ तोर प्रीति जिम्र गाढी, सब सौ मैं परिचै छाँढी।
जैसे मोर जीउ तुह पाहाँ, अपनो जीउ देखु मोंहि नाहा।
पै येह पेम पीर हिय जेती, काढि लेउ मम हीवर सेती।
पेम समुद बूडिउँ सुन बाता, तोहि बिन कोइ न धीर क दाता।
चोरी नेह तुह लायेउँ साईं, परगट जीउ लिये वरिश्राई।

तन कोइला लोयेन रकत, जीभ ररै पिउ पीउ।
जगत फिरिउँ पिउ रूप होइ, हाथ लिये येह जीउ ॥४१७॥

जव सौ नैन समानेहु आई, रोवत मोंहि निसि वासर जाई।
अचरिज इहै जो सतत रोई, पै न गयेहु तुह चखु सौ धोई।
चिंता जेती अहै चित माँहा, तुह चिंता सब बिसरी नाहा।
सब चिंता चित्त सौ भागा, जब सौ तुह चिंता चित जागा।
तेहि मारग बल्लभु पगु ढारहु, सोइ पथ मोंहि रेनु कै ढारहु।

परग परग पै येह जिउ, कहहु तौ आरति देउ।
जौ बिधि घट मो यह जिउ सिरा, तौ मैं काह करेउ ॥४१८॥

भई[१] रेनु मगु पिउ तुह ताईं, मकु कँसेउ लागै तुह पाईं।
पेम बिछोह देहु जनि नाहा, करहु जो तुह भावै चित माहा।
जौ जिउ हुते निसरै जिउ मोरा, तौ जिउ हुते दुख जाइ न तोरा।
जौ सौ हाथ मारहु पिय मोही, सै जिउ देउ एक का तोही।
जौ कलि जीउ दिये निज मोरे, आजु देउं किन तोहिं निहोरे।

तू हम[२] जानहु बिछुरे, घटै बिराना[३] नेहु।
जेउ जेउ बाढै देवहरा, तेउ तेउ अधिक सनेहु ॥४१९॥

लिखि आफा दुख जहँ लगु अहा, और बहुत मुख आखर कहा।
पाँय लागि मधु बिनती कीन्ही, पुनि आयेस बारी कह दीन्ही।
बारी देवस चारि मों गये, पेमा बार ठाढि भै गये।

---

[४१६] १ तू पै एक०।
[४१९] १ राईं एक०। २ मत। ३ चिराना।

पेमहि गै प्रतिहार जनावा, मधुमालती कर बारी आवा।
सुनि मधुमालती राजकुमारी, उठि चलि आई जहाँ हुती बारी।

आगै भैं तब बारिन्ह, पेमहिं किया जोहार।
पुनि पाती दै कहा मुख आखर, उहाँ क सब[1] बेवहार ॥४२०॥

पाती पढत पेमा अति रोई, कीतेसि सेत स्याम चखु[1] धोई।
बहुरि कहै बारिन्ह सौं बारा, जेहि दिन हुती कुंअर अँडारा।
तेहि दिन हुते मैं खोज न पाये, दहु हैं जिअत कि मारि अंडाये।
मधुमालती कोख की जाई, तेहि देखे मोहिं मोह न आई।
जे न किआ दुहिता पर छोहू, पर जिउ वधत ताहि कत मोहू।

जै तेहि दिन होइहै जिउ ऊबर, वोहि सौ राजकुमार।
निस्चै आइहि मोहि पहँ, जौ न परा जमधार ॥४२१॥

उलटे का मोहिं पूछि पठायेन्हि, उन्ह पूछौ गै कहा अँडायेन्हि।
जौ रे जिअत होइहै जग माही, रही न बिन आये मोहिं पाही।
रोवै कुअरि सास उर काढी, वात कहै बारिन्ह सौं ठाढी।
वोइसहिं आइ सखी एक धाई, कहेसि कुअरि आवा तोर भाई।
जोगी एक है कुअर उन्हारी, अव बाहर भै चीन्हसि बारी।

मैं उन्हारि कुअर एक देखा, धाइ आइ तुअ पास।
निस्चै आहि मनोहर, काँछे[1] भेस[2] उदास ॥४२२॥

कुअर नाम सुनतै उठि धाई, तुरितै चलि[1] तब बाहर आई।
पुनि जौ डीठ कुअर पर परी, होवर मोह आगि परजरी।
पेमा धाइ कुअर पाँ[2] लागी, छाती बरी[3] पेम की आगी।
दया चित तेहि देखत होई, परिछाही विनु साथ न कोई।
मासु न रहा कया सखि रती, लागी जाइ हाड दुख काँती।

दुख दाधे विरहे जरा, घट मो अहै मिलन अधार।
पेम बिछोह होइ जनि, काहू जनम येहि ससार ॥४२३॥

---

[४२०] १ पेमा जो कस एक०।
[४२१] १ अरु एक०।
[४२२] १ किछुरे एक०। २ भेद एक०।
[४२३] १ मया गही। २ गिय। ३ बरी।

सुनतै राजकुंअर कै आवा, बाजा[1] चितबिस्राउँ बधावा।
पेमा पुनि कुंअर सग लाई[2], आगे किये मदिल लै आई।
कहेसि बीर अब काढहु कथा, सिध पूरी तुहँ गोरख[3] पथा।
सुख अनुसारि आदर कै लेहू[4], दुख कै उठि तिल अजुरी देहू।
बीती तुह दुख निसि अध्यारी, अब दुख अतर सुख उजियारी।
सतरहु[5] पेम अमोघ दधि, जिअ[6] अस गथ अहेरि[7]।
पार कुसल सौ उतरहु, सिधि साहस की चेरि ॥४२४॥

पुनि जो समाचार जत अहा, पेमै राजकुअर सो कहा।
औ मधुमालती लिखि जो पठावा, सो सब कुअरहिं बाँचि[1] सुनावा।
पुनि कागद मसि मागेउ वारा, पाती लगन[2] लिखै अनुसारा।
प्रथम उतपति करता की बाता, औ पुनि राजकुँअर कुसलाता।
और बात नहिं कहा विचारी, देखि जात हहिं कहिहहि बारी।
मैं का लिखौ कौन बिधि, कुअर आव मम ग्रेह[3]।
मासा मासु न तन रहा, रती रकत नहिं देह ॥४२५॥

मैं जाना तेहि दिन तू मारा, कै परबत कै समुद अँडारा[1]।
मोहिं न कुंअर केर हुती आसा, बिधि लै आउ आजु मोहिं पासा।
मैं वोहि जिअत देखु निध पाई, येहि आँतर तुअ पाती आई।
अगिन माँह जस जरै परानी, अनचीते जनु[2] बरिसै पानी।
तस दुख भौ कुंअर एहि बारी, तू का जानहि हे बरनारी[3]।
जौ निस्चै जिउ माहे, तै उटवा येह काज।
आइ निकट भै उतरहु, सै अपने जो साज ॥४२६॥

जौ हम निजु जानौ सत भाऊ, एहि दिस पुनि करु नेवटाऊ।
तौ निस्चै जे करिहौ काजा, निकट आइ कै उतरहु राजा।
येहि कलि मंत कालि कर काजू, सो सयान जो करि ले आजू।

---

[४२४] १ बाला एक० । २ सौं कहई एक० । ३ अपुरब रा० ।
४ आसरौ कीन्हा एक० । ५ पैरहु रा० । ६ जीवा रा० ।
७ अघेरि भा० ।

[४२५] १ बात एक० । २ उतर भा० । ३ माँह एक० ।

[४२६] १ पवारा भा० । २ सिर भा० । ३ तस सुख भयेउ कुँवर सुनि पाती । डरिउँ हरखि जनि बिहरै छाती रा० भा० ।

पेमै पाती उतर लिखि दीन्हा, औ मधुमालती कै कछु चीन्हा।
बहुरि कुंअर दुख बात सवाई, मधुमालती कहँ लिखि सो पठाई।

कहा कुअर बारी से, पाँव लागि कर जोरि।
दिअहु गुपुत मधुमालती, लै दुख पाती मोरि।।४२७।।

प्रथमहिं सुमिरौ नाम गोसाईं, जो भरि पूरि रहा सब ठाईं।
दूजे नाम लेउ तेहि केरा, उतरब पार लागि जेहि बेरा।
अब प्रीतम सुनु बिनती मोरी, जिउ घट रहा सो लीन्ह अछोरी[१]।
काह करी जौ जिउ पर आवसि, तौं रे मोहिं भले देखै पावसि।
मैं तो ऐस अही जस चही, सो प्रतिपारु वचन जे कही।

मति भावंता बिछुरै, बरु जिउ तजै सरीर।
कोटि म्रितु नहिं पूजै, खन एक पेम की पीर।।४२८।।

रूप क सिस्टि जहाँ लगु आई, मैं सब अपने जीउ देखाई।
सब परिहरि मैं तोकहँ मन लावा, सबै सिस्टि तोहिं ऊपर पावा।
अस भा लिपित मोर जिव तोही, सुमिरन तोर बिसरि गा मोही।
अस भौ तोहिं चित रूप घ्यानी, घट मो सासै बाट भुलानी।
तोर जीउ तोहि सेती बारा, का जानहु पर पीर की सारा।

तोर जीउ तोहिं सेती, का जानहि पर दुक्ख।
कठिन पीर तिन्ह पै जाना, जो देखा तोर मुक्ख।।४२९।।

अचल अडोल है जग जेती, बर कामिनि ते पाथर सेती।
तोर जीउ पाथर सम बाला, पेम नेवास संतत किमि हाला।
चित धरि छोहु न होहु दुखारी[१], हिये कठिन मुँह कुँअर रसारी।
नरिअर तैस प्रीति करु बाला, ऊपर करकस हिये रसाला।
जौ तोर दुख साथी है मोरा, तौ रे सहा कठिन दुख तोरा।

सपने जौ जिउ पावौ, बार तोहारे ठाउ।
जागे बहुरि न आवै, समुझि कया बिसराउ।।४३०।।

जौ दरपन लै देखसि बारी, अपने दुख भै जाहु दुखारी।
आपु देखि ब्यापै तन पीरा, जरै मदन[१] कै आगि सरीरा।

---

[४२८] १ अँजोरी।
[४३०] १ दयारी रा०।

अपने वोखध उपज[२] बिकारा, अपने बिरह उठै तन झारा।
अपने फाँस परे गीव आई, आपु अपान देखि मुरछाई।
जौ आपन दुख[३] देखहु बारी, तौ जानहु दुख बात परारी।

बदन देखाउ और कहँ, सौ दरपन लै देखु।
दहुँ तोरै दुख कै सहै, सब जग देखु बिसेख ॥४३१॥

बारी पाती उतर लिखि पावा, हरखित भै सुख चाह जनावा।
सुनत मनोहर कै कुसलाई, भई महारस नगर बधाई।
ताराचंद कुंअर हकराई, रानिहिं पाती बाँचि सुनाई।
पाती पढि जो कुअर अस कहा, बिधि सो कीन्हा जो चित रहा।
करियै बेगि चलै कै साजा, बिलब न लाई कीजी काजा।

पाँच सबद घन वाजे, नेवता सब परिवार।
सुदिन साधि कै कीन्ह पयाना, बिक्रमराय भुआर ॥४३२॥

---

[४३१] १ बदन एक० । २ नाहिं एक० । ३ दुख एक० ।

बिक्रम चले पेमा पास खंड

चले साजि दल बिक्रम राऊ, चहुँ दिस परा निसाने घाऊ।
सबद निसान उठा अदोरा, सेस सहस फन नाक सँकोरा।
सै दर भौ कुंअर असवारा, आगे घोर धरे थनवारा[1]।
रानिन्ह के साजा चडोला, चली अनद करत कल्लोला।
जननी कोर मधुमालती बैसी, जरित माहँ जोनायेक[2] जैसी।

चला सबै दर परिगह, परजा पौनि सवाइ।
हय गय दल के खेह ते, सूरज गये छपाइ ॥४३३॥

चलत देवस दस बाट[1] खुटानी, चितबिस्राउँ आइ तुलानी।
ऊँचे दिये तानि सरवाना, बाजे सबद उतग निसाना।
किए खरे सब महल जे आहे, कथा बढत जेहि मैं न सराहे।
पुनि राजै सब लोग बोलावा, बुड्ढे[2] राये सबै हँकरावा।
ताराचद माझ बैसारा, सब मिल कै घर करै बिचारा।

पुनि एक मत भै मन्त्रिन्ह, कहा राय सौं जाइ।
चित्रसेनि औ पेमा, दुनहु पठावहिं राइ ॥४३४॥

राजै इहै मता जो भावा, चित्रसेनि कहँ जन दौरावा।
गुपुत लिखा मधुमालति पाती, पेमा के बहु भाति बीनती।
औ जौ रूपमजरी केरी, गोचर बिनती लिखि बहुतेरी।
पेमा कालि इहाँ तोहिं चाहौं, आवहु बेगि काज निरबाहौं।
पाती लै तहँवा गौ बारी, पिता ग्रिह जहाँ राजकुमारी।

जाइ जनावा पेमहिं, सीस नाइ प्रतिहार।
लिये बिक्रमराये की पाती, खरे बारि है बार ॥४३५॥

पूछा बात भाँति बेवहारा, पुनि बारी जो कीन्ह जोहारा।
पाती पुनि कर बारी दीन्हा, मुख सौ बात कहै जो लीन्हा।

---

[४३३] १ रस केला एक०। २ मधुनायक रा०।
[४३४] १ बात एक (∠ बाटः फारसी लिपि)
२ बड़े मा०, भा०। बिरिध रा०।

तब जो कुअर मनोहर राई, पेमै पढि सुख चाह सुनाई।
तब पेमै जो पितहिं सुनावा, विक्रमराये क धावन आवा।
जौ हम तुह पठवा एक राई, आपु निकट भै उतरे आई।

चित्रसेनि जो पाखरे, सुनत बिक्रम केर हंकार।
पेमा पुनि सब सखी सग, भै पालकी असवार ॥४३६॥

चित्रसेनि कै चले पयाना, भए संग सहस एक परधाना।
मंत्री महँथ अमनैक चले, पंडित गनिक चले जो भले।
औ पेमा संग सखी सब चली, अगनित औ जोबन कली।
चित्रसेनि जबहिं बारहिं[१] आऊ, गै रानिहिं प्रतिहार जनाऊ।
सुनि बिक्रम चलि आउ दुआरा, भौ दूनहु त्रिप हेतु अँकवारा।

औ पुनि निकट पाट पर बिक्रम, राजहिं दीन्ह नेवास।
पेमा जाइ मदिल महँ पैठी, जहाँ सबै रनिवास ॥४३७॥

औ राजै सब परिजन राये, पडित गनिक गुनी जो आये।
तहाँ जो ताराचंद बोलाऊ, आनि सभा ऊपर बैसाऊ।
चित्रसेनि बिक्रम सौं कहा, पडित कहा सुनहु हम पँहा।
जौ मति कै करियै कछु काजा, निस्चै सिद्ध काज तेहि राजा।
तौ हरिगुन पाडे हंकराये, कहा देखि गनि रासि मेराये।

सुभ असुभ[१] बिचारिय, लग्न महूरत बार।
जन्म जन्म निरबाहै, पेम प्रीति बेवहार ॥४३८॥

गनिकन्ह गरह कुंडली कीन्हा, बारह रासि ताहि मे दीन्हा।
औ जो नौ ग्रह है जहा, लिखेनि बिचारि पडितन्ह कहा।
जन्म दसा दुऔ बिध सारी, अन्तर दसा जो गहा बिचारी।
सुभ महूरत गनि दिन साधा, बार नक्षत्र बुद्ध अनुराधा।
नौमी जेठ पाख उजिआरा, सुभ लग्न[१] गनिकन्ह बिचारा।

राज सोहाग जो लछमी, सदा सुक्ख निरबाहु।
गनि गुनि गनिक बिचारा, मधुमालती कर ब्याहु ॥४३९॥

---

[४३७] १ चलि एक०।
[४३८] १ सभा जो सभै एक०।
[४३९] १ कुंभ।

अस्वनि[1] लग्न पंडितन्ह धरी, सुभ बिचार महूरत धरी।
पुनि उठि राये महल मो आवा, रानी सौ कहि बात जनावा।
सुनि रानी कहु मगलचारा, हरख निसान बजावा बारा।
पेमा सघ सखी जो आईं, ते सब सुरंग चीर पहिराईं।
पुनि कह चित्रसेनि तें राजा, साजहु गै अपने दिस साजा[2]।

बहु आदर से बिक्रम, चित्रसेनि बहुराइ।
रानी पुनि पेमा के समदी, बहु गोचर गिव लाइ ॥४४०॥

औ जेहि बार लग्न ठहराई, पेमा सौ सब कहा बुझाई।
चढि पालक तब गौनी बाला, चित्रसेनि सग पिता भुआरा।
नगर बजावत पैसे आई, रचा कुँअर के ब्याह बधाई।
राजा अग्या सब हाट[1] सँवारी, कुसुंभी पटोर दुकान वोहारी।
कंकन राजकुंअर के बाधा, औ परिजन जे राखा राधा।

कुंकुह मेरै सुगंध जो, अबटन लावहिं गात।
सात देवस के लगन में, कुंअरहिं बीतै जुग सात ॥४४१॥

---

[४४०] १ गनि गुनि। २ काजा।
[४४१] १ महल एक०।

मधुरै सब रनिवास सँवारी, कुंअरहि चली ब्याहे नारी।
पेमा सग सखी सब कैसी, साठि सखी साठिउ एक बैसी।
कोइ सुखासन कोइ चडोला, कोइ बैस[१] कोउ जोबन भोला।
जोबन उत्तम करै रस केली, उठत कोपल जेव बन बेली।
कौल बदनि नौ तन सब बारी, नैन कटाछ जो हनै कटारी[२]।

कोइ उनमद भरि जोबन, कोई बैस[३] अभोल।
पाँच एकादस कीन्हे, हीवर रतन अमोल ॥४४५॥

साझ होत गौगुधुरी बारा, आइ बरात राज दरबारा।
जनवासा जहँ राये सँवारा, तहवाँ आनि बरात उतारा।
माडव ऊँचा त्रिप किआ खरे, तेहि तर पाट पटोरा परे।
आले[१] चोवा पात मगाये, बदनवार कै चहुँ दिस लाये।
सगुन कलस लै सिर दुइ जनी, आईं गावत नखसिख बनी।

पुनि नेवछावरि आरती, सासु जो दीन्ह पठाइ।
बारि कुँअर सिर पेमै, चहुँ दिसि दई छतराइ[२] ॥४४६॥

पुनि बिक्रम दुइ बिप्र पठाये, लै कुअरहि सुखसाला आये।
कुंअरहि आनि माझ बैसारा, बाए आनि ठाढ किहु बारा।
बेद भनै बाँभन बेदवाँसी, होम करै आहुति चौरासी।
कुंअरहि लाइ पढै बरनारी[१], जन्म गाठि दुहुँ आँचर सारी।
कुअरि कुअर कठ मेला हारा, कुंअर हार मधु गीवा सारा।

---

[४४५] १ संजोगि भा०, रा०। २ हतियारी मा०। ३ अलप भा०।
[४४६] १ आमे मा०, हीरा। २ लुटाइ। इसके पश्चात् भा० तथा० रा० में निम्न छन्द पाया जाता है –

बहुरि जनीं दस पाछें आईं। सुरस कंठ मातहिं गरियाईं ॥
चित्रसेनि कहँ समधी नाएँ। गारी देहिं हरषि रस माएँ ॥
पेमा कहँ ताराचन्द लाईं। गारी देहि औ करहिं भँडाईं ॥
औ मधुरा कहँ समधिनि जानी। गारी देहिं औ करहिं न कानी ॥
औ मधुमालति चेरि थपाईं। पेमा कहँ गरियावहिं जाईं ॥

पुनि किछु दरब देवाएउ, कुँवर आन्हहिं अनुमान।
हरख अनन्द किलोल सों, फिर सब करत बखान ॥

पुनि दै भाँवरि कुंअर पानि पर, वर कामिनि कर राखि ।
कन्यादान कीन्ह न्रिप बिक्रम, देव पितर धै साखि ।।४४७।।

भा बिआहु साते दुइ हिया, धनि बिधना अस देवस किया ।
बहुते दुख बहुतै औसेरी, बिधना आस पुरी दुहु केरी ।
धन धन पूर्ब करम जग जेही, अकसमात मिलि जाइ सनेही[1] ।
लै उठाइ कुअरहिं गौ तहाँ, सुरति सैन सिंघासन[2] जहाँ ।
बहुरि सखी बाला फुसिलाई, सुरति सैन रस लै बैसाईं ।

किछु आनद मिलन कै, किछु भै हिये धरेइ ।
प्रथम समागम बाला, दिस्टि न सौह करेइ ।।४४८।।

कुंअर बाँह कामिनि गहि कहा, हिये सेरान जो रे दुख रहा ।
अबहूँ तज पाछिल निठुराई, परिहरि लाज लागु गीव धाई ।
लाज छोडि कह रस सौ बैना, सौह भये तब दुहुँ के नैना ।
अहे जो लोचन आस तिसाये, दुनहु पिआ रस रूप अघाये ।
दगधि दुनौ के हिये बुतानी[1], मिलन नाव जे तपत सिरानी ।

नैन नैन ते लोभे, मन ते मन अरुझान ।
दुइ हीवर जो एक भौ, औ भै एक परान ।।४४९।।

साते पिअत रूप चखु दोऊ, रबि ससि मिलि एकै भौ दोऊ ।
मुख मुख सन सौह नहिं करई, प्रथम समागम उर थरहरई ।
कुंअर अधर अधरन्ह सौ जोरै, कुंअरि बिमुख भै भै मुख मोरै ।
दीप भरम मुख फूकै बाला, अधिकौ करै रतन उजिआरा ।
दुऔ कर लै लाजन्ह मुख झाँपै, अधर दसन कै खडित काँपै ।

एक वोय परम पिआरी, औ भै परथम सग[1] ।
तिसरे लाज ब्यापेउ[2], पलकन्ह दुहुँ रति रंग ।।४५०।।

तौ ओलत भै सखी एक कहा, बाला किये कोक पढि कहा ।
चौंकी मधु सुनि बोल गत हँसी, पै बितु लाज दुऔ बिच गँसी ।

---

[४४८] १ जस हेरी एक० । २ सुखसाला रा०, भा० ।
[४४९] १ जुडानी भा० ।
[४५०] १ भौ प्रीथि संगम एक० । २ पिआपीउ मा० ।

जौ गुन लाज प्रगट रह खोवा, लाज करौ तौ गुन हर गोवा।
यह उपखानि जानि मन हँसी, गारुर ससुर कुठाहर त्रँसी।
तब गज कुंभन्ह आकुंस परे, बिद्रुम अधर क्षीर रस भरे।

जल जोबन औगाह देखि कै, ढाढस करै न चित्त।
कनक कलस दुइ हीवर, लै जो लाज सरित्त ॥४५१॥

सुरत पेम रस अकम भरेऊ, रतन अबेध बेध जनु परेऊ।
कचुकि तरकि तरकि उर फाटी, उधसी सिरहिं माग औ पाटी।
सेंदुर मिलिगा तिलक लिलारा, काजर नैनँ पीक रतनारा।
कठहार गिवहार जे टूटे, दलिमल दलै देह सौं छूटे।
बहुरि फूटिगौ अम्रित खानी, भौ साती जो सालति रानी।

काम सकति डर जीती, एकही एक न टार।
तब गै दुऔ साँति भौ, जब गगन ते छिटकी धार ॥४५२॥

सुनत सैन सुख रैनि बिहानी, बिरह दगधि दुहुँ हिये बुतानी।
राजकुंअर उठि बाहर[1] आवा, कै अस्नान मलै तनु लावा।
मलया लाइ[2] फिरायेसि* बागा, दीन्हा पुन्य जानि किछु त्यागा।
बाला पुनि गै सखिन्ह जगाई, निसरी जनु सुख[3] समुद नहाई।
लै सब सखिन्ह सिंगार कराई, भूखन बस्तर[4] आनि पहिराई।

पूछहिं सखी पीरम रस, रस रस लहरै लाइ।
कहु हम सौं रस बात रैनि की, सपत जौ फुर न कहाइ ॥४५३।

---

[४५३] १ बारहिं रा० । २ केस झारि रा० । ३ दुख एक० ।
४ बसन । ५ सूर एक० ।

*बागा फिराना—मुहावरे के रूप में प्रयुक्त प्रतीत होता है=बागा पहिराना। यदि यह मान लिया जाय कि यह फारसी लिपि से नागरी लिपि में करने के कारण त्रुटि हुई होगी तो पाँचवीं पंक्ति में वही त्रुटि होनी चाहिए थी। फिर भी सम्भावना यही है लिपिक को 'बागा' शब्द से बाग=फुलवारी का भ्रम हुआ हो और वह 'पहिरावा' को 'फिरावा' लिख गया हो। यही पाठ मा० प्रति में भी है। रा० तथा मा० प्रतियाँ फारसी लिपि में हैं। अतः उनके पाठ स्वाभाविक रूप से प्रसंगानुकूल ही निकाले जायँगे।

पेमा पूछ दुऔं कर गही, कहु सो बात रैनि निरबही।
औ सब सखी पूछैं फुसलाई, कहहु प्रीतम किमि गियँ लाई।
लाज न कहौ कहहु मुख खोली, किमि पिअ सौ भौ प्रीति नवेली।
कुंअरि माथ तरहुँड कै जोवै, कहै न बात लाज मुख गोवै।
तौं तौं सखी करैं बहु आरी, कहहु न बात पेम रस बारी।
बहुति भाति फुसलावहिं, पूछै कै कै आरि।
हम सौं गोइ सब बातै, पुनि केहि कहेहु उघारि ॥४५४॥

तब[1] बर नारि अमी रस खोला, सुनहु कहौं सब बात अमोला।
भेद न आपन दीजै काहू, बौरिहु का खति दै जो लाहू।
धरा गोवाइ पेम की मूरी, जनि कहि भेद चढै जग सूरी।
देउ भेद आपन सब ताही, कहिहौं महल भेद लै काही।
फूटे कुंभ[2] भरे जो पानी, खिन खिन बुन्द बुन्द कै हानी।
लिखनी लकरी बन की, देखहु वोइ का कीन्ह।
जौ लगि माथ रहा धर ऊपर, भेद न काहू दीन्ह ॥४५५॥

---

[४५५] १ पुनि एक० । २ कुंड एक०

दाएज खंड

ताराचद महथ औ राजा, भोर होत मिलि दाएज साजा।
पीठि बाहि पाखर सोनवानी, आये है सै सहस पलानी।
औ गज मैमत्त सिघ समाना, दाएज दीन्ह जगत सभ जाना।
अभरन सभै जरावन जरा, झाँपी सहस झाँपि कै धरा।
सोन रूप बहु लादि चलावा, मानिक मुकुता गनत न आवा।

कपरा नाउँ जहाँ लगि, जो मौहिं[1] कहै न जाइ।
बसह सहस दस लादि कै, आगे दिआ चलाइ ।।४५६।।

चेरी सहस सो सग चलाई, जेहि देखि परै चाँद मुरछाई[1]।
औ सग भईं ते साठ सहेली, लरिकाई सग साथ जो खेली।
बरियाती जेत गोहने लाये, बागा[2] सौ सौ तिन्ह सभ पाये।
भाजन सोने रूपे के दये, पाट पटबर गनत न आये।
पालकि आठौ टूक जरावा, सुरग पटोरे बीनि उचावा।

अगर कपूर जो परमल, कुंकुम सादि[3] जवादि।
बदाम छुहारा और चरौजी, बसह[4] सहस दिय लादि ।।४५७।।

दायेज सब जौ लादि चलावा, उठि कै कुअर कुंअरि पहँ आवा।
पूछै कौन महल तोर भाई[1], हम सँग चलहु देखावहु जाई।
सीस धरौ दुइ पावन्ह[1] लाई, चरन लेंउ दुइ नैन चढाई।
मैं आपन जिउ बोहि पर वारौं, चर्न रेनु बरुनिन्ह सौं झारौं।
एहँ लागि हम सहा दुख भारा, मैं अब करौं जीउ बलिहारा।

देखि रहेउ किछु नाही, जो आरति लै जाऊँ।
जिअ अतिकिंचित थोरा, आरति देत लजाउँ ।।४५८।।

---

[४५६] १ कवि रा०।
[४५७] १ मुख झाईं भा०। २ झाँगा भा० रा०।
३ साख भा०। ४ भैंस भा०।
[४५८] १ आई एक०।

यह सुनि ठाढ भई तौ बारा, कुंअरहिं लै आई जहँ तारा।
ताराचंद उठि भौ खरा, धाइ मनोहर पाँव लै परा।
जौ जौ ताराचंद उचावै, धाइ धाइ सिर भुइँ लै लावै।
कहै किहै तैं मोहिं लगि जैसा[1], कलिजुग मो कोइ करै न ऐसा।
छाडेहु राजपाट मोहिं लागी, जरत सेराये हीवर आगी।

तुह मोर[2] जिउ लै आये, परिहरि आपन राज।
जौ मैं जीउ करौं न आरती, तौ आवै केहि काज ।।४५६।।

बिनती एक करौं कर जोरी, पुरवहु कुंअर आस तैं मोरी।
जौ लगि चलै की आयेस पावहिं, एकहिं ठाँव भैं दिन बहलावहिं।
बिधना रखै इहाँ जब ताईं, हम तुह दुनौ रहैं एक ठाईं।
सब कोइ इहाँ अहै सदेसी, हम दुनहू जन पै परदेसी।
जौ रावरि अग्या मैं पावौं, गै राजा सौं बात जनावौं।

ताराचंदहि बात सुनि भई, संग मिलि दुनौ कुमार।
रहसत आये दुनौ जन[1], राजा बिक्रम के दरबार ।।४६०।।

कुअरन्ह की आउब[1] सुनि बारा, सो आये चलि राज दुआरा।
तौ गै कुअर बिनती औधारी, कहै राउ मन इछया तोहारी।
नगर महारस चितबिस्राऊँ, घर तोहार आहै दुऔ ठाँऊँ।
मन मानै पुनि तोहरौ जहाँ, मिलि कै रहौ दुऔ जन तहाँ।
इहाँ दुऔ नैनन्ह तुम जोती, उहाँ नैन सीप गज मोती।

तुह दुनहू कर जिव जहँ मिलै, तहँ तुह सग रहाहु।
ई सभ राज पाट दुऔ कर, सुख सौं केलि कराहु ।।४६१।।

जौ राजा सौं अग्या पाई, दुऔ कुंअर बहुरे सिर नाई।
माता पिता सौं मिली बारी, चढी चलन चडोल कुमारी।
पाछे चली ते साठि सहेली, जन्म संघातिन्ह साथ जे खेली।
अगनित सखी जो जोबन बारी, सबै चली जो साथ कुमारी।
जोबनहू ते संग जो आईं, चित्रसेनि घर पैसु बजाईं।

---

[४५६] १ ऐसा एक० (पुनरुक्ति)। २ सिर एक०।
[४६०] १ हुलास सौं रा०।
[४६१] १ आयेस एक०।

करुना मैं न बखाना, समदति राज कुमारि।
दुश्रौ कुँअरि जब चलिहैं, तब किछु कहब सवारि ॥४६२॥

पैसि नगर बरात जब आई[1], छतिसौ पौनि आरती लै आई।
घर घर बाजा नगर बधावा, सुरस कठ सब गायेन गावा।
बाहर नगर पटोरन्ह राता, भीतर केरि कहौं का बाता।
मंदिल जहँ सुख सैंन सँवारी, मधुमालती लै तहाँ उतारी।
सुखसाला भल[2] महल उतारा, तहँ लै ताराचद उतारा।
भीतर मधुमालती जौ पेमा, दूनौ सुख बेलसाहिं।
बाहर ताराचद मनोहर, दूनौ केलि कराहिं ॥४६३॥

———

[४६३] १ बजाई भा०, रा० । २ एक रा०, भा० ।

भोग भुगित जौ प्रीति नवेली, दूनौ जन मानत रसकेली।
खाइ खेलि जो दिन बहलावै, रैनि नीद सुख सेज ते पावै।
निमिख न आपुस महँ बेगराही, संतति दुवौ एक संग रहाही।
कबही हेगुरी[1] होड लगावहिं, कबही अहेरे[2] जिउ बहलावहिं।
पेमा जो मधुमालति बारी, भीतर दूनहूँ रची धमारी।

सदा दुनौ सुख बेलसैं, दुक्ख न जानै बात।
बाला सजि नौ जोबन, कै सिर ऊपर तात ॥४६४॥

दिन एक कुंअर पारधी राये, राजा हँकार सुनत उठि धाये।
कुंअर पारधी सौं अस कहा, इहाँ अहेर निअर कहुँ अहा।
कहा इहाँ सौं कोस अढाई, अति अनेग सांवज है राई[1]।
झँख मिरि औ महिख बराहा, साँबर लगुन रोझ बहु आहा।
कहा कुंअर जन पाँच पठावहु, घात होइ तौ आइ जनावहु।

जैसे कालिह पहर एक, मन आवहिं बहलाइ।
जाइ पारधी अस कहु, कालि न कोइ कहुँ जाइ ॥४६५॥

सब[1] पारधी आये सबेरा, घात भये उठि चले अहेरा।
सुनतहिं सबै अहेरिआ आये, सोनहा बाघ औ चित चलाये।
बागुर जाल कहारन्ह काधे, धनुखवार[2] चले सर साधे।
हाकि कंदला सावज बाहे, अरु आगे जो धानुख उजाहे।
भीतर हाकन्ह कीन्ह करेरे, बाहर दीन्ह बागुर चहुँ फेरे।

पेड़ पेड़ गै धानुख लागे, औ लावा बन आगि।
धनुखन्ह के सिर ऊपर, आये जन्तु[3] सब भागि ॥४६६॥

---

[४६४] १ वोइ रे एक० । २ वोइ रे
[४६५] १ बहुताई भा०, मा० ।
[४६६] १ भोर । २ धानुक । ३ झाँख ।

सब धनुकार जे काड बिसारा, मारे जन्तु[१] जो भवैं बिकरारा।
कतहुं गैंड धाव बौराने, कतहुं रोझ लोटैं महुराने।
भवैं भालु बघायेन्ह बिकरारा, परे महिख डारहिं घुरधारा।
बहुत म्रिगा बघचीते मारे, सोनहा बहुत बराह पछारे।
बहुत जतु जिअत लै आये, बहुत मुये माहुर महुराये।

पहर एक महँ खेलि अहेर, सबै कटक घर आइ।
दुनौ कुंअर जल क्रीडा, लागे सरित नहाइ ॥४६७॥

कहहिं तेज अति है रबि केरा, अबहिं जाबै घर सीतल बेरा।
जल क्रीडा दोउ रहे लोभाई, पेमा इहाँ कुअरि पहँ आई।
कहा कि आजु कुअर घर नाही, चलहु चित्रसारी झूलहिं जाही।
आजु मोर मन अस भा आई, झूलहिं गै जो पेंग अघाई।
पुनि हम दाउँ कहाँ अस पाइब, बहुरि कि नैहर झूलै आइब।

पुनि मधुमालती रहसी, उठि गौनी लखराउँ।
सग सखी सब धाईं, सुनि झूलन कर नाँउ ॥४६८॥

पहिले पेग चढ़ि पेमैं बारा, गावैं सुरस कठ झनकारा।
झूलत चिहुर काहु के छूटहिं, काहू के हार उरहिं जो टूटहिं।
उघरि सीस बहुतन्ह के जाही, बहुतन्ह उर आँचर बिहराहीं[१]।
झूलहिं धरे पेंग की डोरी, करि जु लाइ टूक दुइ जोरी।
झूलत दिस्टि मो आवै कैसी, जनु बेवान पर सुरहिनि बैसी।

नौ जोबन उर उपनत, बालापन कै साँधि।
झूलहिं सब लडबावरी, कटि अंबर कसि बाधि ॥४६९॥

चौथ पहर सीतल भौ बेरा, भयौ नितेज तेज रबि केरा।
ताजी साजि आनि थनवारा, दूनौं कुंअर भए असवारा।
अस दुहु तेज तोखार चलाये, राजबार निमिखि मो आये।
कहा कहाँ दुऔ राजकुमारी, झूलन गईं दुऔ चित्रसारी।
सुनेन्हि जौ राजकुंअरि घर नाही, सूने मंदिल कहेन्हि कत जाही।

पुनि एक सग दुनौं जन, चलि आये चित्रसारि।
सखी साथ तहँ झूलै, बिक्रमराय कुमारि ॥४७०॥

---

[४६७] १ झाँख।
[४६९] १ फहराहीं भा०।

जब दूनौ चलि आये बारा, उघरा देखेन्हि पौरि दुआरा।
धाइ मनोहर उतर दुआरी, काहु न देखा गौ चित्रसारी।
इहाँ न काहू आरौ पावा, जान न कोउ कुंअर कब आवा।
वोइँ सब अपने रँग बौरानी, झूलहिं गाइ गाइ पिक बानी।
झूलहिं सब जोवन मदमाती, आँचर उडहिं न झापहि छाती।

झूलहिं पेंग डोरि कर गही, बीरी चमकहिं दाँत[१]।
जानहु सुरहिनि सरग सौं, आवहिं चढी बेवान ॥४७१॥

पाछू हुत ताराचन्द राऊ, धरत पौरि भीतर दोउ पाऊँ।
सौंही[१] दिस्टि पेमा पर परी, पैंघत आहि पेग बर खरी।
झूलत उर आँचर बिहराने[२], देखत कुअर चित चेत हेराने।
सैन जो अहै उठत उर ऊभे, बरबस नैन कुअर के चूभे।
परत दिस्टि जिउ लै गौ हरी, बिनु जिउ कया पुहमि खसि परी।

जिव परवस भा धरती, परा अहै बिसंभार।
जस कोइ साँप डँसा बिसभर, बकति न सकै पुकार ॥४७२॥

सखी एक गइ हुती दुआरे, देखी कुंअर परा बिसंभारे।
मधुमालती सौ कहा पुकारी, झूलहिं का उठि लागु गोहारी।
ताराचंद बाहर[१] है परा, कै दानौ कै चुरइल छरा।
कै सिरवह[२] कै तावरि आई, की पित दुक्ख परा मुरछाई।
कै रे डीठि लाग है काहू, लोटै परा लाइ गल बाँहू।

लोयेन पलक न लागही, रकत न रहा सरीर।
बिनु सुधि परा धरनि महँ, जानि न जा केहि पीर ॥४७३॥

सुनतै उठि मधुमालती धाई, बीर बीर कै रोवत आई।
सिर उचाई कै लीहेसि कोरे, बिधना सौ बिनवै कर जोरे।
पंछी रूप भै जननि निसारी, तैं मनुसाई कै हौं निस्तारी।
तैं मोहिं लागि जीव परछेवा, मैं न खटी किछु तोरी सेवा।
का तोहिं भयो बीर परदेसी, कत छाडत हहु मोर गवेसी।

---

[४७१] १ कान रा०।
[४७२] १ गै एक०। २ उधिरानां।
[४७३] १ बार। २ अवारि भा०।

नैन उघारि पीर कहु जिअ कै, औगुन कौन सरीर।
सो उपकार करौ मैं तो कहँ, जौ सुनि पावौं पीर ॥४७४॥

आस निरास पूरि तै मोरी, मैं न सेव किछु कीन्हा तोरी।
राजपाट तजि मोहिं लै आये, अनमिल रहे सो आनि मिलाये।
पछी रूप जननि बनवासा, तैं मोहिं बीर दीन्ह घर बासा।
जननी मोहिं गुन काटि बहायेउ, तौ मोहिं बीर तीर लै लायेउ।
दुख समुंद मो वार न पारा, बही जात बिनु बाजु अधारा।

बहा[1] जात मोर बेरा, बिनु गुन बिनु कड़हार।
महा धार महँ बूडत, तुह मोहिं दीन्ह अधार ॥४७५॥

कुंअर मनोहर तहँ चित्रसारी, सुनी सोर चलि आउ दुआरी।
देखत ताराचंद की भाती, गौ मधुमालति[1] जहँ सुख साती।
सीतल नैन नीर दुहुँ लावा, बड़ी बार कै घट जिउ आवा।
तौ जो लियेसि ऊभि कै सासा, चखु उघारि देखा चहुँ पासा।
जब जाना किछु जी सुस्ताना, पालकी बाहि मदिल तौ आना।

जहँ लगि अहे सयान नगर मो, सबके परा हंकार।
सुनत राइ की अग्या, चलि आये सब बार ॥४७६॥

सबै गुनीजन मिलि आये तहाँ, मोहा कुंअर मोह[1] रस जहाँ।
देखा गुनिन्ह नाटिका गही, बेदना कछु कया नहिं[2] अही।
देखा रुहिर देह गा सूखी, रबि ससि दुओ कया निरदोखी।
औ पुनि पलक न नैनन्हि सौं लागै, मोहा मोह न कैसेहुँ जागै।
कहँ येहि का जी कितहूँ लागा, जौ तेहि पाव तबहिं पै जागा।

कहेन्हि जाहि सौं हेतु है, पूछहु रस लहरे लाइ।
लिहै नाम जेहि राता, और न किछौ उपाइ ॥४७७॥

पुनि निअरे आई बर नारी, रस रस आइ कहत अनुसारी।
एकसर आइ कुंअर पहँ बैसी, पूछै बीर पीर तोहिं कैसी।
जौ तोर जिउ लागा कहुँ होई, मेरवौ आनि जान नहिं कोई।

---

[४७५] १ बहाँ एक०।
[४७६] १ मनोहर रा०।
[४७७] १ सहा एक०। २ महँ एक०।

चौथ न कोइ जान एह बाता, कै तै कै मैं जान बिधाता।
कहेसि बकत मुख आव न मोही, कैसे कहौं पीर मैं तोही।

जो मोर जिउ हरि लै गौ, तेहि का न जानौं नाउँ।
ऐसी बात तोहि आगे, मैं पुनि कहत लजाउँ।।४७८।।

बीर लाज मोसे कस तोही, परिहरि लाज बात कहु मोही।
जौ मैं तेहि का नाव सुनि पावौं, सरग सुरहिनी आनि मेरावौं।
कहेसि देखु मैं झूलति ठाढी, परत दिस्टि जिउ लै गौ काढ़ी।
चमकै नैन दुऔ उजियारे, जनु भुइं[1] उगे देवस दुइ तारे[2]।
तौ खिनक सुनहि कान दै बैसी, कहौ तोहि सौ देखेउँ जैसी।

जस मैं नैननि देखा, तस जीभ कही न होइ।
सहस भाउ महँ भाउ एक, सुनहु सराहौ सोइ।।४७९।।

---

[४७९] १ पुनीव एक०। २ दुआरे एक०।

उतपति सुनौ बरनौ मैं माँगा[1], असि बर जानौ सीस पर नाँगा[2]।
मैं जनु ताहि खरग कर मारा, भयौ टूक दुइ देखत बारा।
दीवा टेमि रैनि जनु बारी, लुहलुहात सिर देखा ठाढी।
तापर चिहुर नाग धै खावा, गारुरि कहाँ जो लहरि बुझावा।
देखि लिलारा चौंधेउँ बारा, अजहूँ नैंन सूझ अँधियारा।

जस रबि किरनि तेज खर, सौंह न चितवै जाइ।
तस लिलार देखि वोहि कै, चौंधि[3] परा मुरझाइ ॥४८०॥

भौंह बान अनिआर बिसारे, मारहिं ताकि जीउ हत्यारे।
नैंन दिस्टि जो तन फिरि हेरा, जिव हरि लीन्ह तबहिं वोहि केरा।
बरुनी बान नावक कर लेखा, दिस्टि न आव लागु सुरेखा।
देखि नासिका रहै अमोला, का बरनौं सब सिस्टि क मोला।
अधर बिंबु अम्रित रस पूरे, बीरहिं पिअत रुधिर अस सूरे।

अगिनि बरन होइ[1] अम्रित अधर, उपजा देखि बिकार।
अमिअ न जानौं काहि कहँ, मो कहँ भौ अंगार ॥४८१॥

चौक चमँकि देखि मैं न सभारा, परा मुरछि जस बीजु क मारा।
ता महँ बसै जो जीभ अमोली, बोलत अमिअ खानी ता बोली।
परत दिस्टि सुनहु सत भाऊ, भयौ जैस तिल बिनु सिर पाऊ।
देखि कपोल कै झलक लोनाई, निति उठि मुकुर छार मुख लाई।
चमकत[1] बीरिहँ स्रवन दुइ वोरा, बीजु छटा जस भयौ अँजोरा।

नैंन रेख कज्जल की, देखी सोभा कस देइ।
जानहु लोयेन स्रवन सौं, आइ जो मंता करेइ ॥४८२॥

---

[४८०] १ अंगा एक० । २ लागा एक० ।
३ औंधि एक० ।
[४८२] १ बकत एक० ।

गिंव पटतर गा काहु न लावा, जनु बिसकरमै आपु बनावा।
तीनि रेख मधु गीव निरासी, भयौ तेहि म्रिग नैनन्हि फासी।
सेदुर कुकुह मेरै पिसावा, सुभर फटिक गीव सोभा पावा।
बिबि कुच स्याम छत्र बिधि दीते, गढे आइ नैनन्हि अनचीते।
लरते दुऔ बीच जिउ[1] हरिआ, जौ न हार होत बिच धरहरिआ।

पौन[2] कलस अम्रित रसपूरे, बिबि कुच कठिन कठोर।
जोबन बाला उमगत देखा, विपरित कनक कचोर ।।४८३।।

भुअ पटतर जग जोहेउँ नाही, केहि दै जोर सराहौं बाँही।
मै मतिहीन बरनि ना आई, कै बिधनै तुअ सीभु उचाई।
काहू जलज म्रिनाल बखानी, काहू कदलि खाँभ मनमानी।
देखि कलाई मोर चित मोहा, कनक परे तेहि माह जे सोहा।
दुऔ हथौरी सुभर कस दीसा, फटिक सिला ज्यो इंगुर पीसा।

गहि कर पल्लौ डोरी, झूलत हहिं सखि सग।
कर बारी नख सारेउँ[1], जनु फरहद करी सुरंग ।।४८४।।

अबटन लाय पेट सम कीन्हा, अत न[1] पाई ता महँ चीन्हा।
नाभि कुंड अमोघ अथाहा, परे आइ नहिं पाई थाहा।
पौढ़ि पेग चढ़ि लेत उझूका, कटि जनु होइँ चली दुइ टूका।
गुरु नितंब भै मैं न सँभारा, जनु बिबि गिरि बाँधा इक बारा।
बिपरित कनक केदली संगमा, जिअ देखि जाघ जामै कामा।

बिरहैं[2] मारि लतारे, उन्ह हतिआरी जात।
परगट देखि रकतारेउ, तरवा तिन्ह कर रात ।।४८५।।

जौ कुंअरहिं कहि बात सिरानी, सुनि कै रही औघ भै रानी।
मनही गुनै औ करै बिचारा, काहि देखि येहि भा बिकरारा।
औ असि सखी मोरि ना कोई, पेमा मकहुँ होइ तौ होई।
कहेसि कि करहु बीर मन धीरा, मैं उपचरौ जाइ तोर पीरा।
मधुमालती निस्चै कै जाना, पेमा छाड़ि होइ न आना।

---

[४८३] १ गीव एक० । २ कनक मा० । कँवल रा० ।
[४८४] १ देखेउँ मा० ।
[४८५] १ आस न एक० । २ बीरहिं एक० ।

मैं सब सखी हुँकारि कै, पूछौ खोज कराउँ।
कै कुमारि कै ब्याही, तस तोहि आइ कहाउँ ॥४८६॥

मधुमालती उठि कै घर आई, कहा कुंअर सौ बात बुझाई।
जेत किछु कहा कुंअर सौं अहा, आइ रौन सौं रानी कहा।
सुनत कुअर मन भयौ हुलासा, कहेसि कौन दहु एकर आसा।
जब राकस हनि आना तोही, तहिअै उन्ह दीती हुति मोहीं।
तब न लिआ मोहि चाउ न आही, अब लै कुंअरहि देउँ बिआही।

येहि कहि दुअौ सग भौ, चित्रसेनि पहँ आइ।
पहल एकांत[१] बैसि कै, मधुरहि लिआ बोलाइ ॥४८७॥

कुअर ठाढि भौ दुइ कर जोरी, कहेसि पिता एक बिनती मोरी।
आयसु होइ तौ बिनती करऊँ, कहत पिता सौं बात लजाऊँ।
राजै कहा मैं आयसु देऊँ, कहा तोहार परछि सिर लेऊँ।
जब दूनौं मिलि बात उघारी, ताराचंद कुअर कुल भारी।
गरुअ गरिस्ट मानगढ पती, पडित पर उपकारी सती।

राजदुलारि तोहारी, बाचा बहिनि है मोरि।
कहौ तौ ताराचद सौं, देहुँ गाठि दुहुँ जोरि ॥४८८॥

---

[४८७] १ एक ठाउँ रा०।

सुनि कै राजकुंअर सुख चाहा, कहेसि मोहिं तुम्ह पूछहु काहा।
राकस हनि जब लीन्ह अंजोरी, तेहि दिन की वोह चेरी तोरी।
जहाँ तोहार मन मानत अहा, देहु हाथ धै तहँ मैं कहा।
बोल छाडि जब राजै दीन्हा, दुहूँ बधाई आइ घर कीन्हा।
कुंअर जोतिखी तुरित बोलाये, दुहूँ क रासि बरगन गनाए।

नगर कुटुंब जन नेवता, औ परिजन परिवार।
घर घर बाज बधावा, पुर पुर मंगलचार ॥४८९॥

पसरा काज बिआह जनावा, तेरसि सोमवार दिन पावा।
घर घर नगर बधावा बाजा, पुर .पाटन नेवता सब राजा।
सोमवार तेरसि जब आई, चित्रसेन जेवनार कराई।
डासन जानि अनूप डँसाये, राय सभा लै[1] तहँ बैसाये
बैसी सभा पसरी जेवनारा, जन जन आगे सहस प्रकार.

बाँभन लोग राय औ राने, पचअंब्रित जेवनार।
एक एक जन आगें, सहस सहस परकार ॥४९०॥

जेंवन उठा लोग बहुराये, जने जने कहँ पान देवाये।
तेहि पाछे सब गनक हंकारे, आनि तौ माडौ तर बैसारे।
ारचंद लै पाट बैसारा, होम अग्नि आहुति परजारा।
ायें कुंअरि कीन्ह लै ठाढी, जानहु चाँद चीरि कै काढी।
धर्महिं पढै कुंअर सौ लाई, गाठि जोरि सत फेरी फेराई।

सकुचत डरत कुंअर गीव, पेमै जो मेला[1] हार।
कुंअरहु पुहुपमाल कर गहि, लै कामिनि गीव सार ॥४९१॥

चंदन कुंकुह बाहि पिसावा, अगर मेलै सब मंदिल लिपावा।
भीतर बाहर औ चहुँ वोरा, लावा भीतिन्ह लाल पटोरा।

---

[४९०] १ सभापति।
[४९१] १ घाला रा०।

सैन आनि तेहि मदिल[1] डसाई, कुंअर अनंदित बैसा आई।
कै सिंगार आई ब्रज नारी, तुरत सैन कै लै बैसारी।
पुलक पसेउ काँपै तन सांसा, उपजा दुऔ प्रथम संग बासा।

बाला[2] मान न परिहरै, बल्लभु लालि कराइ।
घूंघट वोट कोट भा, सकै निअर को आइ ॥४६२॥

उठा कोह जो मनमथ दापा, मन ढीला भौ गात बिआपा ॥
ब्रज समान अही जो बाला[1], भौ रबि उदै सोम[2] औ पाला[3]।
कुंअर चपरि कै अंगुरी चाँपी, सघन स्याम जनु दामिनि काँपी।
बहुरि जो कर कुच मर्दत गये, सकुचित सास उसासित भये।
नौल नेह नौ जोबन अगा, रैनि बिहानि दुऔ रति रगा।

राजकुअर कह रजनी, तिल तिल सुक्ख बिहाइ।
पेमा बिरह ब्याकुली, सूर सूर चिललाइ ॥४६३॥

रैनि दुऔ सुख सुरति बिहानी, भोर सखी आई लै पानी।
ताराचंद बाहर उठि जाई, मधुमालती पेमा पहँ आई।
पूछै सखी कहहु दहुँ मोही, कैसे भौ पिअ सौं रँग[1] तोही।
पेमा कह जो पूछि मैं रही, तुह न बात कछु मो सौं कही।
जो कछु हमही निसि निर्बहा, सो सखि जीभ न आवै कहा।

दुऔ जिअ बीच जो निरबही, बेलसि सनेही कत[2]।
सो कैसहु नहिं आवै, सखी हे जीभ कहंत ॥४६४॥

दूनौ राजकुंअरि रहैं हिली, खेलहिं हँसहिं एक संग मिली।
दूनौ रहै हँसत एक सगा, नौ जोबन तन उदित अनगा
राज सुक्ख औ जोबन बारी, निमिखि न बिछुरै पेम पिआरी
मिलै दुऔ एक संग भीना, जिमि बारी प्रिथिमी का मीना।
हिये प्रीति मुख कहै न जाई, जिमि वै ससि कुमुदनी सिखाई।

---

[४६२] १ ठाँव रा० । २ बोलु एक ० ।
[४६३] १ ब्यापा एक० । २ सोर एक० । ३ थापा एक० ।
[४६४] १ संगम । २ सखी हे भौ एकंत एक० ।

मधुमालती औ पेमा, राजकुंअर दुइ बीर।
पावस काल सुख बेलसहिं, पुनि गरजा घन नीर ॥४६५॥

पुनि पेमै सब सखी हँकारी, एक बार सुनि आइ सो नारी।
अति सुंदरि रूपवती कुमारी, नाव सुरेखा जोबन बारी।
सग अपने कै लालच ताही, कुंअर सुहिरदै दीन्हा ब्याही।
जानेसि दुनौ सग मिलि रहही, दुख सुख एक संग निरबहही।
बाल सघाती जोबन चाही, दूनौ एक बाग का छाही।
जानेसि ससुरे कोई, हित मोरे सग नाहिं।
जासो कहब लाज जिउ केरी, यह गुनि दीन्हा ब्याहि ॥४६६॥*

---

[४६६] *यह छन्द भा० तथा रा० प्रतियों में नहीं है।

पावस गत जो भोग बेलासा, रितु कुंग्रार सोहित कबिलासा।
भौ अकास सुभर निरमला, सुरज सहस ससि सोरह कला।
सिमटे मेघ गगन जो आहे, भौ अथाह जलहर औगाहे।
बैसि दुनौ मति कीन्ह बिचारा, नीर घटा जो रित उजिआरा।
कै मति दुनौ राइ पहँ आए, चित्रसेनि जौ महँथ बोलाए।

दुनौ कुंअर कर जोरि कै, बिनती ठाढि कराहिं।
कहेन्हि देहु जो अग्या, देस अपन कहँ जाहिं ॥४६७॥

हरख मया सौं आयेस पावै, साधि सुदिन प्रस्थान करावैं।
अग्या होइ तौ गौन कराई, अपने जन्म भूमि कहँ जाई।
गौन करैं कर साज कराई, मधुमालती के सग चलाई।
चलिय बेगि खिन बिलंब न लाई, मात पिता मकु जियतै पाई।
उन्ह की सेवा करि एह बेरा, चाँद सताइस जी उन्ह केरा।

जस भिनुसारे दीपक, पिअरि धूप जस छाँह।
तस जीवन्ह उन्ह केरा, मास पाख दिन माँह ॥४६८॥

गौन बचन सुनि न्रिप चुप रहा, तरहुंड माथ पुहमी को गहा।
रहा अचक दहुं का जिउ जागा[1], पलक न परै टकटकी लागा।
जीउ सरीर हुते गयेउ उडाई, बडी बार ऊपर सुधि आई।
कहा राय बिक्रम पहँ जाई, गौन करैं कर साज सजाई।
जौ आयेसु आफौ तुह राजा, लै गौनहुं अपनै सब[2] साजा।

चित्रसेनि चित चिंता, पुनि मन कीन्ह बिचार।
जो सतति दुहिता रहै, अंत सो बहुरि परारि ॥४६९॥

---

[४६८] एक० प्रति में इस छन्द की तृतीय पंक्ति दुहरा गई है।

[४४६] १ जे काम न काजा एक०। २ दिस एक०।

कहा रस बचन कुंअर बहुराई, आप राय बक्रम पहँ आई।
राजा सौं गै कहा बुझाई, कुअरन्ह गौन क साज कराई।
सुनि यह बाच अचक भै रहा, पुनि अस चित्रसेन सौं कहा।
जा दिन बिधि हम मेरवा आनी, ता दिन दुख परा नहिं जानी।
अब रखबे कै नाही काजा, गै साजहु अपने दिस साजा।
चित्रसेनि मन मारे, बिस्मै सौ घर आइ।
कहा आइ कुंअरन्ह सौं, राजा बिनती कराइ[१] ॥५००॥
सुनत बात बाहर केउ अहा, तिन्ह गै कै मधुरा सौं कहा।
रही अचक मधुरा सुनि बाता, कहेउ कहा जो भयौ बिधाता।
मुई रोइ जौ राकस हरी, अचक गाज कहवाँ सौं परी।
अब बिछुरन मोहिं भौ भारी, बरु न ब्याहती रहति कुमारी।
नैन आँसु भरि मधुरै रोवा, कहेसि मरन हुत कठिन बिछोवा।
प्रथम बार राकस हरी, मेरै आनि करतार।
अब बिछुरे नहिं मिलना, एहि जन्म संसार ॥५०१॥

---

[५००] १ कहा जो विक्रम राइ भा०।

सुनि कुंअरिन्ह कर गौन अवादा[1], भौ न्रिप दुनौ घर बिसमादा।
सुनतहिं बात रूपमंजरी, भइ अचेत मुरछि भुइं[2] परी।
विक्रमराय बैसि समुझावै, धी के रहे जस[3] नैहर पावै।
ससुरें धी कर होइ निरबाहा, मैके काज न धी कर आहा।
नैन भरे जल चित उदासा, गइ रानी मधुमालति पासा।

मधुमालति सौ रानी, कहा बात मन लाइ।
कुंअरि चलिहु तेहि देस कहँ, जहँ सौ कोउ न आइ ॥५०२॥

रूपमजरी पेमा राई, मधुमालति के सग बैसाई।
मधुरै नैन दुओ भरि पानी, आई जहाँ कुअरि औ रानी।
लागी धिअ को देन उपदेसा, कही तजी चलि कुटुंब बिदेसा।
तोहिं नाह तहाँ लै जाइहि, जहँ क सदेस न कोई लाइहि।
जहाँ न पाइअ केहु सदेसा, चलिहि नाह तोहिं लै परदेसा[1]।

कौनि भाति हम राखब, तुह बिछुरत घट जीउ[2]।
अब तो देवस दुइ चारि मो, लै गौनिहि तुह पीउ ॥५०३॥

साई सेवा करब चित लाये, जनि डोलै चित दहिने बाये।
महा दुस्ट जो पुरख क जाती, चित परखत रहबै दिन राती।
करिहु सेवा दिन जानेहु जैसे, सगरी रैनि गोड चापब तैसे।
जौ धै बाह उलारै संगा, बेलसि[1] सेज सुख मानेहु रगा।
औ सो पिअ बहु करी न माना, कहेहु रग[2] प्रीति अनुमाना।

जिन्ह धनि अपने कत सौं, मान कीन्ह अधिकाइ।
तिन्ह तौ साईं आपना, सौतिहिं दीन्ह बनाइ ॥५०४॥

---

[५०२] १ कुवादा रा०, कसादा भा०। २ गत एक०।
३ जम रा०।

[५०३] १ बिदेसा एक०। २ पीउ एक० (पुनरुक्ति)।

[५०४] १ बोलरि मा०। २ मान मा०।

साईं सेवा किये सुख होई, साईं सेवा दुख जा सोई।
जौ पिउ कै मन दुखित जानेहु, तहवा किछू बिलग ना मानेहु।
कियेहु सेवा साईं की ऐसी, तन मन लाये ध्यान रह बैसी।
तौ पैहौ जो निस्चै पीऊ, कहेहु प्रीति प्रभु दै कै जीऊ।
साईं सेवा जीवन राखेहु, पूछत बात मधुर सौ भाखेहु।

प्रीति जो करब साइ सौ, सेवा के बर जानि।
साईं सेवा नित नई, जानौ मन अनुमानि ॥५०५॥

जौ जानहु अति रिसि मो साईं, बरबस कै सेइब बरिआईं।
सेवा कै बर पीअ मनाइब, पीउ क सेव बहुते सुख पाइब।
सोइ सोहागिनि दुइ जग[1] माहा, जो सेवा कै राधा नाहा।
जौ पिउ कै मन दुखित अहा, चित अनतै मुख हमसौ कहा।
पिउ क सेव कियेहु सुख सारे, साईं सेवा परतर तारे।

साईं सेवा कीजिए, कै जिउ अपने हानि।
साईं सेवा जो जिउ बँधा, सो चारौ 'जुग[2] गनि ॥५०६॥

रूपमंजरी मधुरा रानी, देइ धीउ को सिख बुधि जानी।
सुनहु कुंअर तुह दूनौ बारी, स्रवन कियेहु उपदेस हमारी।
राजकुंआरी कुल उजिआरी, कियेउ काम जे आव न गारी।
धीउ बिछुरे रानी दुख होई, कोखीझार दुख सहै न कोई।
अब ना भेंटब कबहूँ बारा, लै जाइह तुह सायेर पारा।

निज जानहु अब रानी, धीउ जो भई परारि।
तब कुंअरिहि कंठ लायेउ, रोयेउ धालि डंफारि ॥५०७॥

कुल अपने कर करबै लाजा, सेइब स्वामी छाड़ि सब काजा।
सासुहिं उतर न दीजै[1] काऊ, सै दुइ जूनि पखारब पाऊ।
हंसि कै पेलब सासु कै गारी, उलटि उतर नहिं दीजै बारी।
सासु क बोल परछि सिर लीजै[2], ऊँच बोल सुन उतर न दीजै।
औ सौतिन्ह सौं करब मिताई, रहब जानु एक जननी कि नाईं।

---

[५०५] यह छन्द केवल एक० प्रति में पाया गया है।
[५०६] १ बिउ एक०। २ दुहूँ जग भा०, मा०।
[५०७] यह छन्द केवल एक० प्रति में पाया गया है।

ऊँच बोल जनि बोलेहु[१], रिस राखेहु मन मारि।
संतति लाज धरब जिउ, कुल नहिं आवै गारि ॥५०८॥

सुना सखी मधुमालति चली, सुनतै मया मोह जिउ जरी।
जो जैसहिं सो तैसहिं आई, रोइ सखी सब अकम लाई।
रोवै सभ गले लाइ सहेली, सौरि सौंरि सँग साथ जो खेलीं।
काहूँ सुख बाले सँग माना, वोह सुख एहु दुख दुनौं बिसाना।
सुख अंब्रित रस खेलि जो पिआ, वोह सुख यह दुख कैसे जिआ।

तुम हम एक सग माना, बालापन कर रंग।
अब कैसे जिउ राखब, तुह गौनहु पिअ संग ॥५०९॥

समुझि समुझि सँग साथ जे खेली, अब बिछुरन दुख कठिन दुहेली।
बरु सतति बिधि राखत बारे, सकति आनि तिन्ह जोबन घाले।
जौ रे रहत जोबन तन गोवा, हम तुह होत न ऐस बिछोवा।
आजु सखी तुह गौन सभागे, कालिह बहुरि एहि दिन हम[१] आगें।
जोबन[२] जोग मिलै त पिआरा, नातरि जोबन जन्म असारा।

जो बिधि जोबन बदलि कै, पुनि बालापन देइ।
सौ जोबन देइ बाला, बाल अवस्था लेइ ॥५१०॥

जौ जोबन ना उपज तरंगा, सदा रहत बालापन अंगा।
जोबन उमगत भयौ बिछोहा, अब लहते पाउ सग सोहा।
पिउ कै संग नारि पै लहई, पिउ की प्रीति अत निरबहई।
वोह कौन दिन अहै सभागी, वोहि तोहि पेम प्रीति जो लागी।
मन मैला सुनि कठिन ,बिछोवा, बिधि किन्ह पेम रहै ना गोवा।

सब सौं सुरति सयानपु, जब बिछुरे दिअ जोग।
मुकुति प्रान सौं पै गत, एहि सौं और न भोग ॥५११॥

जौ बिछुरन दुख जनतिउं एहा, कत करतेउँ बालापन नेहा।
अब तुह करौ बिदेस पयाना, हम कैसे घट धरब पराना।
जौ हम तुँह नहिं होत चिन्हारी, एत दुख आगे न आवत भारी।

---

[५०८] १ दीबी मा० । २ लीबी मा० । ३ बोलबि मा० ।
[५१०] १ मंदिल एक० । २ जोग एक० ।
[५११] यह छन्द केवल एक० प्रति में है।

तोहिं नाह तहँवा लै जाइहि, जहाँ क सँदेस न कोई लाइहि।
समुझि समुझि सँग साथ जे खेली, अब बिछुरन दुख कठिन दुहेली।

तुह बिदेस कह गौनब, हम अब इहाँ रहाँहि।
पेम लजावन पापी, जिव जो निकसत नाँहि ।।५१२।।

देखि कुंअरि कै कुटुंब बिछोवा, पर आपन जे गहबरि रोवा।
जेइ देखा सो हिये कर रोवा, नैंन सलिल रकत तन धोवा।
पाथर केर हिआ जेहि केरा, आसु न रहा नैंन तेहि बेरा।
देखत ताहि हिआ चरराना, चला उड़ाइ जात कर प्राना।
ख अंब्रित रस खेलि जे पिआ, एह सुख वोहि दुख बिधिनै दिआ।

दूनौ चलिहहिं ससुरे, राखे रहहिं न काउ।
चलिहिं कंत सँग लैके, हम कछु कहत न भाउ ।।५१३।।

मिलहु मोहिं सखी गीव लागी, उपजा मोह मया उर आगी।
कालि सखी पिउ धरिहै बाँहा, चलिहि देस अपने लै नाहा।
लोग कुटुंब तजि परभुंइ जाइब, पुनि बिधि मेरइहि आनि मिलाइब।
अंकम देहु लाइ गलेबाँही, जिअत मिलन पुनि होइ कि नाही।
मधुमालति कर देखि बिछोवा, ऊँचे सबद सखिन्ह सभ रोवा।

बहुतै रोवहिं पाँव परि, औ बहुतै गिव लागि।
कोई रोवै पुहमी परि, मया मोह उर जागि ।।५१४।।

---

[५१३] यह छन्द केवल एक० प्रति में है।

समदन खंड

भोर होत सबिता परगासा, भा अंदोर किछु राज अवासा।
पूछहिं सबै ऊभि कै बाहा, कस अंदोर हो राउर माहाँ।
जेइ जाना तेइ कहा बुझाई, मधुमालती ससुरे कहँ[1] जाई।
सुनत अंदोर राउर मो परा, आइ लोग सब राउर भरा।
पर आपन जहा लगु अहा, राजगिरिह सुनि आये तहा।
सुनत गौन मधुमालती, परा महारस रार।
राज कुंअरि तब रोइ कै, समदा सब परिवार ॥५१५॥

समदै सब परिजन परिवारा, समदै फिरि फिरि पौंरि केंवारा[1]।
समदै पालक सेज तुराई, समदै राज मदिल गीव लाई।
समदै सब पाटन पटसारा, समदै रोइ रोइ परिवारा।
निसि सोवै जहँ राजदुलारी, समदै पाँवन परि चित्रसारी।
निसरत जीउ थके मधु बोला, तौ समदै गिव लाइ खटोला[2]।
सब घरबार समदि कै, पुनि समदै परिवार।
समदै सब जन परिजन, जो किछु जग बेवहार ॥५१६॥

मधुमालति छाड़ा घरबारू, छाड़ा सब परिजन परिवारू।
छाड़ी पुतरी भरी पेटारी, छाडी सब सग खेलनिहारी।
जेहि सग संतति मानै केली, छाडी ते सब बालि सहेली।
छाडा मया मोह जेत आवै, अति मरोह घर छाड़ि न भावै[1]।
कै गिआन अपने चित बारा, तब उठि चली छाँड़ि परिवारा।
छाड़ा सब परिवार आपना, जन परिजन सब कोइ।
छाड़ा लंक भभीछन, जो भावै सो होइ ॥५१७॥

बिनवै दुओ कुंअर सौं रानी, चलेहु लेइ मोर प्रान परानी।

---

[५१५] १ कल एक०।

[५१६] १ दरबार एक०। घरबारा मा०। २ हिंडोला भा०।

[५१७] १ आवै एक० (पुनरुक्ति)।

बिनती करहिं कोख की आगी, येह दूनौ तोहरे जिव लागी।
इन्ह दूनौ कर हित ना कोऊ, तुह जिउ लागि अहै एह दोऊ।
कर्म न होइ माय बाप के हाथे, भूजहि लिखा दैअ जो माथे।
मात पिता कर एतनै आहै, सुत दुहिता प्रतिपारि निबाहै।

तेहि पाछे जो बिधि लिखा, छठी कि राति लिलार।
सो भूंजहि गै आपन, भल मंद सिरजनिहार ॥५१८॥

कुंअरि जननि पा लागी धाई, रानी गीव उठाइ कै लाई।
कोख की आगी सही न बिछोवा, डाडि[१] बाहि रानी तव रोवा।
अस कहि धी लागि गिव रही, छाडि न सकै मोह[२] की गही।
जननि कठ नहिं छांडै बारी, अधिकौ दै दै अकम सारी।
जननि असीस दीन्ह मन जानी, सदा सोहाग राज घर रानी।

जौ लगि धरती गग जल, औ ससि सूर अपार[३]।
तौ लगि राज सोहाग तुअ, राखौ सिरजनिहार ॥५१९॥

बहुरि पिता पाँ लागी बारी, राये हेतु सौं अंकम सारी।
राजा चखु नहिं रहा पनारा, निसरी बिकट आँस की धारा।
कहै बिधि कत जग धी औतारा, कोइ न सहत एता दुख भारा।
राये कहा जनि होहु निरासा, पर भुइं दैअ दीन्ह तुअ बासा।
रहिहहिं जात जन परिजन मोरा, खेम कुसल लै ऐहहिं तोरा।

पिता कठ नहिं छाड़ै, कैसेहु राजकुमारि।
जौ जौ लोग छोडावै, तौ तौ गहि देइ अँकवारि ॥५२०॥

देखि कुंअरि कै कुटुंब बिछोवा, सगरो लोग नगर कै रोवा।
रोवै नगर छतीसौ जाती, बार बूढ रोवैं अहिवाती।
नगर क जीव काढ़ि कै लीन्हा, बिन जिउ कया सून सब कीन्हा।
कुंअरि कुटुंब समदा सब जैसें, पेमै पुनि समदा सब तैसें।
रोवै ठाढ़ सबै परिवारा, जीउ लै चला राखि को पारा।

रोवै लोग कुटुंब जन परिजन, परजा पौनि सवाइ[१]।
कंत चला ग्रिह अपने लै, कोइ न सकै बिलँबाइ ॥५२१॥

---

[५१९] १ धाब। २ पेम। ३ तार भा०।
[५२१] १ काहू कुछु न बसाइ भा०, रा०।

पुनि गै कुंअरि जो राजसभागी, दौरि रोइ मधुरा पाँव लागी।
कहेसि समुंदु माँ मोहिं गिव लाई, मैं परदेसिन आजु पराई।
वोहि माँ,सेउँ मोहिं जन्म निहोरा, तै प्रतिपाल कीन्ह सब मोरा।
छाडा बाप भाइ घर बारा, आजु गौन परदेस हमारा।
मधुरै अस गहबरि कै रोवा, नैन नीर सम नीर निचोवा।

दुओ कुंअरि सब कुटुंब समदि कै, चढी सुखासन धाइ।
छाडेन्हि सब परिवार आपना, बहुरि न देखै पाइ ।।५२२।।

पुनि दुऔ न्रिप जहाँ हैं खरे, दुऔ कुंअर गै पायेन्ह परे।
कंठ लाइ कह दुऔ भुआरा, इहाँ रहेहु हमरे सिर भारा।
हम सब घर[1] कर प्रान अधारा, अहा सो तुम्र नेवछावरि सारा।
बिनती बहुत कही नहिं जाई, तुह जानहु औ[2] कुल की बडाई।
तुह चरनन्ह तर माँथ हमारा, कियेहु जैस मन भाव तोहारा।

काढि प्रान परिवार कर, हम तुह सग चलाउ।
राखिहु सील हमारी, करेहु जो दैव[3] कराउ ।।५२३।।

सुन कुंअर स्रवननि[1] कर गहा, पिता ऐस तुह बूझिय कहा।
मातै हम जन्मै होत बारा, माय बाप जे तुह प्रतिपारा।
यहि परिवार गोसाइनि रानी, पितर तरै इन्ह अजुरिन्ह पानी।
येइ ससि सौ हम कुल उजिआरे, येइ मनि हम इन्ह नें मनियारे।
कसत कसौटी कचन लीका, तस हमरे कुल महँ येइ टीका।

इन्ह कर सोच करहु जनि, जिअ आपने नरेस।
अग्या देहु गोसाईं, गवनहिं अपने देस ।।५२४।।

---

[५२३] १ घट मा०, रा०। २ दोउ माताप्रसाद जी द्वारा प्रस्तावित।
३ देवस एक०।
[५२४] १ समुरन्ह एक०।

भई पथ सिर दूनौ बारा, औ संग दूनौ राज कुमारा।
औ दाएज जत ससुरे पावा, सो सब कुंअरन्ह लादि चलावा।
चारि मेलान एक सँग गए, तहवाँ ते दुइ मारग भये।
ताराचंद नैन भरि पानी, आयेउ जहाँ कुंअर औ रानी।
कहै बीर उठि समदहु मोही, समदौ महूँ लाइ गिव तोही।

दुसह पीर बिछुरन की, जग जानै सब कोय।
सब दुख सेती कठिन दुख, बिधि जनि देइ बिछोह ॥५२५॥

पुनि सुनि कुंअर मनोहर नाऊँ[1], धाइ गहेसि ताराचंद पाऊँ।
इन्ह पुनि हेतु सहित कठ गहा, लागे गीय रोइ अस कहा।
जेहि दिन बिधि हम मेरवा आनी, तेहि दिन येह दुख परा न जानी।
दुऔ कुंअर लागि गिव रोये, कहेसि दैअ हम कत रे बिछोए।
अस दुहु हेतु हिये उद्गरा, एक न छाँड एक के गरा।

रोइ रोइ गिव[2] लागहिं, नैन चुअहिं जलधार।
निज जानेन्हि अब नाही, मिलना एहि ससार ॥५२६॥

दुऔ कुंअर रोवहिं गिव लागी, बिछुरि न सकै बिरह की आगी।
मधुमालती गै कठ छोडाये, दुऔ जनाँ रोवत बेगराये।
कहेन्हि कि तुह जन परिजन साईं, कस रोवहु मेहरिन्ह कै नाईं।
धीरजवंत जो पुरुखा भारी, थोरे दुख जनि होहिं दुखारी।
हम अबला की चित बुधि थोरी, थोरेहि दुक्ख जाहि भै बौरी।

मधुमालती दुऔ बेगराये, बहुते दुक्ख सदेह।
तबहूँ चुऔ नैन जलधारा, पाछिलि समुझि सनेह ॥५२७॥

हम देखहु तुह अबला जाती, सहा बिवोग बज्र कै छाती।
हम दुख जन्म न जानहि कैसा, अब जाना जब सिर चढि बैसा।

---

[५२६] १ राऊ भा० । २ कंठ भा० ।

धुआँ होत जब आगि के बारे, तब आवत चखु लोर हमारे।
मात पिता जन सब संसारा[१], भू'जब जो किछु लिखा लिलारा।
तुह पुर्ख भै रोवहु ऐसे, धीरज धरहिं हम अबला कैसे।

तु"ह पुहमी पति चाही, बज्र क हिरदै तोहार।
हम अबला दहु किमि सहहिं, बिछुरन दुक्ख अपार ॥५२८॥

मधुमालती लोयेन जल भरी, ताराचद के पाँवन्ह परी।
कु'अर हेतु सौं कु'अरि उचाई, समुझि बिछोह कंठ लै लाई।
मधुमालती रोइ रोइ कह बाता, तै मोर जन्म जीवन कर दाता।
मांय बाप हम जन्म अंडारी, बीर मोहिं लै तुइँ प्रतिपारी।
मिलन कै जीव न होती आसा, तै मोहिं मेरै दीन्ह घर बासा।

राज पाट सब आपन, तै छोडे मोहिं लागि।
तपत नीर बुझायेहु, जरत हिये की आगि ॥५२९॥

---

[५२८] १ जनम हम सारा भा०।

ताराचंद अपने देस को चले

कैसे एह जमु भरिहौ भारी, तुह मोहिं नगर चले जीव मारी।
जैसे पाँख भए मो तन आई, मरतिउँ कतहुँ जाइ बौराई।
पुनि कत माय बाप घर औतिउँ, कतहुँ जाइ कै जीव गवौंतिउँ।
मोहिं घर बास बीर तुम दीन्हा, पछी रूप सौ मानुस कीन्हा।
घट जिउ रहत बीर तोहिं देखैं, आजु उजार जगत मोहिं लेखै।

परिहरि सब परिवार आपना, बीरन पर भुइँ जाहिं।
अब बिछुरे मोहिं तोहि सौं, आस मिलन की नाहिं ॥५३०॥

जनमि पंखी कै मोहिं बनबासी, बहि जाती तोहिं बिरह उदासी।
एहि अतर जौ देखौं तोही, उपजा पूर्ब पेम हिअ मोही।
आस लागि मैं बैसी आई, बाझी सकति जाल बरु जाई[१]।
तै मोहिं लागि जे साहस कीन्हे, राज सोहाग रूप मोहिं दीन्हे।
किछु न आसा जिउकै हुती मोही, बीर सिद्धि सौ साहस तोही।

धौरि बहुरि[२] फिरि पकरेसि, ताराचद के पाँइ।
कुंअर लाइ उर समदै, जस समदै बहिनी कै भाइ ॥५३१॥

समुझि समुझि बिछुरन घेरा, कैसे जन्म निरबाहब बीरा।
अब परदेस संग नहिं जाइब, आस नाहिं जो जिअत मिलाइब।
दहुँ केहि घाट पिआवै पानी, को मिलाव बिछुरहु[१] ते आनी।
का बिधनै जो लिखा लिलारा, कहाँ जाइ खेइब जमुआरा।
रहेहु बीर मोर लेत गँवैसी, मैं तजि कुटुंब भई परदेसी।

मैं कैसे जिउ राखब, तुह बिछुरन घट बीर।
कैसे जन्म निबाहब, येहि बियोग जे पीर ॥५३२॥

पुनि दोउ राजकुंअर बर नारी, रोवहिं मिलि दै जो अंकबारी।
सौंरि सौंरि बालापन नेहा, बिछुरत भौ बहुत सदेहा।

---

[५३१] १ लाज मुँह आई एक०। २ रोइ रोइ रा०।
[५३२] १ यह छन्द केवल एक० प्रति में प्राप्त है।

निज जानहु दुहु जिउ माही, बहुरि बिछुरि ते मिलना नाही।
कीन्ह आजु हम मिलन निबेरा, आजु उदधि मो बिरहा बेरा।
आजु दैअ हम दुँहु बेगराई, आजु कुटुंब तजि भई पराई।

अब बिछुरे दहु मिलिहैं, किमि कै बाधब धीर।
कैसे जन्म निबाहब, एहि बियोग के पीर।।५३३।।❀

पाव पकरि रोवै बर नारी, बही नैन दुइ नीर पनारी।
कहै किमि कै सहइ दुख दोऊ, मिलते रही आस गौ सोऊ।
येह बेदना जौ होइ सरीरा, सो जानै जेहि पेम की पीरा।
आपनि आदि प्रीति जो जानी, करती हम जो कत नित पानी।
जीव जानि भौ जन्म बिछोवा, कठ लागि जे कुअरिन्ह रोवा।

मास देवस पर हम दोऊ, मिलत रही एक बार।
सोउ आस अब टूटिगै, जीवन कौन प्रकार ।।५३४।।

मोह उठी पेमा उर आगी, रोइ मनोहर के गिव लागी।
कहेसि समुझ तेहि बिछुरन पीरा, कैसे जन्म निबाहब बीरा।
जब तुह रूपमंजरी डारी, ता दिन रोइ गँवावा बारी।
पै जिउ आई मिलन कै आसा, मिले आइ जो घट हुती सासा।
अब बिछुरन हुते आस न मोही, जिअत बहुरि ना मिलबै तोही।

कुटुंब बिवोग न जानौं, जब देखा तुअ पास।
अब तुह बिछुरे बीरन, मैं जो[१] भई निरास ।।५३५।।

आजु क दिन बिधि कत निर्माये, जो बिछुरन कै नाभ सुनाये।
पेम प्रीति जबही बिछुराही, सो दिन जानु जिअन मो नाही।
लोग कुटुंब जौ बिछुरा मोही, बीरन रही लाइ गीव तोही।
तुह अब चले मोहिं परिहरी, जीउ घट रहत न देखौं घरी।
धीरज करौं देखि तोर पासा, आजु बीर मैं भएउँ उदासा।

---

[५३३] यह छन्द केवल एक० प्रति में है।

❀ यही पंक्ति ५३२ वें दोहे की द्वितीय पंक्ति के रूप में भी है।

[५३४] यह छन्द केवल एक० प्रति में प्राप्त है।

[५३५] १ त्रुटि भा०।

बिछोह[1] तिल तिल मरन है, जग जानै सब लोग।
येह बिध काहु देइ जनु, जीवन संग बिवोग ॥५३६॥

ले दानौ हौ तेहि बन डारी, अति असूझ देवस अंधियारी।
मोहिं लागि सहेहु दुख भारा, मारेहु सो[1] राकस बरिआरा।
मारि निसाचर मोहिं लै आये, बिछुरा सब परिवार मिलाये।
अब तुह चले बीर हम डारी, जीवन जन्म दुऔ अब भारी[2]।
भयौ बिछोह मोहिं तोहिं बीरा, मैं केहि देखि करौ मन धीरा।

येह कहि छोडि कुअर कठ, मधुमालति कैं लागि।
बिछुरत जन्म सघाती, हीवर जरी जो आगि ॥५३७॥

दुऔ कुअरि रोवहिं गिव लागी, आदि प्रीति जो बिछुरन लागी।
कीन्ह आजु हम मिलन निवेरा, आजु उदधि महँ[1] बिहरा बेरा।
आजु दैअ हम दोउ बेगराई, आजु कुटुब तजि भईं पराई।
बालें जो दैअ एक संग राखी, भौ जोबन तौ दह दिस नाखी[2]।
मिलेतै अस कछु भा आई, कोउ पूरब कोउ पछिम जाई।

सखी गयेउ वै केलि दिन, बालापन सुख चाउ।
मोहिं तोहिं आजु बिछोवा, सूझत नाहिं मेराउ ॥५३८॥

मसयें[1] दिन हम मिलते दोऊ, आजु हुते आसा गौ सोऊ।
रहा जीउ लागा तोरि ताईं, कब मैं तै बैठब एक ठाईं।
खेलत गये जो कबहिं अटारी, कबही गै खेलहिं चित्रसारी।
कठिन प्रान मनुसे[2] कर आहा, तोहिं मोहिं बिछुरे कठिन बिछोहा।
कुंअरन्ह गै दोउ कठ छोडाई, रोवत लै पालकी चढाईं।

मधुमालती कनै[3] गिरि, पेमा पुर पानैरि[4]।
चलिहि नाह सग दूनौ, तजि नैहर औसेरि ॥५३९॥

नाराचंद मानगढ ताका, कुंअर सो टाँड कनैगिरि हाँका।

---

[५३६] १ बिछुरन रा०।
[५३७] १ ओस। २ असारी एक०।
[५३८] १ हम। २ भाखी एक०।
[५३९] १ दसएं एक०। २ मनई। ३ कन्या एक०। ४ परबतनेर एक०।

चलत बरिस दुइ पंथ वोराना, आइ कनैगिरि गढ़ निग्नराना।
कनक पत्र सब मंदिल लसाये, जगमगाहिं ते अति रे सोहाये।
बावन सहस्र कंगूरा गढा[1], सो सभ रतन जरावन्ह जरा।
सुरज जोति जो लागै आई, अधिकौ सौंह देखि ना जाई।[2]

भीतर बाहर कोसलहि, बसती[3] गढ बिस्तार।
दस जोजन लगि देखी, बरत मंदिल मसिआर[4] ॥५४०॥

एहि मो राजा क महथ भंडारी, गुननिधान जो नाम तेवारी।
सुरजभान सौं 'विदा कराई, परब जात होत गग नहाई।
कुंअर पथ आवत होत जेही, महथा जात होत मारग तेही।
परत दिस्टि जो भई चिन्हारी, दूनौ उतरि दीन्ह अकवारी।
पूछत मात पिता कुसलाई, और कुसल कुटुंब कै पाई।

मात पिता कै कुसल सुनि, मन मो भयेउ उछाह।
सुनि कै आनंद जिअ भा, परा स्रवन मुख चाह ॥५४१॥

जब सौं कुंअर गयेहु परदेसा, राज चिंता जो तजा नरेसा।
राज की बात न जानै राजा, हम अगुआ सब सारैं काजा।
राजा कपरा पहिरा कारे[1], जन परिजन सब रहै मनमारे।
सगरौ नगर रहे बिसमादा, सुनी न कंठ नाद कै स्वादा।
जा दिन ते तुह गौने राजा, नगर न कतहूँ बाजन बाजा।

जहिआ सौ परदेस कहँ, गौनेहु राजकुमार।
तब सें राज चित छोडा, सूरजभान भुआर ॥५४२॥

महथा रैनि उहाँ सँग रहा, होत बिहान कुअर सो कहा।
अग्या देहु राज पहँ जाई, कहौं जाइ राउर कुसलाई।
लै अग्या जो महथा धावा, जोजन सात पहर मों आवा।
महथै जाइ राजा सौ कहा, कुंअर कुसल सौं आवत अहा।
सुनि येह बात राउ औ रानी, तपत मीन जस पावै पानी।

नग्र महा रस रानी, बिक्रम राजदुलारि।
कुंअर ब्याहि लै आवा, मधुमालती बर नारि ॥५४३॥

---

[५४०] १ गरहा एक० (< गढ़ा फारसी लिपि) २ अधिकौं करै जोति चमकाई। ३ बसगति रा०। ४ उजियार रा०।

[५४२] १ भारे एक०।

सुनि कै राजकुंअर सुख चाहा, घर घर नगर अनंद उछाहा[1]।
राज बार लै बाजन धरे, चहुँदिस धाव निसाना परे।
भौ अंदोर मिरदग[2] जो बाजा, जानहु जलद गगन ते गाजा।
कौंला देइ चखु पलक न लाई, रैनि सबै निसि जागि सिराई।
सुर्जभान सुत दरिसन आसा, जस पानी असरवै पिआसा।

गायंन सुरस कंठ बहुरूपी, आये राजदुआर।
बहुत कथक नट नाटक, बहु बिध करै कँवार ॥५४४॥

कुंजल साजा राज दुआरी, कनक जरित जो परी अँबारी।
ताजी तुरै जो लाखन्ह लहई, पौन बेगि जो उडबे चहई।
जाही जाकर होत अधिकारा, ते सब आपनि कीति सँवारा।
नई कली जो महल पोताए, जगमगाहि ते अति रे सोहाये।
बाहर भीतर पौरि पगारा, सुरग पटोरे सबै वोहारा।

कनक जरी ते मदिल, महल मनोहर बास।
ते सभ वोपि सुभर कै, राजकुंअर के अवास ॥५४५॥

सबिता उदै कुंअर घर आवा, सौ दायेज जो ससुरे पावा।
औ सग मधुमालती चंडोला, चढा सुखासन कुंअर अमोला[1]।
कुंअर पिता पाँ लागा आई, नैन जोति जनु अधरे पाई।
पुनि गै कुंअर जननि पाँ परा, कँवलै पूत कठ गहि धरा।
रही लाइ गरे कुंअरहि रानी, सूखे धान परा जनु पानी[2]।

जब रे कंठ गहि लायेउ, रानी राजकुमार।
तब कौंला के अस्थन[3] सौं, निकसु दूध की धार ॥५४६॥

अमर न होइ कोई कलि मारै, मरि जो मरै तेहि भ्रितु न मारै।
पेम की आगि सही जो आँचा, सो जग जन्मि काल ते बाँचा।
पेम सरनि[1] जे आपु उबारा, सो तो मरै न काहू के मारा।
एक बरिस[2] जो मरि जिउ पावै, काल बहुरि तेहि निअर न आवै।

---

[५४४] १ उजाहा मा० । २ म्रिगमद एक० ।
[५४६] १ चहूँ दिसि झूलहि रतन अमोला ।
२ तपत मीन जस पावा पानी रा० भा० ।
३ सिहुन मा० ।

सुफल[३] फल अंब्रित भै गया, निस्चे अंमर ताहि की कथा।
जो जिउ जानहु काल भै, पेम सरनि के नेम।
फीटै दुहु जुग काल भै, सरनि साल जग पेम ॥५४७॥

उतपति जग जेती चलि आई, पुर्ख मारि ब्रज सती कराई।
मैं छोइन्ह येहि मारि न पारेउँ, सही मरिहि जे कलि औतारेउँ।
सत सुनौ संसार सुभाऊ, जो मरि जिऐ सो मरै न काऊ।
सकति काल तेहि निअर न आऊ, सो जग पेम सजीवन पाऊ।
पेम अमिअ जे पाइअ बासा, सेस काल तेहि आव न सासा।
जेहि भौ पेम अमी सौं, परिचै करै क पार।
औंधी सहसदल कली सो, निअहि पेम अधार ॥५४८॥

---

[५४७] १ सरिस एक० । २ बार । ३ मिरितुक।
[५४८] यह छन्द केवल मा० तथा एक० प्रति में पाया जाता है।

शब्द कोष

मधुमालती में आये कुछ कठिन शब्दो के अर्थ, उनकी व्युत्पत्ति सहित दिए जा रहे हैं। सख्याये छन्द सख्या एव पक्ति सख्या की सूचक हैं। ये सख्याये किसी शब्द के प्रथम बार आने अथवा किसी विशेष स्थल पर विशिष्ट अर्थ-द्योतन की दृष्टि से उपयोगी होगी। व्युत्पत्ति प्रदर्शित करने के लिए < चिह्न प्रयुक्त हुआ है। दे० अथवा फा० क्रमश. देशी तथा फारसी मूल का द्योतन करते हैं। शब्द के पश्चात् क्रि० क्रिया के लिए व्यवहृत हुआ है।

अ

अंकम < अक — गोदी, भुजपाश

अँकवारी < अकपाली — आलिगन, अक मे बाँधना

अंकूर (क्रि०) ७२.७ — अकुरित हुई

अंखि — आँख

अँगिराई (क्रि०) — अँगडाई लिया

अँडारा (क्रि०) — फेका

अँजोरि — चाँदनी, उजाला

अँडाई १२२ ४ — आड़े करके

अंत ६३ ३ < अन्त्र — आँत, अँतडी

अँदोरा < आदोलन — चहल-पहल

अँबराई < आम्रराजी — आम का बाग

अँबारी — हौद, हाथी के ऊपर का हौदा

अंम्रित खानी — अमृत कोष, गुप्ताग (स्त्री की योनि)

अंत्र < अस्त्र — हथियार

अंत्रिख १०४ अतरिक्ष — आकाश

अंत्रिछ ३३४ ३

अकलंक १२२ ५ — अपयश

अकारण — वृथा

अकुलानी (क्रि०) — ऊब गई

अगुसारि < अग्गसर < अग्र + सृ — आगे-आगे करके

अचक ६८ २ — हक्का-बक्का

अचरज — आश्चर्य, आश्चर्य-मयी घटना

अछरी < अप्सरा — अप्सरा, परी

अछोरी १४६.४ < अच्छोडिअ (दे०) — आकृष्ट कर लिया

अजगुत १३५ ६ < अयुक्त — अयोग्य कार्य

अतिबानी ४०६ ४ — अनेक वर्णवाली, अनेक रग की

अथाई — गोष्ठी

अदित < आदित्य — सूर्य

अनख १६१.१ < अणक्ख — रोष, क्रोध

अनचीते — अचानक, अप्रत्याशित

अनाहत — हठयोग के अनुसार शरीर के छः चक्रो में से एक जो हृदय में होता है, आतरिक

अनियारे ६२.१ — नुकीले

अनुहारी ३७४ ३ < अणुआर < अनुकार — समानता, सादृश्य (तुलनार्थ—अणुहार, बीसलदेव रासो)

उटवा १८३ ७ सम्पन्न किया
उडियानी १६६ ५ < उड्डिय (दे०) कम्बल इत्यादि
उतंग ऊँचा
उतपति < उत्पत्ति प्रारम्भ, रचना
उतपाता ४० ५ < उत्पत्ति सृष्टि प्रारम्भ
उदिनल उदय होनेवाला
उधरी ३६६.१ (क्रि०) उद्धार हुआ
उधसी (क्रि०) < उद + ध्वस्त विनष्ट हो गई। माँग उधसना—मुहावरा
उन्हार ६७ ७ < अनुकार अनुकृति, आकृति
{उपखान १४७ ५ < उपाख्यान
{उपखानि कहावत
उपचार इलाज, शमन
उपचारा ३६६.१ उपाय
उपनेउ (क्रि०) उफना, उफान आया
उपारा (क्रि०) < उत्पाट उखाड़ फेंका
उपराजी ७ ४ (क्रि०) उत्पन्न किया
उपावा (क्रि०) < उत् + पाद्य उत्पन्न किया, बनाया
उबेही ३८०.४ (क्रि०) समझ कर
उरेरिव (क्रि०) < उरेह < उल्लिख रेखा खीचकर, चित्रित करके
उरेहि (क्रि०) खीचकर
उससे ७०.६ (क्रि०) उच्छ्‌वास लेना
उसीस < उच्छीर्षं तकिया, सिरहाना

ऊ

ऊभि (क्रि०) < ऊर्ध्व्‌य ऊँचा करके, हाँफ कर, उभर कर साँस लेना

ए

एकसर अकेला
एकोंकारि ११=एक+ओकारि ईश्वर
एगारहे ग्यारहवाँ
एते इतने
अँने पँने ६२ ५ इधर-उधर के

ओ

ओछ न्यून, कम-
ओनै २६२ २ (क्रि०) झुककर घटा ओनना—मुहावरा
ओराना ५४०.२ (क्रि०) समाप्त होना
ओसरी ८२ ७ <अवसर पारी, बेला
ओहट १५८.६ < ओहट्ट (दे०) पीछे हटा हुआ

औ

औखध < औषध दवा
औंग ३६१.३ < अवाक् गूँगी
औनुस १५३ ६ १६४ ६ < ऐनस विकार, पाप
औरावा ५४ २ (क्रि०) रटा दिया, जोर-जोर से पढाया
औराधि (क्रि०) आराधना करके, पूजा करके
औसेरी १६०.३ उलझन

क

कंचुकि चोली
कंडहारा < कर्णधार नाविक, माँझी
कंथा कथड़ी, कथरी, गुदडी
कदला < कदरा कदर गुफा, घाटी
कँवार ५४४.७ < कव्व < काव्य कविता पाठ, गायन
कच केश, बाल
कचपचिया आकाश गगा

कचोरा १८२.२ < कच्चोल कटोरा
कटक सेना
कथक < कत्थक कत्थक, गाने-बजानेवाले
कवि < काव्य काव्य, कविता
कविलासा कैलाश, स्वर्ग
कया, काया शरीर
करंम < कर्म कर्म, करनी
करकस < कर्कश कठोर
करमुखी कलमुँही, कालेमुँहवाली, कलकिनी, एक गाली
करवट करँवट, एक ओर लेटना
करवत ८६.२ < करपत्र आरा, तीर्थों मे जाकर करवत लेने की प्रथा
करहू ४१२.१ कल्ले, नये पत्ते
करा ८५ < कला कला, चन्द्रमा की कला
करार २४२ ३ कगार
कराल २१७.२ काग, काला कौवा
करि ६२.६ < कटि कमर
करुआरि १६२.७ < करवाल तलवार (?)
करेरे कडे, रुखाईपूर्ण, तीक्ष्ण
कलपा १०३.४ (क्रि०) काट दिया
कलस < कलश पात्र, कलसा
कलाई ६०.३ हाथ की कलाई
कलिसिरे ६१.३ कली + सिरे काले मुँहवाले
कली ५४५.४ चूना, कलई
कल्याना < कल्याण मगलाचार
काँछे (क्रि०) धारण किये, पहने कच्छा काँछना—मुहावरा

कांड १०१.३ वाण
कांती २१०.१ < कर्त्तनी कैंची
कांदौ २०८ ७ पक, कीचड
काउ ८५ ७ < कदापि कभी भी नही
काना < कानि मर्यादा
कायम (फा०) स्थिर
कार १२३.७ काला
कारिख कजली, कलक
काँवरि ११२ ३ < कम्बि जिसमे जल ढोने के लिए बाँस ¬ दोनो सिरे से रस्सी बाँध ली जाती है
किंग्री (किंगरी) < किन्नरी एक प्रकार की तत्री, बाजा
किरति २६४.५ < कृत्य < क्रिया करनी, कर्म
किरिया शपथ
कीत २४६.६ (क्रि०) किया
कुँकुह कुकुम, केसर
कुंजल < कुंजर हाथी
कुठाहर कुठौर, बुरा स्थान
कुरी २१३ ४ कुल, वश
कुलगारि १३६.७ कुलागारिन, एक प्रकार की गाली
कुलबोरी वश को डुबानेवाली, कुलनासिन, एक गाली
कुसुंब < कुसुम फूल
कोंउँ क्योकर, कैसे
कोंदुवा < कदुक गेद
केत कितना
केतिक कितने
कोक ५४४ कोकशास्त्र, कामशास्त्र
कोड < कुड्ड (दे०) कौतुक, खेलवाड
कोत < कुंत बर्छी

कोरारे ६१.६ — कोर युक्त, नुकीले

{कोरे २१०.५ < क्रोड — गोदी मे
{कोर — गोद

कोंहड़ा — कुम्हड़ा, फल विशेष

कौंल < कमल — कमल का फूल

ख

खति < क्षति — हानि

खन < क्षण — क्षण, अत्यन्त कम समय

खन खन < क्षण क्षण — तुरत-तुरत

खप्पर < कर्प्पर — भिक्षा पात्र

खसत (खस् क्रि०) — गिरता हुआ

खाँखरि < कँकाल — पत्तो से रहित, वीरान

खाँगेउँ १०३ १ (क्रि०) — गँवा बैठा

खाझी < खाद्य — खाद्य-पदार्थ, भोजन

खाट १६२ ७ — (?)

खाँड < खड्ग — तलवार

खिंडारी ७७ २ (क्रि०) — छितरा दिये, छिटका दिये

खिनक १०२.४ (खिन+एक) — एक क्षण

खीर < क्षीर — दूध

खुटिला ८८.२ — करनफूल, एक आभूषण

खुरुक १८२ ७ — खटका, सन्देह

खूँदै (क्रि०) < क्षुद् — कुचले, चूर्ण करे

खेम < क्षेम — क्षेम, कुशलता

खेमकरी — एक प्रकार की चील्ह

खेलाई ५२.१ — खेलानेवाली स्त्री

खेह < खेह (दे०) — धूल, रज

खोरि (खोरी) — गली

खोरी — दोष, कलक

ग

गंजन — नष्ट करनेवाला

गंध्रप < गधर्व — गधर्व, गायक

गमा २२.३ < गमन — आना-जाना

गजजूहा — गजसमूह, हाथियो का झुड

गडिआने १७१.६ (क्रि०) — गड़ गये, धँस गए

गढ़ा ३०२.५ < गर्त — गड्ढा

गत — बीता हुआ

गनिक < गणक — गिननेवाला, ज्योतिष गणना करनेवाला

गरह < ग्रह — नौग्रह, ज्योतिष मे ग्रह विचार

गरहा १११.१ (देखो सघारा) (क्रि०) — एकत्र किया

गरास < ग्रास — कौर

गरिस्ट — सर्वाधिक, सम्मानित

गरू < गुरु — भारी, आतकवान, रोबीला

गवेसी — गवेषणा करनेवाला

गँवौलिउँ ५३० ३ (क्रि०) — व्यतीत करती, गँवाती

गहगहा २५३.५ (दे०) — प्रसन्न, हर्ष से पूर्ण

गहबरा=गह+भरा — आनन्द से पूर्ण

गहबरी १५७.१ — कला भर आया

गाँउ < ग्राम — गाँव

गाज < गज्ज < गर्ज — वज्र, बिजली

गाढ़ी — प्रगाढ, गहरी

गात < गात्र — शरीर, देह

गादुर — चिमगादड

गारि (क्रि०) — निचोड़ कर

गारी — गाली, अपशब्द

गारुर < गारुड — सर्प विष को उतारनेवाला ओझा

गारौ ३३२४ < गौरव आदर, गौरव

गिव ८६.१ < ग्रीवा गरदन

गिवहार हार, माला

गुमाति ३४४६ (क्रि०) गुमान करती है

गूद १८८.३ माँस, भीतर का भाग

ग्रेहा < गृह घर

गै ४१.६ < गज हाथी

गोइ < गोप (क्रि०) छिपा कर

गोइँड़े < ग्राम पिंड ग्राम के आस-पास की भूमि

गोचर ४३५.३ इन्द्रियो द्वारा जानने योग्य

गोड पाँव

गोफ गुफा, भूधरा

गोहने साथ

गौगुधरी गोधूली वेला, सध्या समय

घ

घट शरीर

घमारि १३११ घाम मे डालकर, सुखा कर

घुन लकड़ी को काटनेवाला कीट

घुमरि (क्रि०) घुमड़कर, चक्राकार घूम कर

च

चंडोल < चतुर्दोल चौडोल, पालकी

चक्कँ ८८३ < चक्र गोलाकार आभूषण, चक्र, पहिया

चखु < चक्षु आँख, नेत्र

चटपट ३६१.७ आतुरता, चटपटी

चतुरसम < चतु.सम चदन, अगुरु, कस्तूरी और केशर को बराबर-बराबर मिलाकर बनाया गया लेप

चतुराइन चतुर स्त्री, चतुरा

चरखीं आतिशबाजी का एक प्रकार, जो चक्राकार घूमती है

चरित्र ३८४१ घटना, चरित्र

चर्नाढी < चरणाद्रि चुनारगढ, मिर्जापुर के पास स्थित स्थान का नाम

चाउ ३५७.३
चाऊ चाव, उत्साह

चाँड गरज, इच्छा

चातिक < चातक पपीहा

चापै (क्रि०) पटके, दबावे

चिकुर बाल, केश

चिन्हारी ११५५ परिचय, चिह्न

चिरुआ ३५५.१ < चलुअ < चुलुक चुल्लू, हाथ से बनाया गया सम्पुट

चिल्हवाँस १८७.३ चील्ह का घोसला, मुहावरा—निष्कासित कर देना

चिहुँट ६४.३ चिपकना

चिहुर < चिकुर बाल, केश

चित्रसारि < चित्रशाला, वह कक्ष जिसमें चित्र लगे हो, बैठक

चोला चोली, वस्त्र

चौक चौका, दशनपंक्ति,

चौखंडी चार खण्डो का महल, चौमहला

छ

छंद ३२६.१ < छद्म कपट

छंदरेउ ११६२ (क्रि०) छद्म वेश धारण किया

छठी जन्म के छ दिन बाद मनाया जानेवाला उत्सव

छप < क्षपा रात्रि

छपाना ३ ३ छिपा, अज्ञात

छरा < छल् छलकिया, धोका-दिया

छूँछी खाली, रिक्त

छाजा छज्जा

छाजा १ ३ (क्रि०) < **छज्ज** (दे०) शोभा दे रहा है

छार धूल, राख

छिनारि < **छिण्णा** (दे०) छिनाल, कुल्टा

छोहाई २१५ १ (क्रि०) छोह से युक्त हो उठा, ममता से भर गया

ज

जबुकहिं २५६ ५ सियारो को

जंम < **जन्म** जन्म

जगरो जरगी नदी, जो चुनार के पास बहती हुई गगा मे मिल जाती है

जनवासा बारात रुकने का स्थान

जनी (जन का स्त्रीलिंग) प्राणी, स्त्री

जन्मौती जन्मपत्रिका

जपमारी १७०.२ जपमाला

जब ताईं ३३३.६ जब तक

जभुआनी ६६.३ (क्रि०) < जृम्भ् जम्हाई लिया

जमधार मृत्यु की धार

जमनिका ३२६ ४ < **यवनिका** पर्दा

जमु यम, यमराज, काल

जरित ४३३ ५ जरद्गवा (विशाखा इत्यादि नक्षत्र)

जहिआ ५४२.६ जब से, जिस दिन से

जहु २२६ ४ यदि

जाला ७२ ३ < ज्वाल अग्नि

जिवन < जीवन जीवन

जुआ < द्यूत जुआ, द्यूत-क्रीडा

जुआ फर ३१६.४ जुआ की फड़ (फलक)

जुध < **युद्ध** युद्ध, लडाई

जूझि < **युद्ध** युद्ध

जूह ६२ ४ < **युद्ध** युद्ध

जेत जितना, जितने

जै पत्र < **जय पत्र** जैत पत्र, विजय पत्र

जैसेन जिस प्रकार से

जोखी ३७७ १ (क्रि०) जोखिम में डाल कर, सकटग्रस्त हो

जोजन दो कोस की दूरी

जोनायक ४३३ ५ ?

जोव १६० १ (क्रि०) देखना, जोहना

जोवै < जो (दे०) देखना

जोहारें (क्रि०) नमस्कार करना

झ

झंगा झगा, कुर्ता

झाँख ४६५ ४ एक प्रकार का हिरन

झाँखर < झखर (दे०) सूखी झाड, कटीली झाड़

झाँझर ८१.२ < जर्जर बिंधा हुआ

झाँपेउ (क्रि०) < झम्प झँप गये, मुँद गए

झार < ज्वाल आग, आग की लपट

झारी ५१.१ झाडकर, एक तरफ से

झूरि शुष्क

झोल राख

ट

टाँड ५४० १ टाँडा, झुड, डेरा, खेमा

टिकइत ३४५ ७ निवासी

टेमि दीपक की लौ, अग्रभाग

ठ

ठगलाड़ू २२६.२ ठगलड्डू, लड्डू खिला कर ठगना
ठगौरी १२०.४ चेटक, जादू
ठठावसि १६३ ५ (क्रि०) पीटता है, मारता है
ठाँ ठाँव, स्थान
ठाहर २६६ ४ स्थिर
ठेहौं ठेंगा
ठोर ८२ २ चोंच

ड

डँफारि २६.५ (क्रि०) धाड मार कर रोना
डँसावन बिछौना
डहा (क्रि०) जला दिया
डाँसा (क्रि०) बिछा दिया
डाइनि < डाकिनी पिशाचिन
डाढ़ि (क्रि०) जली हुई
डाभ घास, कुश
डाली ३८२.७ डलिया, बँसेलिया
डीठा १६.६ दिठियार, दृष्टिवान, चतुर
डोल ३०७.१ < दोल्ल (दे०) नेत्र

ढ

ढाक पलास, छिउल, टेसू
ढारसि १४३.४ (क्रि०) ढारता है, बहाता है, आँसू ढारना-मुहावरा

त

तंत < तत्व तत्व, तत्वज्ञान, पचतत्व
तँबोर < ताबूल पान
तन १८०४ (परसर्ग) की ओर
तपा < तपस तपस्वी, साधू, योगी
तरहुँड ४५४.४ नीचे, अध
तरासा १३१.२ < त्रास भय
तखिन ८८.२ ताटँक, आभूषण
तरुनापा < तरुणत्व जवानी, यौवन
तवाहीं ८३ ५ (क्रि०) तँवा जाते है, चकित हो जाते है
ताईं < तादृश अनुरूप
ताजी (फा०) घोडा
तार < ताल ताड़ का वृक्ष
तारी ७१ २ < ताडिआ < ताडित् जडा हुआ
ताँवीर ४७३ २ < ताप ज्वर
तिनु < तृण तिनका
तिरिया < त्रिया स्त्री
तिल अजुरी तिलाजलि, त्याग
तिषाये ८४.१ तृपित, प्यासे
तीखन < तीक्ष्ण पैने, तेज
तुरै < तुरीय तुरग घोडा
तुलाना २०७.३ (क्रि०) आ पहुँचना
तूर < तूर्य तुरही, बाजा विशेष
तोखार < तुक्खार तुखारिस्तान का घोडा

थ

थकथक २६६.५ (क्रि०) चिपक जाना
थनवारू ३८० १ < स्थानपाल थानेदार
थाना < स्थान स्थान, जगह
थापा (क्रि०) स्थापित किया
टोना थापना—मुहावरा
थांभि ३०७ ७ (क्रि०) < स्तम्भ रोकना

द

दंद द्वंद्व, मानसिक उद्वेग
दँवारा < दव दावाग्नि, जंगल की आग

दर १७३.१ < दल सेना
दरब < द्रव्य धन
दरमरि १३२.५ (क्रि०) < दलित, मृदित, रौंद कर
दरी २२.१ खोह, कदरा
दह < दश दश, दस की सख्या
दायज दहेज, विवाह मे दी गई वस्तुएँ
दाधे < दग्ध जला हुआ
दाहिन < दक्षिण अनुकूल
दिनिअर २५४.१ < दिनकर सूर्य
दिव्य १३७.३ < दिव्य तप्त लौह-पिंड जो चोरी आदि के आरोप लगाये जानेपर निर्दोष सिद्ध करने के लिये उठाया जाता था
दीअटी दीपक-आधार, दीअट
दीता ७६ ५ (क्रि०) दिया
दीवा < दीपक प्रकाश, दीपक
दीसै ८६.७ (क्रि०) दिखाई देता है
दुइजि < द्वितीया द्वितीया तिथि, दूज
दुदिस्टिल < युधिष्ठिर युधिष्ठिर, धर्मराज
दुनी ६.५ दुनिया, ससार
दुरिजन < दुर्जन बुरे लोग
दुलखै (क्रि०) < दुल्लक्ख < दुर्लक्ष्य बुरी भावना से देखना
दुहेला १७८ १ दुखपूर्ण, कठिन, कठिन कार्य
दूभर < दुर्भर कष्टकारक
दूलह < दुर्लभ दूल्हा, पति, वर, स्वामी
देवहारी १३६ २ < दिवह+डी < दिवस दिन
देवारी दीपावली, दीवाली
दोख < दोष विकार, दोष
दोसर १०५.५ दूसरा
दौं दावाग्नि
दौरायेसि (क्रि०) दौडाया, मन दौड़ाना—एक मुहावरा=सोचना

ध

धमारी १६४.१ खेल का एक प्रकार
धर २०६ ६ < धड़ (दे०) शिर रहित शरीर, शिर के नीचे का भाग
धरमिस्टा धर्मपरायण
धरहरिआ ४८३.५ बीच-बिचाव करनेवाला
धरुनी १६३.५ < धरणी पृथ्वी
धाइ < धात्री आया, धाय
धानुख < धाणुक्क < धानुष्क धनुर्धर
धावन ४३६ ४ सन्देशवाहक
धिअ, धीआ, १०७.२ < दुहिता पुत्री, लड़की, कन्या
धिराइ धीरता
धुअ < ध्रुव ध्रुवतारा
धुताई धूर्तता, चालबाजी
धुनि < ध्वनि शब्द
धौराहर < धवल गृह महल, मीनार

न

नखत < नक्षत्र तारा
नखसिख सर्वांग, सिर से पैर तक
नरपाला < नरपालक राजा
नसाये (क्रि०) नष्ट कर दिया
नाँगेउ ३६० २ < नग्ग < नग्न नगा
नाटिका १५१ ६ नाड़ी
नातरि नही तो

नार ३११ ३ नारा, नाभि ततु
नावक ४८१.३ सतसैया के दोहरे ज्यो नावक के तीर
नाह पति
निअर < निकट समीप
निकलंक < निष्कलक दोष रहित
निघटै (क्रि०) समाप्त हो
नित < नित्य सदैव
निठुर < निष्ठुर कठोर
निठुराई ३१६ ३ निष्ठुरता
निनारा न्यारा, पृथक
निफरे ७९ ७ (क्रि०) < नि+स्फिट् बधकर बाहर निकले
निमकी नीब का फल
निमिखि < निमिष पलक मारने भर मे, क्षण
निरतेज २१९.४ < निस्तेज तेजहीन
निराता ३६९ ३ < निरति आसक्ति
निर्मया (क्रि०) निर्मित किया, बनाया
निलज निर्लज्ज, बेहया
निसान नगाड़ा, दुन्दुभी
निहफल ३१५.६ < निष्फल वृथा
निहारै (क्रि० निहार) देखती है, परीक्षण करती है
निहुरि (क्रि०) < निहुट (दे०) झुककर
नेग ३७९.५ मागलिक अवसरो पर दी गई भेट
नेगिन्ह ३६२.१ नगर का अधिकारी
नेरै (क्रि०) < णिआर (दे०) आँख गड़ कर, समीप लाकर
नेवटाऊ (क्रि०) निपटारा करना
नेवास < निवास स्थान, वासस्थान
नोरत ४०६.१ नवरात्रि
नौल < नवल नवीन, सुन्दर
नोसत ७१ ६ नौ+सत सोलह

प

पंक कीचड
पंखि < पक्षिन् चिड़िया
पचहु ५६ ५ पचजन, न्यायकर्ता
पँवार ५१.६ < प्रवाल मूँगा
पखरे (क्रि०) < पक्खर (दे०) अश्व-कवच पलानना
पगारा < प्राकार परकोटा
पछिआना ८ ३ (क्रि०) पीछे-पीछे चलना
पटतर ६६.२ न्यून, सदृश, बराबरी
पटबंधी प्रधान, पटरानी
पटन पाटन, महानगर
पटोर रेशमी वस्त्र
पतिआहि (क्रि०) विश्वास करे
पतीजसि (क्रि०) विश्वास करे
पदुमिनि < पद्मिनी चार प्रकार की स्त्रियो मे से प्रथम प्रकार की स्त्री
पनच प्रत्यचा, डोर
पनारी ११४.३ < प्रणाली जल की नाली
पयान < प्रयाण कूच, प्रस्थान
पयोहर < पयोधर स्तन
परग पग, पदचाप
परग परग पग-पग
परचै परिचय, जान-पहिचान
परछि (क्रि०) ग्रहण करके
परजा < प्रजा प्रजा, जनता
परतवै २७५.१ (क्रि०) पड़ता लगाता है, अनुमान लगाता है
परतिहार < प्रतिहार द्वारपाल

परधाना < प्रधान मुख्य जन
परब < पर्व त्यौहार
परवान < प्रमाण प्रमाण
परबोधि (क्रि०) <प्रबोधय् ज्ञान देना, उपदेश देना
परभात < प्रभात प्रात काल
परहेली १३९.३ (क्रि०) छोड़ गया
पराऊँ २५४.५ (क्रि०) < पलाय भाग जाऊँ
परान १२७ (क्रि०) भग गया
परान ४४९.७ < प्राण जीव
परानी ६६.२ < प्राणी व्यक्ति
परारि ४९९.७ पराई, अन्य की
परिगह < परिग्रह अनुचर इत्यादि
परिजाचौं ५.३ (क्रि०) अच्छी तरह से याचना करना, माँगना
परेवा ११३.१ < पारावत पक्षी
परोग ३७८.४ < प्रयोग प्रयोग, हेतु
परोजन < प्रयोजन वास्ता
पलटा (क्रि० पलटना) पुन॰ आ गया
पलुहि < प्ररुह (क्रि०) अकुरित होकर नए पत्ते आकर,
पलुहै (क्रि०) बढकर बढता है।
पँवारा ३२० ३ पवाडा, लम्बी कथा
पसरी (क्रि०) < प्रसर फैली है
पसारा २२३ ४ < प्रसार फैलाव, विस्तार
पसारेसि १२२ २ (क्रि०) फैलाया
पहर < प्रहर पहर काल की माप
पहरू ९९.५ < प्रहरी पहरेदार
पहिराउरि भेंट मे दिया गया वस्त्र

पत्रै ४४३ ३ < पातुर वेश्या, नर्तकी
पाख पाखरी, पलान
पाग पगड़ी
पाछिल पिछला, पूर्व का
पाट १३.१ < पट्ट सिंहासन, पाटा
पाटी <पट्टिका पट्टी, बालो की पाटी
पानिप ३३२.१ पानी
पारधी <पार्पद्धिक बहेलिया, शिकारी
पार (क्रि०) < पारय् सकना, समर्थ होना
(न) पारा असमर्थ होना
पारौं १.५ समर्थ हूँ
पालक < पर्यंक सेज
पाव ६८.४ चतुर्थांश
पाहुना < प्राघुणक अतिथि, मेहमान
पिंड शरीर
पीक पान की पीक
पीर गुरू, सूफियो में गुरू के लिये सम्बोधन
पीरम, पिरम < प्रेम प्रेम
पुछारि २०३.७ मोर
पुतरी < पुत्तली पुतली, गुड़िया
पुर गाँव
पुरखारथ < पुरुषार्थ पुरुष के अनुरूप कार्य
पूजी ३३५.६ (क्रि०) पूर्ण हुई आस पूजना—मुहावरा
पूँनिव < पूर्णिमा पूर्णमासी की तिथि
पेछौरी ६ ७ पीछे चलनेवाली
पेटारी < पेटा < पिटक पेटी, मजूषा
पैठार ५.६ प्रवेश
पैत २३६.२ < पइत < प्रयुक्त दाँव

पैरनिहारा तैरने मे समर्थ, तैराक
पैसा (क्रि०) प्रवेश किया
पोच नीच
पोतिया ३४२ ४ पोत, मोती
पौढ़न ६१.७ लेटने, सोने
पौन खटोले ६६ ३ उडन खटोला
पौनि विवाहादि अवसरो पर पुरस्कार पानेवाली जातियाँ, परजा
पौरी ड्यौढी
प्रगास < प्रकाश उजाला
प्रचारी (क्रि०) ललकार कर
प्रविस्टी पहुँच, प्रवेश

फ

फटिक < स्फटिक सगमरमर
फनपति शेषनाग
फरकैं (क्रि०) फडकते है, आँख फरकना—मुहावरा
फरगत (क्रि०) फड़कता है, चचल होता है
फरहद (फा०) प्रसन्नता, फरहाद और शीरी प्रेमी-द्वय में से एक जो पुरुष था
फरी तलवार
फँसिहारा ७४.४ फाँसी लगानेवाला
फाबै (क्रि० फबना) शोभा देता है
फार < फल फल, धार
फीटै (क्रि०) < फिट्ट (दे०) ध्वस्त होना, टूटना
फुरहु=फुर+हु सच-सच
फुरै १३७.४ (क्रि०) सत्य सिद्ध हो
फोंक < फुक्का (दे०) मिथ्या

ब

बकति १००.२ < वक्ति < उक्ति बोल
बघुली ७३ ५=बक+अवली बक-पक्ति
बटाऊ बटोही, पथिक
बतासा < वाताश वायु, हवा
बदन मुँह
बधावा < वद्धावण हर्षसूचक बाजा
बनखड १२७.२ जगल प्रदेश
बनिज वाणिज्य, व्यापार
बपुरा ८३ ५ (पुल्लिग) बेचारा
बपुरी < वप्पुडी (दे०) बेचारी
बरतत (क्रि०) व्यवहार में लाता है, बर्ताव करता है, वर्तमान रहता है
बरदन (बरद का बहुवचन) बैल
बरन < वर्ण रग
बरि बरि ३५.३ (क्रि०) बरण करके, ब्याह ब्याह कर
बरिआई बलपूर्वक
बरिआरे ६०.२ बलिष्ठ,बली
बरिसा < वर्षा वर्षा ऋतु, बरसात
बरियाती ४५७ ३ बाराती, बारात मे जानेवाले व्यक्ति
बरी बली, बलवान
बरु भले ही, चाहे
बरुनिन्ह बरौनियो से
बर्जनिहारा १२३ ३ बर्जन करनेवाला, रोकने वाला
बलया < वलय चूड़ी, ककण
बल्लभ पति

बसती बस्ती, नगर
बसह < वृषभ बैल
बस्तर < वस्त्र कपड़ा
बहुताइ १७२ ६ बहुतायत, अधिकता
बहुरावा (क्रि०) वापस किया, भेजा
बाउर < बाउल < बातुल बावला, पागल
बागा ४५२ ३ पुराना लम्बा पहनावा
बागुर फदा, जालफाँस
बाजु, १ ५ बाझु बिना, रहित
बाचा, बचा १२५.५ < वचस वचन, प्रतिज्ञा
बाझा १०४२ (क्रि०) बाँध दिया
बानी ८७ २ वर्णवाला, के समान
बार < द्वार दरवाजा
बारा < बाला युवती
बारी < वाटिका बाग, फुलवारी
बारी २८३.१ बालिका, सखी
बासर दिन, दिवस
बिकारारी < बेकरार (फा०) अशात
बिगूचे ३५.४ (क्रि०) असमजस मे पड़कर
बिछोवा < विच्छोह (दे०) विरह, वियोग
बिटारि < बिट = पामर नीच
बिढवा ३२२ १ < विढव (दे०) अर्जित करना, अपने ऊपर आपत्ति बुलाना
बितताना (क्रि०) विस्तार कर गया, फैल गया
बिथेरा (क्रि०) < विस्तारथ बिखेर दिय।
बिद्रुम मूँगा
बिधना विधि, ब्रह्मा
बिंबु बिंबाफल
बिबरजित विरहित, रहित
बिबि ६६ ४ < द्वय दोनों
बिभूति राख
बिभेस २८०.३ विचित्र वेष, बुरा भेस
बियाधि < व्याधि रोग
बिरचि ३३३ ४ < विरचि ब्रह्मा
बिराउ ३८४७ वीरान, जनहीन
बिराना ४१६ ६ अन्य का, पराया
बिरिख < वृक्ष पेड़
बिरुला कोई-कोई
बिर्ध < वृद्ध बूढा, बूढी
बिसनाइ ८५ २ व्यसन मे आकर ?
बिसह ८११ < विष विष मे
बिसानां ५७६ ४ (क्रि०) < विषाय विष बन गया
बिसारा ४६७.१ < विषाक्त विषैला ४८११
बिसूरा ३८५ २ < विसूरण (दे०) खेद, पीडा
बिहाई (क्रि०) व्यतीत किया
बिहान (क्रि०) < बि + हा परित्याग किया, बीत गया
(तुलनार्थ—बिहुणी—बीसलदेव रासो)
बिहूना के बिना, हित
बीछु < वृश्चिक बिच्छु, बीछी
बीनानी, बिनानी विज्ञानी, बुद्धिमान
बीर, बीरन भाई, मुँहबोला भाई
बीर बहूटी ३५१ ३ लाल घोरिया जो बरसात मे निकलती है
बीरीं पान की बीरी, लाली

बुतानी (क्रि० = बुताना) बुझ गई
बेगि, बेगी नौकर
बेदन < वेदना व्यथा, कष्ट
बेदबाँसी विद्वान
बेनि < वेणी चोटी
बेंबैरि ६३.१ वल्मीक, दीमक के द्वारा बनाया गया मिट्टी का ढूह
बेर < बेला समय, घडी
बेरा २३१.४ बेडा, नाव
बेरहन परोहन, सवारी
बेरी ३००.१ बेडी, शृंखला
बेलसब (क्रि०) < विलस विलास करना, शोभा देना
बेलसै ३.६ विलास करता है
बेसाहा ११० ३ (क्रि०) खरीद लिया
बेवान < विमान, व्योमयान वायुयान, विमान
बेवहार व्यवहार
बैतार वैताल, चारण
बैसारा < बेसर खच्चर
बैसारेउ ५३ २ (क्रि०) बिठाया पडित बिठाना—मुहावरा
बोह ११२.३ (क्रि०) बाहना, ढोना
बोहित < बोहित्थ (दे०) जलयान, जहाज, नौका

भ

भख < भक्ष्य खाद्य, भोजन
भटभेरा १३१४ मुठभेड
भभीछन < विभीषण रावण का भाई
भर्म < भ्रम सदेह, भ्रम
भलआ < भद्र सुजन
भँव (क्रि०) < भ्रम् घूमना, चक्कर लगाना
भाखा < भाषा हिन्दी, हिन्दवी
भाखु (क्रि०) बोल, कह
भाजन बर्तन, पात्र
भाजौं (क्रि०) < भज् भगूँ, भाग जाऊँ
भाट < भट्ट चारण, वदीजन
भाटी १३५.७ < भ्राष्ट्र भट्ठी, अग्नि की भट्ठी
भावता १४६ ६ होनेवाला, चहेता
भिंगराज < भृंगराज भौंरो मे श्रेष्ठ
भिनुसारे १४० ४ प्रात काल
भीति < भित्ति दीवाल, भित्ती
भुअ < भुज भुजा, बाँह
भुअडंड < भुजदंड भुजा
भुआ ६६ ३ < भुज भुजा
भुआला ०४.५ < भूपाल राजा
भुभूका भभका, लपट
भूँजी (क्रि०) < भुज भोग किया
भेऊ < भेद रहस्य, भेद
भोरा ५३.५ कसर
भोरै (क्रि०) < भोलव (दे०) ठगना, बहकावा देकर, भुलावे में डालकर

म

मकु शायद
मंछ < मत्स्य मछली
मँजूर < मयूर मोर
मटक ८१.१ पलक पात, पल भर
मटुक मुकुट, राजमुकुट
मतंग उन्मत्त, हाथी
मतराई ५६.४ (क्रि०) मत किया, विचार-विमर्श किया
मति मत, नही, न

मीत ६.१ < मित्र सूफी सम्प्रदाय के अनुसार चार मित्र या यार है

मधुकर भौंरा

मनमथ कामदेव

मनमारे म्लान

मनिआरी २४६ ४ मणि के समान चमकवाली, सुशोभित

मयंक < मृगाक चन्द्रमा

मया < माया दयापूर्ण प्रेम, ममता, मोह

मरजीआ २३४.७ जीवन्मृत

मरम २७४ ६ मर्मस्थल

मरोरा मरोड

मरोहू २१५.५ दु.ख, पीड़ा

मलगजी मर्दित

मलै ४५३ २ < मलय चन्दन

मसान < श्मशान मरघट

मसि २२२ ६ स्याही

मसिआर ५४०.७ (फा०) मशाल

महताबै (फा०) आतिशबाजी, जिससे प्रकाश पैदा हो

महथ १५३ १ < महामात्य प्रधानमत्री

महरि ग्वालिन

महिअर < महिअल < महितल भू-पृष्ठ, महीतल

महिख < महिष जगली भैसा

महीं १०७ ४ मै ही

महुराने विष के व्याप्त होने से

मॉख ३४३ २ अमर्ष, बुरा

मांडव < मण्डप विवाह के अवसर पर तृणादि से छाया गया वितान

माता ६३ १, ६५ ३ मस्त, उन्मत्त

मानुस < मनुष्य आदमी

मारू < माहेरू (फा०) चन्द्रमुखी

मिसु १६४ ५ व्याज, बहाना

मीचु मृत्यु

म्रिगमद कस्तूरी

म्रिनाल < मृणाल कमल नाल

मुंचत १२२ १ (क्रि०) छोड़ता है

मुअहिं १०५ ५ मरे हुए को

मुकुति < मुक्ति मोक्ष, मुक्ति

मुग्ध मिथ्या, झूठा

मुँदरी < मुद्रिका अँगूठी

मुरारी २७७ ३ श्रीकृष्ण, भगवान

मूरि १५३.५ < मूल ओषधि, जडी-बूटी

मूसा २६३ ४ (क्रि०) < मुष चोरी किया, लूटा

मेरान मिलान, सगम

मेखनहार ३७५ ५ मिलानेवाला, सयोग करानेवाला

मेहरिन्ह < मेहरी स्त्री

मैमत ३१८ ४ < मदमत्त उन्मत्त

मोकलाये ७६ ३ (क्रि०) मुक्त किये हुए, बिखेरे

मोट १९ ३ मोटरी, गठरी

मौला (क्रि०) < मुकुलय मुकुलित हुई

मौली १९७ ५ < मउल मुकुलय खिली

र

रकतारेउ < रक्तालु रक्त से पूर्ण

रजायेस राजाज्ञा, हुक्म

रतनारे ९०.५ लाल

रति सम्भोग

बुतानी (क्रि० =बुताना) बुझ गई
बेगि, बेगी नौकर
बेदन < वेदना व्यथा, कष्ट
बेदबाँसी विद्वान
बेनि < वेणी चोटी
बेंबेरि ९३.१ वल्मीक, दीमक के द्वारा बनाया गया मिट्टी का ढूह
बेर < बेला समय, घड़ी
बेरा २३१४ बेड़ा, नाव
बेरहन परोहन, सवारी
बेरी ३००.१ बेड़ी, शृंखला
बेलसब (क्रि०) < विलस विलास करना, शोभा देना
बेलसै ३.६ विलास करता है
बेसाहा ११०.३ (क्रि०) खरीद लिया
बेवान < विमान, व्योमयान वायुयान, विमान
बेवहार व्यवहार
बैतार वैताल, चारण
बैसारा < बेसर खच्चर
बैसारेउ ५३ २ (क्रि०) बिठाया पंडित बिठाना—मुहावरा
बोह ११२.३ (क्रि०) बाइना, ढोना
बोहित्थ < बोहित्थ (दे०) जलयान, जहाज, नौका

भ

भख < भक्ष्य खाद्य, भोजन
भटभेरा १३९४ मुठभेड़
भभीछन < विभीषण रावण का भाई
भर्म < भ्रम संदेह, भ्रम
भलआ < भद्र सुजन
भँव (क्रि०) < भ्रम् घूमना, चक्कर लगाना
भाखा < भाषा हिन्दी, हिन्दवी
भाखु (क्रि०) बोल, कह
भाजन बर्तन, पात्र
भाजौं (क्रि०) < भज् भगूँ, भाग जाऊँ
भाट < भट्ट चारण, वंदीजन
भाटी १३५ ७ < भ्राष्ट्र भट्ठी, अग्नि की भट्ठी
भावंता १४६ ६ होनेवाला, चहेता
भिंगराज < भृंगराज भौंरो में श्रेष्ठ
भिनुसारे १४० ४ प्रात काल
भीति < भित्ति दीवाल, भित्ती
भुअ < भुज भुजा, बाँह
भुअडंड < भुजदंड भुजा
भुआ ९६ २ < भुज भुजा
भुआला ०४.५ < भूपाल राजा
भुभूका भभका, लपट
भूँजी (क्रि०) < भुज भोग किया
भेऊ < भेद रहस्य, भेद
भोरा ५३.५ कसर
भोरै (क्रि०) < भोलव (दे०) ठगना, बहकावा देकर, भुलावे में डालकर

म

मकु शायद
मंछ < मत्स्य मछली
मँजूर < मयूर मोर
मटक ८१.१ पलक पात, पल भर
मटुक मुकुट, राजमुकुट
मतंग उन्मत्त, हाथी
मतराई ५६.४ (क्रि०) मत किया, विचार-विमर्श किया
मति मत, नहीं, न

मीत ६.१ < मित्र सूफी सम्प्रदाय के अनुसार चार मित्र या यार है

मधुकर भौंरा

मनमथ कामदेव

मनमारे म्लान

मनिआरी २४६ ४ मणि के समान चमकवाली, सुशोभित

मयंक < मृगाक चन्द्रमा

मया < माया दयापूर्ण प्रेम, ममता, मोह

मरजीआ २३४.७ जीवन्मृत

मरम २७४ ६ मर्मस्थल

मरोरा मरोड

मरोहू २१५.५ दु ख, पीड़ा

मलगजी मर्दित

मलै ४५३ २ < मलय चन्दन

मसान < श्मशान मरघट

मसि २२२ ६ स्याही

मसिआर ५४०.७ (फा०) मशाल

महताबं (फा०) आतिशबाजी, जिससे प्रकाश पैदा हो

महथ १५३ १ < महामात्य प्रधानमत्री

महरि ग्वालिन

महिअर < महिअल < महितल भू-पृष्ठ, महीतल

महिख < महिष जगली भैसा

महीं १०७ ४ मै ही

महुराने विष के व्याप्त होने से

माँख ३४३ २ अमर्ष, बुरा

मांडव < मण्डप विवाह के अवसर पर तृणादि से छाया गया वितान

माता ६३ १, ६५ ३ मस्त, उन्मत्त

मानुस < मनुष्य आदमी

माहरू < माहेरू (फा०) चन्द्रमुखी

मिसु १६४ ५ व्याज, बहाना

मीचु मृत्यु

मिरगमद कस्तूरी

मिरनाल < मृणाल कमल नाल

मुंचत १२२ १ (क्रि०) छोडता है

मुअहिं १०५ ५ मरे हुए को

मुकुति < मुक्ति मोक्ष, मुक्ति

मुध मिथ्या, झूठा

मुँदरी < मुद्रिका अँगूठी

मुरारी २७७ ३ श्रीकृष्ण, भगवान

मूरि १५३ ५ < मूल ओषधि, जडी-बूटी

मूसा २६३ ४ (क्रि०) < मुष चोरी किया, लूटा

मेरान मिलान, सगम

मेरवनहार ३७५ ५ मिलानेवाला, सयोग करानेवाला

मेहरिन्ह < मेहरी स्त्री

मैमत ३१८ ४ < मदमत्त उन्मत्त

मोकलाये ७६ ३ (क्रि०) मुक्त किये हुए, बिखेरे

मोट १६.३ मोटरी, गठरी

मौला (क्रि०) < मुकुलय मुकुलित हुई

मौली १६७ ५ < मउल मुकुलय खिली

र

रकतारेउ < रक्तालु रक्त से पूर्ण

रजायेस राजाज्ञा, हुक्म

रतनारे ६०.५ लाल

रति सम्भोग

रतिपति — कामदेव
रदनछंद १०५.१ < रदनच्छद् — ओठ
रन ३५८४ < अरण्य — जगल
ररि (क्रि०) < रड् < रट — रट-रट, कर चिल्लाकर
रसारा < रसाल — मधुर
रहस < सभस — हर्ष, सुख
रहसाही (क्रि०) — प्रसन्न होते हैं
रहसि (क्रि०) — हर्ष के साथ
राई ५०३ १ (क्रि० राव्=बुलाना) — बुलाया
राउर ३८७.१ < राउल — राजकुल
५१२ २ — राजभवन
राँक < रक — दरिद्र
राकस ६६ १ < राक्षस — दानव, राक्षस
राजबार < राजद्वार — राजद्वार
राता ११८ १ (क्रि०) — अनुरक्त हुआ
राते < रक्त — लाल
राँधा < राद्ध — तैयार, सजा हुआ
रायेन्ह ३८८ ५ (क्रि० राव) — बुलाया
रावरि ४६० ५ — आपकी
रूख < रुक्ख — वृक्ष
रूपा — चाँदी
रूम — रूम देश
रूसा (क्रि०) < रुष्ठ — रूठ गया
रैनि < रयणी < रजनी — रात्रि
रोझ — बनरोझ, नील गाय
रोपा ७६.७ (क्रि०) — फैला दिया, जाल रोपना—मुहावरा
रोर < रोल < रव — कोलाहल
रोरा — रोली
रोंव रोव १८२ ३ — रोम-रोम, शरीरके प्रत्येक भाग मे
रोस < रोष — क्रोध
रौन < रमण — सम्भोग, पति

ल

लंक — कमर, कटि प्रदेश
लकरी — लकड़ी
लक्खन २४४ ६ < लक्ष्मण — रामचन्द्र के लघु भ्राता
लखराऊँ < लक्खाराम < लक्षाराम — एक लाख वृक्षो का बाग
लगुन — हरिण की एक जाति
लड़बावरी — लाड से बावली, अत्यन्त लडीली
लँडारी ७९ २ (क्रि०) — फेक दिया
लतारे ४८५ ६ (क्रि०) — लतिया दिया, रौद दिया
लापा ३५५ १ < लप् = कहना — अलाप
लाहा ५ २, १४० ३ — लाभ
लिपित — लिप्त
लिलारा < ललाट — मस्तक
लीक — रेखा
लुहलुहा — हराभरा, लहलहाता
लेनिहारी ३३०.५ — लेनेवाली
लोनाई ६८.३ — लावण्यता, सुन्दरता
लोर ५२८.३ (दे०) — आँसू
लौआ < लोपाक — लोमड़ी

व

वारा २७६ २ (क्रि०) — न्यौछावर किया
वासुकि — शेषनाग
विखम < विषम — कठिन
विखधर < विषधर — सर्प

विपरीत ६४ १ उल्टा
विसँभर १०६ २ (क्रि०) हतज्ञान होकर
विसेखौ १४५ ५ (क्रि०) विशेषता से पूर्ण करके
विस्राउँ < विश्राम आराम
वोइसहिं ४२२ ४ उसी तरह, त्योंही
वोऊ ३३५ ५ वे भी
वोड २७४ १ (क्रि०) कुचलना, मर्दना
वोबरी १२३ ७ < उव्वरिय < अपवरिका =कोठरी
वोय वे
वोहारी (क्रि०) ओहार डाला, आच्छादित किया

स

सँकान (क्रि०) < शका शकाग्रस्त हो गया
सँकानेउ ६६ ७ शकित हुआ
संघाती ११२ ४ सगी, साथी
संघार ६ ६ सग्रह, एकत्रीकरण
संजग १३७ १ सजग, सतर्क
संजीऊ १०६ ३ सजीव, प्राणयुक्त
संझैत ६१.७ ?
संतरहु (क्रि०) सतरण करो, पार करो
संबूहा < समूह समूह, ढेर
सउ ६ २ (क्रि०) हो
सकति < शक्ति शक्ति, बल
सकोरहु ३२६ ६ (क्रि०) < सकेल्ल (दे०) सिकोडो, बाँधो
सगबगाहिँ ७५ २ (क्रि०) सकपकाते हैं, चौकन्ना होते हैं
सगर < सकल सम्पूर्ण
सगाई २४७ १ सगी, सहोदर
सगाई विवाह
सजन < स्वजन आत्मीय
सतुरौ ३८८.७ < शत्रु शत्रु भी
सदेशी < स्वदेशी अपने देश का
सन (परसर्ग) सग, साथ
सन्तति ७७ ७ < शतत सतत, लगातार
सपत < शपथ शपथ
सपूनी ६८ ४ सम्पूर्ण
सब, सभ ७१ १ < सर्व सब
समदै भेट करती है
समान ११८ ६ (क्रि०) समा गई
समानी ८१ ३ (क्रि०) घुस गई, समा गई
समुद < समुद्र सागर
सयानपु चतुराई
सरग < स्वर्ग स्वर्ग
सरनि ५४७.६ शरण
सरबरि < सरिभरी (दे०) (गुजराती=सरभर) समता, बराबरी
सरवानां (फा०) शामियाना
सराप < श्राप श्राप
सरि बराबरी
सरिस्टी < सृष्टि ससार
सरेखा सज्ञान, चालाक
सरौं ५५ २ अस्त्र विद्या
सवाई ५१.५ पौनि सवाई=प्रजा
सवाद < स्वाद स्वाद, जायका
ससिहर < शशधर चन्द्रमा
सहन ४३ ६ आँगन, किन्तु सहन भडार=धनराशि

सहराइ २४२ ६ (क्रि०) थ हराकर, कापकर

सहिदानी < साभिज्ञान चिह्न, निशानी

साइं < स्वामी पति, ईश्वर

साँचे साँचा, ढाँचा

साँधि ४६९ ६ < सन्धि जोड़, सन्धिकाल

साँबर बड़ा हरिण

साका कीर्ति स्तम्भ, इच्छा

साध {४२.१ < सद्धा < श्रद्धा, ३६१.४ अभिलाषा}

साननि < सैन सकेत

सानी ८४.३ (क्रि० सानना) गूँथा, सिक्त कर दिया

सापुरुष सत्पुरुष

सायर < सागर समुद्र

सारंग ८०.७ मृग

सारंग धनुष

सारी, सारौं १४ (क्रि० सारना) किया, करूँ

सालै < शल्य (क्रि०) काँटे की तरह चुभ कर कष्ट देना

सावज < श्वापद पशु, जतु

सास्तर < शास्त्र शास्त्र

सिख < शिष्य शिष्य, शिक्षा

सिंघमघा मघा नक्षत्र

सिराइ (क्रि० सिराना) समाप्त होना

सिराई समाप्त हो गई

सिरीफल श्रीफल, नारियल

सिहुन ९१.१ < सिहिण (दे०) स्तन

सींऊ ११६.४ < शिव शकर

सीभु < सइ स्वय

सींव ९१.७ < सीमा सीमा

सुअटा < शुक सुआ, पक्षी विशेष

सुखासन पालकी, पद्मासन

सुझर < सुज्झ < शुद्ध निर्मल

सुदिन शुभ दिन, सुअवसर

सुन मंदिल शून्य महल

सुन्न २०९ ३ < शून्य निर्जीव

सुरति सभोग, स्त्रीप्रसग

सुरपुर स्वर्ग

सुरहिनि, सुरही देवबाला, अप्सरा

सुसरे ९१ ३ (क्रि०) सँचरे, फड़के

सूली शूली, फाँसी

सेती (परसर्ग) से

सेंदूर ९७ २ शार्दूल, चीता

सेरावौ (क्रि० सेराना) शीतल करो

सेवाती < स्वाती स्वाती नक्षत्र

सै सौ, एक सौ

सैन < शयन सेज, निद्रा

सोजान < सुजान चतुर

सोनवानी = सोन + वानी < वर्णिन सोने का पानी

सोनहा ४६६ २ < श्वान शिकारी कुत्ता

सोरही ३४९ ४ < सुरही देवागना, अप्सरा

सोहागू सौभाग्य

सोहाती प्रिय, अच्छा लगनेवाला

सौख १०६.५ इच्छा

सौतुख १३७ ७ साक्षात घटना

सौन < श्रवण कान

सौंरि (क्रि०) स्मरण करके, याद करके

ह

हँकारेउ (क्रि०) बुला भेजा

हना (क्रि०) वध किया

हरावलि < हार + अवली हार की लडियाँ

हसि १९१५ क्रि० < अस है

हवास १७ चेतना

हाट < हट्ट बाजार

हारिल २१९३ पक्षी विशेष

हिआरी २९०५ < हिआली, काव्य समस्या, गूढार्थ, दयालुता,

हियाउ ५३७ स्नेह व्यवहार, हिम्मत

हिरौदी १२८४ हीरे से जटित आभूषण

हिलगे ८६२ (क्रि०) चिपक गये

हीवर = ही + हर हृदय प्रदेश

हुतें, हुती के द्वारा से

हुंडार भेड़िया

हुलास < उल्लास उत्साह

हेंगुरी चौगान

हेठ < हेट्ठ (दे०), (गुजराती मे 'हेठ') नीचे

हेलिम हातिम, दानी व्यक्ति विशेष

हेतू ३०४४ < हेतु प्रयोजन

हेरावै (क्रि० हेराना) खो दे

है < हय घोडा

हैरानी (क्रि०) हैरान हो गया

होखै ३९९७ (क्रि०) होवे

त्र

त्रिबली ९३७ उदर भाग मे पडनेवाली रेखाये, बल

त्रिया ९७७ स्त्री, औरत

*

परिशिष्ट

मझन कृत मधुमालती के फारसी अनुवाद

भूमिका मे (पृ० ६ तथा १७ पर) दक्खिनी हिन्दी के कवि नुसरती द्वारा रचित 'गुलशने इश्क' की चर्चा की गई है, जो मझनकृत मधुमालती पर आधृत रचना है। इसका रचनाकाल सन् १६५७ ई० है। किन्तु नसीरुद्दीन हाशिमी की खोजो के फलस्वरूप अब यह ज्ञात हुआ है कि नुसरती से पूर्व मझनकृत मधुमालती का फारसी पद्यानुवाद भी हो चुका था। यह अनुवाद सन् १६४९ ई० (१०५९ हि०) मे किसी व्यक्ति ने 'कुँवर मनोहर व मदुमालत' नाम से किया था, जिसके दो हस्तलेख ब्रिटिश म्यूजियम में सुरक्षित है[1]। इस अनुवाद के प्रारम्भ मे यह अंकित किया गया है कि मधुमालती शेख मझन द्वारा हिन्दी भाषा मे लिखी गई।

कि मधुमालत जबाँ हिंदीऽज मझन।

हजारां आफरीं बर शेख मझन। जे शेरे हिंदवी बूदास्त पुरफन।

मधुमालती का दूसरा फारसी अनुवाद आकिल खाँ राजी ने १६५४ ई० मे 'मेह्रोमाह' (सूर्यचन्द्र) नाम से किया। इसकी हस्तलिपियाँ ब्रिटिश म्यूजियम, इण्डिया आफिस लाइब्रेरी के अतिरिक्त ऑक्सफोर्ड तथा पेरिस के बिब्लोतेक नेशनाल मे है।

मधुमालती का तीसरा फारसी अनुवाद माधोदास गुजराती ने सन् १६८६ ई० मे प्रस्तुत किया। इसकी प्रति इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी मे सुरक्षित है।

इनके अतिरिक्त मधुमालती का एक गद्य अनुवाद भी उपलब्ध है, जिसकी प्रति ब्रिटिश म्यूजियम मे रखी है।

अत स्पष्ट है कि नुसरती के पूर्व मधुमालती का फारसी रूपान्तरण प्राप्त था। हो सकता है कि इसी के आधार पर नुसरती ने गुलशने-इश्क की रचना की हो।

---

१. **यूरोप में दक्खिनी मख्तूतात**—नसीरुद्दीन हाशिमी (हैदराबाद, १९३२)' तथा **दक्खिनी हिन्दी काव्यधारा**—राहुल सांकृत्यायन, (बिहार राष्ट्रभाषा परिषद) पृ० २६४-२६५।

शुद्धिपत्र (भूमिका)

पृ सं	पक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३	१०	प्रनि	प्रति
	२२	दोहे क	दोहे की
४	२०	पासा।	साँसा
	२७	सम्मिमलित	सम्मिलित
५	२	कवि उान समने	कवि उसमानने
६	२४	मध्यो	मध्य
१४	२४	स्वव	एव
	२६	विनती	विनीत
	२८	सब यह	यह सब
१५	२६	जो सम	जो सभ
२१	१८	हो जाया	हो जाय
२३	१७	तब	जब
२५	१	राजन	रावन
फुटनोट मे		कह रनामा, मसलनामा	कहरानामा मसलानामा

पृ. स	पक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२६	३	फारस	फारसी
	२३	मिलत	मिलता
३०	२८	जनकी	'जननी
३१	३	मधुमालनी	मधुमालती
३३	१४	बहीप नारी	बही पनारी
३७	१	जिमकै	जिसके
४०	२०	बिदाई के समयी	बिदाई के समय
४३	४	बोलचाल	बोलचाल मे
६३	२३	व्यारवान	व्याख्यान
६४	(१८)	बिघना अन्तिम रव	बिधना राव
६७	१८	के कारण हो	के कारण ही
६९	७	मात या मात	मात या मातु
७०	१	एक प्रति	एक० प्रति
७१	२८	ध्याना	घ्याना
७२	२६	मेरौ	मेरी

✱

शुद्धिपत्र (मूल पाठ)

[मूल पाठ में जो अशुद्धियाँ रह गई हैं उनका शुद्ध पाठ छन्द सख्या (अर्द्धाली) के आगे पक्ति सख्या देकर प्रस्तुत किया जा रहा है। कृपया मूल पाठ में इन अशुद्धियो को शुद्ध कर ले —सम्पादक]

अर्द्धाली	अशुद्ध	शुद्ध
१ २	नाही.. करौ	नही करौं
[१]	एक प्रति	एक० प्रति
३-६	सरब्यापी	सरब व्यापी
७-६	बाकी हम	वाकी —
७-७	की	की[३]
[७]	पायन लागी रा०	३ पायन लागी रा०
६ २	सत्य	सत्य[१]
१० १	सलम	सलेम
१०.५	दिशा	दिसा
१३.६	हख	हर्खं
[१६]	४ निरमा	४ निरमए
[२२]	अन्तिम पक्ति जिय	जिम
२६ ५	देहा[१]	देहा[२]
३०.२	दपन	दर्पन
३२ ४	जाहाँ	जहाँ
३४ ५	जानि	जनि
[३६]	अन्तिम पक्ति दुइ	दह
४६ ७	औतारा	औतरा
४६ ६	सव	सब
५० ४	तस द	तस दै
७२ ५	क्रुँअर	कुँअर
६६ ४	के तै	कै तैं
१०२ ३	वश	वस
११२ ६	नोर	तोर

अर्द्धाली	अशुद्ध	शुद्ध
[१२२]	अपकीरति	३. अपकीरति
१३१ ६	राखि[२]	राखि[१]
१३५ १	भई	भई
१४२ १	जो	जो
१४३ १	आई	आई[१]
१४५ ५	सबै	सबै[१]
१४६ १	उधारी	उघारी
[१४६]	१ सनेह २ × एक	१ सनेहा २ × एक०
[१४७]	१ अनेग	अनत
१५५ ३	बकसति	बकतसि
१५८ ३	जानि	जनि
१६१ ४	केसे	कैसे
१६४ आ ४	गौहारी	गोहारी

अर्द्धाली	अशुद्ध	शुद्ध
१७१ ३	बाजै	बाजी
१७३ ५	तौरा	तीरा
१७३ ६	धोर	घोर
१८२ २	मानो	मनो
१८८ २	फै	कै
१६५ ४	बोट	वोट
१६८ ४	जगाबा	जगावा
२०४ ५	धर	घर
[२१०]	२ फरमोंहि	फर मोहिं
२१५ २	स मुद	समुद
२१७ २	कोरे	कारे
२२४ १	सधाता	सघाता

अर्द्धाली	अशुद्ध	शुद्ध
२२८ ३	मौहि	मोहि
२२९ १	माह	माँह
२४१ ५	बिाधता	विधाता
२४५.७	बिछौउ	बिछोउ
२५७ ४	खैंसारी	खैकारी
२६२.३	बिपतरित	विपरित
२६३.६	तै	तैं
२६७ ५	छुटा	छुटाऊ
[२६७]	२. सँभार	सँभारा
२७९ २	मघुमालति	मधुमालति
२९९ ४	खाना	बखाना
३०३.३	नछिआ'	न छिआ'
[३००]	१ मै एक	१ मै एक०
३२५.२	कौन्हा	कीन्हा
३२६.२	धूँघट	घूँघट
३३९ ७	बोइ	वोइ
३४०.३	धौ रावौ	धौरावौ
३५१ ५	मुकलिल	मुकलित
३५६.१	भोइ	भई
३६१.७	कुँबर	कुँवर
३६३.१	धेरा	घेरा
३६५.६	परैउ	परेउ
३६७.७	केहिु	केहि
३६८.१	धोला	घोला
[३७६]	४ दोइ	देइ
३७९ ६	समुदाइ	समुदाइ'
३८० ६	तुरिर्जाहि	तुरि जाहि
३९६ १	उधारी	उवरी
३९७ ४	धर	घर
३९८ ७	होइ'	होइ
४०३.३	सखी	सखि
४०५ ५	सखि	सखी
४०६ १	सदेसा	सदेस
४०८.७	अपान	अपान'
[४२३]	३ बरी	३ परी
४२९ ४	सासै	साँसै
४३१ ५	दुख'	मुख
[४३४]	१ बात एक	१ बात एक०
४४४ २	क	कै
[४४३]	३ बीजबन	बीजबन
४४६ २	वरात	बरात
५०० २	बक्रम	विक्रम
५२२ २	समुँदु	समदु
५३१ ५	जिउकै	जिउ कै
५३८ ५	मिलेलै	मिले तै
५४२ ३	मनमारे	मन मारे

मधुमालती भूमिका व शुद्धिपत्र

★